लोकमान्य तिलक

(जीवन-चरित्र)

★

—: लेखक :—

प्रा. भीमराव गोपाल देशपांडे,

अेम. अे., बी. टी., राष्ट्रभाषा-कोविद

मराठी विभाग,

काशी-हिन्दू-विश्वविद्यालय,

★

प्रकाशक

राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धा

प्रकाशक :
मन्त्री,
राष्ट्रभाषा प्रचार समिति,
हिन्दीनगर, वर्धा

विक्रेता,
राजकमल प्रकाशन लि०
१, फैज बाजार, दिल्ली।
१५-ए महात्मा गांधी मार्ग, अलाहाबाद।

प्रथम संस्करण : २०००
 जुलाई, १९५६ मूल्य ३)

मुद्रक :
मोहनलाल भट्ट
राष्ट्रभाषा प्रेस,
हिन्दीनगर, वर्धा

निवेदन

राष्ट्रभाषा प्रचार-सम्मेलनके छठे, पुरी-अधिवेशनमें निर्णय किया गया कि लोकमान्य तिलककी शताब्दीय जयन्तीपर लोकमान्यको श्रद्धांजलि देनेके निमित्त राष्ट्रभाषा प्रचार समिति अुनके सम्बन्धमें हिन्दीमें अेक पुस्तक प्रकाशित करे। अिस निर्णयके अनुसार यह पुस्तक प्रकाशित की जा रही है। अिसके लेखक हैं हिन्दू-विश्वविद्यालयके मराठीके प्राध्यापक श्री भी. गो. देशपाण्डे। अेक अरसा हुआ, वे अिस पुस्तककी तैयारी कर रहे थे और अुन्होंने अुसके लिअे बहुत कुछ सामग्री संग्रह कर ली थी। जब हम अुनसे मिले, पुस्तक लगभग तैयार हो चुकी थी। अुन्होंने अपनी पुस्तक प्रकाशनार्थ समितिको दी, अिसके लिअे हम अुनके कृतज्ञ हैं।

पुस्तक है तो छोटी परन्तु हमारा विश्वास है कि लोकमान्यके जीवन-चरित्रपर हिन्दीमें अच्छी पुस्तकका जो अभाव है, अुसे यह पूरा कर सकेगी। लेखकने अच्छी सामग्री अेकत्र की है और अुसे संक्षेपमें तथा सुरुचिपूर्ण भाषामें अिस पुस्तक द्वारा रख दिया है। अिसकी पाण्डुलिपि पढ़नेपर अेक मित्रने लिखा था—"अिसमें अच्छी सामग्री है, भाषा भी अच्छी है; किन्तु अुसमें कोअी नवीनता नहीं।" मित्रका यह अपना अभिप्राय है, परन्तु अिस पुस्तकको जब हमने देखा तब अिसमें हमने अेक नवीनताका भी अनुभव किया। वैसे अूपर-अूपरसे देखनेसे तो प्रतीत होता है कि जैसे और जीवन-चरित्र लिखे जाते हैं, वैसे ही

यह पुस्तक भी लिखी गअी है; फिर भी अिसकी अपनी विशेषता है । हिन्दीमें ही क्यों सम्भवतः मराठीमें भी लोकमान्यपर अैसी पुस्तकोंकी बहुत कमी है । श्री नृसिंह चिन्तामणि केलकरका "लोकमान्य टिळकांचे चरित्र" बहुत बड़ा ग्रन्थ है । अुसे पूरा पढ़ जाना सबके लिअे आसान नहीं और पढ़नेपर भी अितने विस्तारसे लोकमान्यका जीवन-चित्र अपनी दृष्टिके समक्ष अुभारना पाठककी अपनी कल्पना और बुद्धिशक्तिकी क्षमतापर अवलम्बित है, परन्तु श्री भी. गो. देशपाण्डेने २२४ पृष्ठकी अिस पुस्तकमें श्री लोकमान्यके जीवनकी मुख्य-मुख्य बातोंका तो समावेश किया ही है, साथ ही अपनी शक्ति-अनुसार अुनके देशसेवामें निरत संघर्षमय अेवं कर्मनिष्ठ जीवनका अेक आदर्श चित्र भी अुपस्थित करनेका प्रयत्न किया है । अिसमें वे कितने सफल हुअे हैं, यह तो पाठक स्वयं ही निर्णय कर लें, परन्तु अिस पुस्तककी यही अेक विशेषता है जिसके प्रति हम पाठकोंका ध्यान खींचना चाहेंगे ।

श्री कालिकाप्रसाद दीक्षित "कुसुमाकर" ने अिसकी पाण्डुलिपिके सम्पादन-कार्यमें जो सहायता की है, अुसके लिअे हम अुनके प्रति कृतज्ञता प्रकाशित करते हैं । श्री चितलेजी आदि जिन भाअियोंने अिसे अधिक अुपयोगी बनानेकी दृष्टिसे सुझाव दिअे, अुनके प्रति भी हम अपनी कृतज्ञता प्रकट करते हैं । पुस्तकमें दिअे गअे चित्रों तथा कुछ आवश्यक जानकारी प्राप्त करनेमें सहायता करनेके लिअे हम केसरी-कार्यालय — विशेषकर श्री सोमणजीके अत्यन्त कृतज्ञ हैं ।

मोहनलाल भट्ट
मन्त्री,
राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धा

३–७–५६

अनुक्रमणिका

भूल सुधार

पृष्ठ		पंक्ति		भूल		सुधार
१४	—	२१		On British Rule in India		Un British Rule in India
१३०	—	२४	—	पूर्वंता	—	ऽपूर्वंता
१३०	—	२५	—	लिङ्ग	—	लिङ्गम्
१३२	—	१०	—	शत्रुन्कभुक्ष्व	—	शत्रुन्भुक्ष्व
१३२	—	१३	—	स्मृद्ध	—	समृद्ध
१३७	—	६	—	परेपदमापदाम्	—	परंपदमापदाम्
१४६	—	२६	—	दर्शक	—	प्रतिनिधि
१४८	—	१२	—	कुशासन भी	—	स्व कुशासन भी
१५१	—	१४	—	तिलकला	—	तिलकका
१५५	—	२४	—	बेकाबू	—	बेकाम
१५६	—	१०	—	श्रेष्ठात्मक	—	श्लेषात्मक
१६०	—	४	—	दूरदृष्टिका परिणाम था	—	दूरदृष्टि थी
१६०	—	५	—	व्याख्या	—	व्यवस्था
१६३	—	४	—	कामना	—	प्रशंसा
१६४	—	१४	—	संग्रह	—	लोकसंग्रह
१७४	—	१	—	भारतसे नहीं लौटे थे	—	भारतसे लौटे थे
१८२	—	१	—	करवा	—	करवाकर
१८२	—	२३	—	वह	—	वहाँ
१८३	—	२	—	बेनस्कूर	—	बेनस्फूर
१९१	—	१	—	हत्याकाण्डको	—	हत्याकाण्डके
१९९	—	२१	—	कारण ग्रंथ	—	करण ग्रंथ
२०६	—	१	—	कामरे	—	कामटे
२१३	—	२४	—	चलानि	—	चलन्ति
२२१	—	६	—	वपतोऽस्य	—	वपनस्थ
२२१	—	१३	—	संहत	—	संहृत
२२२	—	३	—	क्लासु	—	कलासु
२२२	—	८	—	मांकथ	—	मा कथं

लोकमान्य तिलक



जन्म

२३ जुलाओी, १८५६

मृत्यु

१ अगस्त, १९२०

सन्तुष्ट हुअे कि सूर्योदयके केवल दो घड़ी पश्चात् पार्वतीबाअीको सूर्य-सा तेजस्वी पुत्र प्राप्त हुआ। गंगाधर पन्त और पार्वतीबाअीकी संसृति-बेलमें अमृत-फल लगा। अुनके हर्षका ठिकाना न रहा। बालकका नामकरण हुआ और अुनके कुलदेवके नामपर नाम रक्खा गया 'केशव', किन्तु माता-पिता अुसे वात्सल्य प्रेमवश 'बाल' कहकर ही पुकारते थे। सौभाग्यसे पार्वती गंगाधरका यह 'बाल' भारत-माताका भी लाड़ला पुत्र बनकर बाल गंगाधर तिलक नामसे प्रसिद्ध हुआ। युवावस्थामें वह 'यथा नाम तथा गुण:' 'बलवन्तराव' बना और जिस प्रकार पार्वतीके पुराण-प्रसिद्ध पुत्र कुमार कार्तिकेय देवोंकी मुक्तिके लिअे लड़े, वैसे ही बलवन्तराव तिलक भी भारत-माताकी स्वतन्त्रताके लिअे जीवन-पर्यन्त वीरतापूर्वक लड़ते रहे।

बुद्धिमान और कर्मठ गंगाधर शास्त्री

श्री गंगाधर पन्त तिलकने मराठीकी सातवीं कक्षा तक ही शिक्षा पाअी थी। अंग्रेजी भाषा तथा साहित्यसे अुनका कुछ भी परिचय नहीं था, किन्तु वे थे बड़े प्रतिभाशाली। निर्धनतासे पराभूत होकर वे सरकारी प्राथमिक पाठशालामें पाँच रुपअे मासिक वेतनपर अध्यापक बने, किन्तु अपनी कार्यकुशलता, कर्मठता और बुद्धिमानीसे बढ़ते-बढ़ते शिक्षा-विभागके असिस्टेन्ट डिप्टी अिन्स्पेक्टर-पद तक पहुँच गअे। वे अत्यन्त कुशल अध्यापक थे। गणित, व्याकरण तथा संस्कृत आदि विषयोंके अच्छे ज्ञाता थे। अुन्होंने अपने ही प्रयत्नसे अिन विषयोंका गम्भीर अध्ययन किया, अिसलिअे अुनके प्रधानाध्यापक तथा संस्कृत भाषाके प्रकाण्ड विद्वान डा० भाण्डारकर अुन्हें 'गंगाधर शास्त्री' कहने लगे। डा० भाण्डारकरकी सहानुभूतिके कारण वे असिस्टेंट डिप्टी अिन्स्पेक्टर होकर ७०) रुपया मासिक वेतन पाने लगे। अुन्होंने गणित, व्याकरण तथा संस्कृतकी कअी छोटी-छोटी छात्रोपयोगी पुस्तकें लिखीं और अुनसे लगभग चार हजार रुपया अर्जित किया। अुन्हें लिखने, पढ़ने और पढ़ानेका व्यसन-सा था। समयनिष्ठा, कर्मठता, मनस्विता, स्वाभिमान और शुद्ध चरित्र आदि गुणोंकी वे साक्षात्

मूर्ति थे। पुत्र पर अैसे पिताका प्रभाव पड़ना स्वाभाविक ही था। जैसे शरद्‌की पूर्णिमाके चन्द्रमाका पूर्ण प्रतिबिम्ब मानसरोवरमें पड़ता है, वैसे ही गंगाधर शास्त्रीके सब सद्‌गुणोंका प्रभाव कुमार बाल तिलकके स्वच्छ मनपर भी पड़ा।

बुद्धिमान पिताका अधिक बुद्धिमान पुत्र

जब बाल तिलक पाँच वर्षके हुअे तब अुन्हें रत्नागिरिकी प्राथमिक मराठी पाठशालामें पढ़ने भेज दिया गया। किन्तु केवल पाठशालाकी पढ़ाअीसे गंगाधर शास्त्री सन्तुष्ट नहीं थे। अत:, वे अुन्हे घरपर भी पढ़ाने लगे। तिलककी बुद्धि अितनी तीव्र थी कि अुनके पिता जो कुछ भी पढ़ाते अुसे वे तत्काल ग्रहण कर लेते। अेक श्लोक कण्ठस्थ करनेपर पिताजी अेक पाअी पुरस्कार दिया करते थे। अिस प्रकार अुन्होंने शीघ्र ही चार-पाँच सौ श्लोक कण्ठाग्र कर दो-तीन रुपअे संग्रह कर लिअे। यज्ञोपवीत संस्कारके पूर्व ही अुन्होंने रूपावली, समाज-चक्र, अमर-कोश और ब्रह्म-कर्म आदि अितने कण्ठस्थ कर लिअे कि सन् १८६४ में जब अुनका यज्ञोपवीत संस्कार हुआ, तब अुनकी तीव्र स्मरण-शक्ति, अुच्चारणकी शुद्धता तथा स्पष्टता देखकर अुपाध्याय और वैदिक गुरुको आश्चर्य-चकित होना पड़ा और वे अुसे सन्ध्या पढ़ानेमें संकोच करने लगे। साधारणतया संस्कृत और गणित दोनोंमें अेक साथ प्रवीणता नहीं हो पाती, किन्तु बाल-तिलकको ये दोनों विषय हस्तामलकवत थे। गणित तथा व्याकरण आदि सभी विषयोंमें अितना पर्याप्त प्रवेश हो गया था कि पाठशालाकी वार्षिक परीक्षामें प्रथम आना अुनके लिअे बाअें हाथका खेल था। बुद्धि अितनी कुशाग्र थी कि केवल दसवें सालमें ही बाल-तिलक संस्कृत श्लोकका अर्थ लगाने लगे।

अुनने अपने अद्वितीय बुद्धि-चमत्कारसे प्राथमिक तथा माध्यमिक विद्यालयके अध्यापकों और महाविद्यालयके प्राध्यापकोंको ही चकित नहीं किया अपितु अपने पिता गंगाधर शास्त्रीको भी स्तंभित कर दिया था। अेक बार बाल-तिलकने अपने पिताजीसे बाणभट्टकी 'कादंबरी' माँगी।

गंगाधर शास्त्री मन-ही-मन मुस्करा पड़े। अुन्हें अुनकी माँग केवल बालहठ ही जान पड़ी। किन्तु बालकका अुत्साह भंग न करनेकी भावनासे अुन्होंने अेक युक्ति सोची। अुन्होंने बालको अेक अत्यन्त कठिन गणितका प्रश्न हल करनेको कहा। बुद्धिवीर बाल-तिलक दो घड़ी तक अुस प्रश्नसे जूझते रहे और अन्ततोगत्वा अुसने अुसे हल कर दिया। पुरस्कारमें गंगाधर शास्त्रीको 'कादंबरी' देनी पड़ी।

सत्यप्रीति तथा आग्रही वृत्ति

पाठशालामें बाल तिलकके दो गुण सत्यप्रीति और आग्रही वृत्ति विशेष रूपसे प्रकट हुअे। आग्रही वृत्तिका व्यक्ति झगड़ालू होता है। तिलककी सत्यप्रीति निष्क्रिय नहीं थी, सक्रिय थी। असत्यका विरोध और प्रतिकार करना अुनके लिअे अनिवार्य था। पाठशालामें अुन्हें बुद्धिमान किन्तु झगड़ालूकी अुपाधि मिली थी। जब वे झगड़ा करते थे तब केवल दिखावटी झगड़ा नहीं करते थे। सत्यके लिअे वे अैसे अड़ जाते थे कि अुनका वह आग्रह पीछे चलकर झगड़ेका रूप धारणकर लेता था। अुनकी दूसरी विशेषता यह थी कि वे साधारण विद्यार्थीकी भाँति परम्परागत प्रणालीसे अभ्यास नहीं करते थे। कुछ असाधारणता और अलौकिकता अपनाना अुनका सहज स्वभाव था। पाठशालामें पढ़ते समय अेक बार अुनके अध्यापकने 'सन्त' शब्द लिखनेको कहा। वे ठहरे स्वयंप्रज्ञ। अुन्होंने वह शब्द 'सन्त, सन्‌त, संत' तीन प्रकारसे लिखा। परन्तु कक्षाके सब विद्यार्थियोंने 'संत' लिखा। रूढ़ि-पालक सामान्य अध्यापकको यह बात बहुत खटकी। अध्यापक बड़े रुष्ट हुअे और डाँटने लगे, परन्तु तिलक तनिक भी विचलित नहीं हुअे, वे कहने लगे कि मैंने जो लिखा है वह व्याकरणसे शुद्ध है। यह सुनकर कक्षाके सब विद्यार्थी हँसने लगे। अध्यापक महोदय आपेसे बाहर हो गअे। जब यह झगड़ा वहाँके न्याअी तथा सुविचारी हेडमास्टरके पास पहुँचा तो अुन्होंने बाल तिलकके ही पक्षमें निर्णय दिया और अुनकी मौलिक तथा सत्याग्रही वृत्तिकी सरहना की।

वे किसी भी प्रकारके कड़े-से-कड़े दण्डके भयसे सत्यका पक्ष नहीं छोड़ते थे। अेकबार बाल-तिलकको छोड़कर कक्षाके सब विद्यार्थियोंने कक्षा में मूंगफली खाओं और अुनके छिलके कक्षामें डाल दिअे। ज्यों ही अध्यापक महोदय कक्षामें प्रविष्ट हुअे अुन्होंने क्रोधसे पूछा—"ये छिलके किसने फेंके हैं?" सब विद्यार्थी भयसे काँप अुठे। कक्षामें सन्नाटा छा गया। किन्तु बाल-तिलक आँधीमें भी चट्टानकी भाँति स्थिर थे। क्रुद्ध अध्यापक सारी कक्षाको दण्ड देनेके विचारसे बाल तिलकके पास गअे और अुन्हें दण्ड देनेवाला ही थे कि अितनेमें वह बालवीर कहने लगा—"आप अन्याय कर रहे हैं। मैं निरपराध हूँ, अिसलिअे मैं दण्ड स्वीकार नहीं करूँगा।" अध्यापकने अुन्हें कक्षाके बाहर चले जानेकी आज्ञा दी। वे तुरन्त अपनी स्लेट और झोला लेकर सीधे घरकी ओर चल पड़े। गंगाधर शास्त्रीके समक्ष अध्यापकने तिलकपर अुद्दंडताका आरोप लगाया, परन्तु तेजस्वी पिताने अुत्तर दिया कि मेरा पुत्र असत्य कभी नहीं बोल सकता और अुसके आचरणमें अैसा असंयम भी कभी नहीं आ सकता। अध्यापक महोदय चुप हो रहे। अिसमें भी बाल तिलककी विजय हुअी।

'पूतके पाँव पालनेमें' (विद्यार्थियोंके नेता)

अिसी समय गंगाधर शास्त्री डिप्टी अिन्स्पेक्टरके पदपर नियुक्त होकर पूना चले गअे। अिसलिअे बाल तिलकको अिस प्रसिद्ध विद्यानगरीमें पढ़ने और रहनेका सुअवसर मिल गया। अुन दिनों पूनामें अँग्रेजी स्कूलके हेडमास्टर जेकब साहब थे। वे बड़े कर्तव्यपरायण और कठोर अनुशासनशील व्यक्ति थे। अुनका अितना दबदबा था कि कोअी अुनकी आँख-से-आँख मिलानेका साहस नहीं करता था। अेक बार न जाने किसने कोअी अपराध किया और प्रत्येक विद्यार्थीके हाथपर अुन्होंने दो-दो बेंत मारना प्रारम्भ कर दिया। तिलकने तत्काल निर्भीकतासे अिस अन्यायका विरोध किया। अिसपर जेकब साहबने अुन्हें कक्षा छोड़कर चले जानेकी आज्ञा दी। आश्चर्य यह कि ज्यों ही तिलक शान्त भावसे बाहर जाने लगे त्यों ही सब विद्यार्थी अुनके

पीछे हो लिअे। विद्यार्थियोंने अिस अन्यायके विरुद्ध हड़ताल कर दी और तिलकको अपना मुखिया नियुक्त किया। किन्तु हेडमास्टरने बुद्धिमानीसे स्थिति सँभाल ली और शान्ति हो गअी। अिसी तेजस्विताके कारण वे आगे चलकर लोकमान्य हुअे। अिसीको कहते हैं "होनहार बिरवानके होत चीकने पात।"

माता-पिताका वियोग

पूना आनेके पश्चात् दो वर्ष भी नहीं बीत पाअे थे कि माताकी दु:खद मृत्यु हो गअी किन्तु पिताने अत्यन्त निष्ठासे तिलकका पालन-पोषण किया। कुछ वर्षोंके पश्चात् अुनकी बदली ठाणाके लिअे हो गअी और विद्यार्थी तिलक अपने चाचाके साथ पूनामें रहने लगे। पिता वृद्धावस्थाके कारण दिन प्रति-दिन क्षीण होते जा रहे थे। अुनकी अन्तिम अिच्छाके अनुसार सन् १८७२ में विद्यार्थी-दशामें ही तिलकका विवाह सत्यभामाके साथ हो गया। विवाहके पश्चात् दो महीनेके भीतर ही गंगाधर शास्त्रीका स्वर्गवास हो गया। अिस समय तिलक मैट्रिक कक्षाके विद्यार्थी थे। अुनपर विपत्तिका पहाड़ टूट पड़ा, अुनके सिरपर परिवारका भार आ गया, परन्तु वे तो धैर्यशील पिताके परम धैर्यशील पुत्र थे। विपत्तियोंसे लड़नेमें ही अुन्हें अधिक आनन्द आता था। अुन्होंने शान्त चित्तसे अपना अध्ययन जारी रक्खा और मैट्रिक परीक्षामें (गन् १८७३ के मार्चमें) सम्मानपूर्वक अुत्तीर्ण हुअे। अितने प्रतिभाशाली होते हुअे भी वे कभी प्रथम श्रेणीमें नहीं अुत्तीर्ण हो पाअे क्योंकि अुनकी अुत्तर लिखनेकी पद्धति अत्यन्त विचित्र अेवं असामान्य थी। गणितके प्रश्नपत्रमें वे अुन्हीं प्रश्नोंको हल करनेका पहले प्रयत्न करते थे जो अत्यधिक कठिन होते थे। अिसलिअे वे नियमित समयमें सब प्रश्नोंके अुत्तर क्रमश: नहीं लिख पाते थे और अुनसे कम बुद्धिशाली किन्तु व्यवहार-कुशल सहपाठी परीक्षामें अधिक अंक प्राप्त कर लेते थे।

दूसरा प्रकरण

भावी जीवनकी नींव

सत्यं तपो ज्ञानमहिंसता च विद्वत्प्रमाणं च सुशीलता च।
अेतानि यो धारयते स विद्वान्न केवलं यः पठते स विद्वान्॥

सन् १८७३ में तिलक मैट्रिक परीक्षामें अुत्तीर्ण होकर पूनाके डेक्कन कालेजमें प्रविष्ट हुअे। कालेजका जीवन सुख, स्वच्छन्दता तथा विलासका क्षेत्र था। अपनी भाषा, संस्कृति, समाज और देशके प्रति विद्यार्थियोंके मनमें रंचमात्र भी आदर न था। प्रत्येक युवक, साहब बननेके लिअे पागल बना फिरता था। अैसे विलास-पूर्ण कालेज-जीवनमें जलमें कमल-सा अछूता रहना बहुत कठिन था। परन्तु असाधारण व्यक्तिके सभी काम असाधारण होते हैं। वैभवमें ही विरक्ति शोभा पाती है। पौरुषवालेको ही ब्रह्मचर्य शोभा देता है। असाधारणताका महत्व विपरीत परिस्थितियोंमें ही परखा जाता है। सामान्य जन तो प्रवाह-पतित होते हैं, किन्तु असाधारण पुरुष बाणकी भाँति प्रवाहको सीधे चीरते चले जाते हैं। तिलक भी असामान्य नर थे। अुन्हें यह विलासी जीवन तनिक भी आकृष्ट नहीं कर सका।

शरीरमाद्यं खलु धर्मसाधनम्

जब तिलकने कालेजमें प्रवेश किया तब अुनका स्वास्थ्य क्षीण था, परन्तु अुन्हें अध्ययनका व्यसन था। अुन्होंने अनेक पराक्रमी महापुरुषोंकी जीवनियोंका ध्यानपूर्वक अध्ययन किया। बुद्धिमान तो थे ही अतअेव अुन महापुरुषोंका सक्रिय आदर्श ही अुन्होंने अपने जीवनका ध्येय बना लिया। अुन्होंने निश्चय कर लिया कि भावी जीवनमें बड़े-बड़े पराक्रम करनेके लिअे आरोग्यता अतीव आवश्यक है। जैसे अूँचे मन्दिरकी नींव भी पक्की और गहरी होती है, वैसे ही जीवन-मन्दिरकी नींव दृढ़ आरोग्य और बलपर

निर्भर है। तिलक केवल विचार प्रधान और स्वप्न-लोकमें विचरण करनेवाले व्यक्ति नहीं थे। वे आचार-प्रधान वीर थे। 'आरोग्य ही सच्ची संपत्ति है' अिस सिद्धान्तको जीवनका आदर्श बनाकर अुन्होंने अुसका सक्रिय अनुसरण करना आरम्भ किया। अुन्होंने प्रातः सायं व्यायाम करना तथा यथेष्ट पौष्टिक आहार करना प्रारम्भ कर दिया। प्रतिदिन, दो घड़ी तालाबमें नाव भी चलाने लगे। वे प्राध्यापकोंके अभिभाषण तो ध्यानसे सुनते थे, परन्तु अध्ययन करना अुन्होंने बिलकुल बन्द कर दिया। नौ महीनोंके लिअे अुन्होंने पुस्तकों तथा अपने प्रिय मित्रोंसे छुट्टी लेली। जब कोअी प्राध्यापक पूछता कि लिखते क्यों नहीं या अध्ययन क्यों छोड़ रखा है तो वे तत्काल अुत्तर देते कि "अिस वर्ष मुझे परीक्षा देनी नहीं है। अिस वर्षको स्वास्थ्य तथा बल-सम्पादन करनेके लिअे समर्पित किया है। मैं अेक वर्षतक शक्तिकी आराधना करना चाहता हूँ। आप मुझे न सताअिअे। केवल आवश्यक अुपस्थितिके लिअे ही मैं कालेज आता हूँ।" अिस प्रकार संयत आचार तथा नियमित व्यायामका परिणाम यह हुआ कि वे वास्तवमें बलवान अर्थात बलवन्तराव बन गअे। वे किताबी कीड़ों और दुर्बल विद्यार्थियोंकी चुटकियाँ लेते थे। यदि किसीके कमरेमें औषधिकी बोतल दिखाअी दे जाती तो अुसे बाहर फेंक देते और कहते कि "व्यायाम करो, पौष्टिक पदार्थ खाओ और बलवान बनो" यदि कोअी छात्र चाय पीता दिखाअी देता तो चाय फेंक देते और अुससे दूध पीनेका अनुरोध करते। अुनके अिस सात्विक अुपद्रवोंके कारण सहपाठी अुन्हें शैतान या 'डेविल' कहने लगे। वे भी हंसते हुअे कहा करते कि दुर्बल और निष्क्रिय होनेकी अपेक्षा शैतान बनना कअी गुना अच्छा है। अिसी समय अुन्होंने कड़ुआ सत्य बोलनेका अभ्यास प्रारम्भ किया और भावी जीवनमें स्पष्टवक्ता बन गअे।

समानधर्मी मित्र

कहा जाता है कि "समान-शील-व्यसनेषु सख्यम्" (समान ध्येयवाले व्यक्तियोंमें ही मैत्री ठीक तरहसे होती है।) अिसी समय डेक्कन कालेजके

विलासी संसारमें दो विरक्त तथा विचारशील युवकोंकी मैत्री हो गअी। अिन दोनोंमें अेक थे बाल गंगाधर तिलक और दूसरे सुधारकोंके सिरताज गोपाल गणेश आगरकर। समान ध्येयवाले ये दोनों युवक रात-रात भर राष्ट्रका अुद्धार करनेके अुपाय तथा ध्येय निश्चित करनेमें संलग्न रहते। अुस समय जब कि प्रत्येक डिग्रीधारी व्यक्ति आचार-विचार तथा भाषासे अंगरेजियतमें रँगा जा रहा था, नकली साहब बननेमें गौरव अनुभव करता था और अंग्रेज सरकारकी नौकरीके स्वर्णिम मोहजालमें अुलझा हुआ था, खुले आम देश-सेवाकी चर्चा करनेका अर्थ था सीधे जेलकी हवा खाना। अतअेव ये दोनों युवक जिनकी दुनिया अलग थी, अेकान्तवासमें दिनरात राष्ट्रके सम्बन्धमें विचार-विमर्श करते रहे और गम्भीर अेवं दीर्घ विचार-विनिमयके पश्चात् अपना ध्येय निर्धारित किया।

देश-सेवाके लिअे दृढ़ प्रतिज्ञ

वह ध्येय क्या था? अुसका स्वरूप कैसा था? अुसके लिअे अितने दीर्घ और गम्भीर सोच-विचार करनेकी क्या आवश्यकता थी? वास्तवमें विचारकोंके लिअे ध्येय निश्चित करना बड़ी कठिन समस्या होती है। फिर समय भी अत्यंत विषम था अिसलिअे अुसका निश्चित करना और भी गहन हो गया था। देश-सेवा करने तथा देशकी स्वतन्त्रताके लिअे बलिदान होनेका ध्येय निश्चित कर तिलक और आगरकर दोनों प्रतिज्ञाबद्ध हुअे और अन्त तक अपनी प्रतिज्ञापर अडिग रहे। ध्येय-प्राप्तिके साधनोंके सम्बन्धमें वे कोअी योजना नहीं बना पाअे क्योंकि साधन परिस्थिति-सापेक्ष होता है और वे तो परिस्थितिकी वास्तविकतासे अनभिज्ञ विचार-जगतमें अुड़नेवाले महत्वाकांक्षी विद्यार्थी थे।

परीक्षार्थी नहीं विद्यार्थी

जिस प्रकार तिलकने अपना शरीर पुष्ट, सुदृढ़ तथा मजबूत बनाया, अुसी प्रकार विद्वत्ता, त्याग, बुद्धि और देशभक्तिसे अुन्होंने अपना मनोबल भी प्रबल किया। केवल परीक्षाओंमें सफलता पाना ही अुनका ध्येय नहीं था।

अुनका ध्येय तो विषयका गम्भीर और सूक्ष्म ज्ञान सम्पादन कर ज्ञानवान बनना था। गणित तथा संस्कृत-साहित्यका अुन्होंने अति सूक्ष्म और गम्भीर अध्ययन किया। केवल पाठ्यक्रममें निर्धारित ग्रन्थोंपर ही वे नहीं निर्भर रहते थे, अिनके अतिरिक्त वे अन्य ग्रन्थोंका भी अध्ययन करते थे। डेक्कन कालेजके गणित-विभागके अध्यक्ष तथा अनुभवी प्राध्यापक केरोपन्त छत्रे अुनपर गर्व करते थे। अेक समय कक्षामें तिलकने गणितका अेक अैसा सवाल सरलतासे हल कर दिया जिसका हल करना कक्षाके अन्य विद्यार्थियोंको तो क्या, स्वयं प्राध्यापक छत्रेके लिअे भी कठिन था। अुस समय अुन्होंने बड़ी आत्मीयता और गर्वके साथ भविष्यवाणीकी थी कि "यह तिलक किसी दिन दिग्विजय करेगा क्योंकि अिसकी अपनी चमक कुछ और ही है।" जिस समय विद्यार्थियोंके प्रिय प्राध्यापक केरोपन्त छत्रे मरणासन्न अवस्थामें थे, अुस समय अुनका अन्तिम दर्शन करनेके लिअे चारों ओरसे विद्यार्थी अेकत्र हुअे। जब अुनके अेक परम मित्रने अुनसे पूछा कि आपकी मृत्युके पश्चात् डेक्कन कालेजमें गणित-विभागकी क्षति कैसे पूरी होगी; तो अुन्होंने तत्काल वहाँ खड़े हुअे तिलककी ओर अंगुलि-निर्देश किया। तिलक भी अपने सुयोग्य प्राध्यापक केरोपन्त छत्रेपर गर्व करते थे। "मैं केरोपन्तका शिष्य हूँ" यह वाक्य वे गर्वसे कहा करते थे। गणितके अध्ययनमें वे ऋषि जैसे ध्यानमग्न हो जाते थे। रेखा-गणित जटिल प्रश्नोंको सुलझानेके लिअे घण्टों अेकाग्र चित्त रहते और खाने-पीनेकी सुध भी नहीं रहती। यही बात संस्कृत-साहित्यके सम्बन्धमें भी थी। कविकुलशेखर कालिदासका 'मेघदूत' तथा 'रघुवंश' और राजा भर्तृहरिका 'नीतिशतक' अुन्हें कण्ठस्थ थे।

संस्कृतके कवि तिलक

गणितके शास्त्रज्ञ होते हुअे भी तिलककी वृत्ति रागात्मिका थी। अेक समय अुनके संस्कृतके प्राध्यापक जिनसीवालेने विद्यार्थियोंसे 'मातृ-विलाप' विषयपर कविताकी रचना करनेके लिअे कहा। तिलकके सहपाठियोंमें संस्कृत-अँग्रेजी-शब्दकोशके रचयिता प्रकाण्ड विद्वान् म. शि. आपटे भी थे। किन्तु श्री जिनसीवालेने निर्णय दिया कि श्री तिलककी संस्कृत-कविता अन्य कविताओंसे अधिक सरस है। 'महतां सर्वं हि महत्' बड़ोंका सब कुछ बड़ा

होता है। प्राध्यापक जिनसीवालेने तिलककी काव्य-शक्तिकी खुलकर बड़ी प्रशंसा की और अुन्हें कविता-रचनाके लिअे प्रोत्साहन भी दिया। किन्तु स्वभावसे वे शास्त्रज्ञ ही अधिक थे कवि नहीं। दूसरी विशेष महत्वकी बात यह थी कि वे अपनी मानसिक शक्ति कार्य विशेषपर ही केन्द्रित करना चाहते थे। अुनका जीवन-मार्ग नियोजित था। वे काव्य, गायन, वादन अित्यादि ललित कलाओंके मोहजालमें नहीं फँसे। तीसरी बात यह थी कि लिखनेकी अुन्हें विशेष रुचि नहीं थी। वे बहुत पढ़ते थे, किन्तु कक्षामें प्राध्यापकोंके 'लेक्चर्स के नोट्स' नहीं लेते थे। वे आत्मनिर्भर विद्यार्थी थे। ग्रन्थोंका सूक्ष्म अध्ययनकर वे स्वयं 'नोट्स' तैयार करते और फिर अपनी बुद्धिकी तेजस्विताका परिचय देते थे। अिस प्रकार वे सन् १८७८ में बी. अे. की परीक्षामें प्रथम श्रेणीमें अुत्तीर्ण हुअे। यह अेक प्रकारका अपूर्व योगायोग था क्योंकि परीक्षा-फलकी ओर तो अुनका कभी ध्यान ही नहीं जाता था। गणित-शास्त्रकी ओर अुनकी नैसर्गिक प्रवृत्ति थी। अतः सन् १८७९ में वे गणित-विषय लेकर अेम. अे. की परीक्षामें बैठे। अुन्होंने डटकर अभ्यास किया, किन्तु अुनकी असामान्यता प्रदर्शित करनेवाली वृत्तिने अुन्हें धोखा दिया। वे जटिल प्रश्न हल करनेमें व्यस्त रहे और अिधर प्रश्न-पत्रके लिअे निर्धारित समय समाप्त हो गया। आठमेंसे केवल दो प्रश्न ही कर सके। परीक्षामें अुन्हें अनुत्तीर्ण होना पड़ा। फिर भी वे हतोत्साहित नहीं हुअे। अुन्होंने अपनी अध्ययन-नौकाको न्याय और कानूनकी ओर मोड़ा। अुन्होंने अिसे ही अपनी भावी सफलताका सोपान माना। दो वर्षोंतक अुन्होंने अिन विषयोंका सूक्ष्मतासे अध्ययन किया और सन् १८७९ के दिसम्बरमें वे अेल्-अेल्. बी. अुत्तीर्ण हुअे। कानूनका अध्ययन करनेसे अुनकी बुद्धि और विचार-शक्ति अधिक तीव्र तथा सूक्ष्म बन गअी। भविष्यमें देश-सेवा और समाज-सेवा करनेकी दृष्टिसे ही अुन्होंने कानूनका अध्ययन किया। अुनके निजी ग्रन्थालयमें कानूनके सैकड़ों ग्रन्थ थे। कानूनके अध्ययनसे अुन्हें पत्रकारिता तथा राजनीतिके क्षेत्रमें विशेष सहायता मिली। अिस प्रकार सन् १८७९ के दिसम्बरमें बलवंतराव तिलकने अपना विद्यार्थी-जीवन समाप्त कर अपने जीवन-मन्दिरकी पक्की और गहरी नींव रखी।

तीसरा प्रकरण

सन् १८७९ पूर्वका भारत

तिलकके सार्वजनिक जीवन तथा देश-सेवाकी स्फूर्तिका मर्म समझनेके लिअे अुनसे पूर्वके भारतकी विशेषकर महाराष्ट्रकी यथार्थ स्थितिका ज्ञान प्राप्त करना आवश्यक है। प्रत्येक महान् पुरुषपर समय और परिस्थितियोंका प्रभाव अवश्य पड़ता है। अपने भविष्य-निर्माणके लिअे वह पूर्व परिस्थितियोंसे सामग्री अेकत्र करता है और तात्कालिक परिस्थितियोंकी आधार-शिलापर भविष्यका विशाल मन्दिर खड़ा करता है। तिलकके चरित्रका मर्म समझनेके लिअे हमें भारतवर्षके पूर्वेतिहासपर अवश्य ध्यान देना पड़ेगा।

सन् १८१८ में भारतवर्षकी स्वतन्त्रताकी ज्योति बुझ गअी अर्थात् भारतीयोंके अन्तिम राज्य मराठा-शासनका पूर्णतया पराभव हो गया। अंग्रेज समस्त भारतपर अेकछत्र राज करने लगे। अंग्रेजोंके आधुनिक कालके शस्त्रास्त्रोंने भारतीयोंको पूर्णतया पराजित किया और अैसा प्रतीत होने लगा कि अब भारत सदियों तक होश नहीं सँभाल सकेगा। परन्तु लार्ड डलहौजीकी राज्योंको हड़प लेनेकी दुर्नीतिसे हिन्दू तथा मुसलमान नरेश जागृत ही नहीं हुअे, बल्कि आगबबूला हो अुठे और अुन्होंने सन् १८५७ में स्वतन्त्रताकी लड़ाअी छेड़ दी। अेक वर्षतक वे अंग्रेजोंसे मुकाबला करते रहे। और सन् १८५७ के सशस्त्र प्रयत्नोंने यह सिद्ध कर दिया कि भारतकी आजादीके लिअे हिन्दू तथा मुसलमान धर्म-भेद भूलकर कन्धेसे कन्धा भिड़ाकर विदेशी हुकूमतसे लोहा ले सकते हैं।

सन् १८५६ में बम्बअी, कलकत्ता तथा मद्रासमें विश्वविद्यालयोंकी स्थापना की गअी। शिक्षाका कार्य लार्ड मेकालेकी शिक्षा-नीतिके अनुसार प्रारम्भ हुआ। अंग्रेज सरकारने अपने सामने तीन अुद्देश्य रखकर होनहार

भारतीय युवकोंको नअे प्रकारकी शिक्षाकी व्यवस्था की। (१) राज-कार्य चलानेके लिअे नौकरोंकी न्यूनता न रहे (२) भारतीयोंमें पश्चिमी सभ्यताके प्रति प्रेम अुत्पन्न हो जिससे वे स्वाभिमान-शून्य बनकर विलायती मालके स्थाअी ग्राहक बन जाअें, और (३) धर्मपरिवर्तन कर अीसाअी बनें। अपना धर्म, अपनी सभ्यता और अपना व्यापार बढ़ानेके हेतु ही अंग्रेजोंने देशमें अंग्रेजी शिक्षा-प्रणालीका सूत्रपात किया। अंग्रेजोंको राज चलानेके लिअे नौकरोंकी आवश्यकता थी और भारतीयोंको पुराने धन्धे डूब जानेके कारण निर्वाहके लिअे नौकरी की।

अल्प कालमें ही अंग्रेजोंको मालूम हो गया कि शिक्षाके द्वारा धर्म-प्रसारका कार्य अतीव अल्प परिमाणमें ही हो सकेगा। अुनके धार्मिक प्रचारके विरुद्ध भारतमें तुरन्त प्रतिक्रिया प्रारम्भ हो गअी और बंगालमें राजा राम-मोहन राय द्वारा स्थापित ब्रह्मसमाजके नेतृत्वमें महर्षि देवेन्द्रनाथ ठाकुर, अीश्वरचन्द्र विद्यासागर अित्यादि विद्वानोंने अपनी पूरी शक्तिसे अंग्रेजोंकी नीतिका विरोध किया। महाराष्ट्रमें न्यायमूर्ति महादेव गोविन्द रानडे तथा डाक्टर भांडारकरने प्रार्थना-समाजकी स्थापना की। विष्णु बुवा ब्रह्मचारीने भी पादरियोंका घोर विरोध किया। बंगालमें रामकृष्ण मिशनका कार्य प्रारम्भ हुआ और पंजाबमें स्वामी दयानन्द सरस्वतीके 'आर्य-समाज' का जोरोंसे प्रसार होने लगा। भारतमें सांस्कृतिक पुनरुज्जीवनकी लहरें तिलकके बी. अे. अेल-अेल. बी. होनेसे पहले ही फैल चुकी थीं और भारतीयोंके मनमें अपने धर्म तथा अपनी संस्कृतिके प्रति आदरका भाव जाग्रत हो चुका था।

अंग्रेजोंकी स्वार्थपूर्ण आर्थिक नीतिके कारण भारतका तीव्रतासे शोषण हो रहा था। जबसे अिंग्लैण्डमें औद्योगिक क्रान्ति हुअी थी वहाँका बना माल यहाँ सस्ते दामोंमें बेंचा जाता था जिसकी प्रतिस्पर्धामें भारतीयोंके गृह तथा ग्रामोद्योगका टिकना कठिन था। सभी ओरसे भारतकी आर्थिक हानि हो रही थी। सर्वप्रथम अिसकी प्रतिक्रिया महाराष्ट्रमें प्रारम्भ हुअी और सार्वजनिक

काका अर्थात् गणेश वासुदेव जोशीने स्वदेशी वस्त्रोंका प्रचार आरम्भ किया। अिस प्रकार महाराष्ट्रमें स्वदेशीकी भावनाका बीजारोपण तो हुआ, किन्तु वह पनप नहीं सकी। लार्ड मेकालेका यह कथन प्रसिद्ध है कि "भारतसे अंग्रेजी राज अुठ जाअे तो भी हमें पर्वाह नहीं, सिर्फ हमारा व्यापार यहाँ बना रहे।" अंग्रेजी साम्राज्यके अिस आर्थिक मूलको काटनेका अेक मात्र साधन स्वदेशीका प्रचार ही था। पूनामें यह कार्य सन् १८६५ से १८८० तक गणेश वासुदेव जोशी या सार्वजनिक काकाने त्यागपूर्वक किया। तिलकपर भी अिसका प्रभाव पड़ना स्वाभाविक था।

सन् १८५३ में भारत-राष्ट्र-प्रपितापह दादाभाअी नौरोजीने बम्बअी प्रान्तमें 'बाम्बे अेसोसिअेशन' नामक अेक राजनीतिक संस्था स्थापित की। अिसके पश्चात् दस-बीस वर्षोंमें बंगाल, मद्रास आदि मुख्य-मुख्य प्रान्तोंमे भी। अिसी प्रकारकी संस्थाअें स्थापित हुअीं, जिनमें प्राय: अूंचे सरकारी अधिकार अथवा धनी लोग ही सम्मिलित होते और प्रमुख सामयिक सामाजिक प्रश्नों और कभी-कभी राजनैतिक प्रश्नोंपर बड़े ठंडे दिमागसे विचार करते थे। अँग्रेज सरकारका कृपा-पात्र बननेकी अुनमें आपसमें होड़ लगी रहती थी। आम जनताके दुख-दर्दसे वे अपरिचित थे और अधिकतर अपने प्रादेशिक प्रश्नोंमें ही अुलझे रहते थे। सरकारके कारोबारमें योग देना और अधिक अूंचा अधिकार प्राप्त करना ही अुनका ध्येय था। संक्षेपमें वे याचनावादी थे। केवल राष्ट्र प्रपितामह दादाभाअी नौरोजी अेक अैसे असामान्य महापुरुष थे जो दिनरात भारतकी राजनीतिक तथा आर्थिक अवस्था सुधारनेके लिअे प्रयत्नशील रहते थे। अुन्होंने "On British Rule In India" नामक ग्रन्थकी रचना की जिससे होनहार युवकोंका ध्यान अुनकी ओर आकर्षित हुआ। अिस ग्रन्थको पढ़कर नवयुवक अँग्रेजी राज्यकी सभी प्रकारकी बुराअियोंसे परिचित होने लगे। दादाभाअी नौरोजीके स्वार्थत्यागमय जीवनका भी युवकोंपर प्रभाव पड़ा। महराष्ट्रपर तो अुनका विशेष प्रभाव था। अुनसे स्फूर्ति प्राप्तकर सन् १८७० में सार्वजनिक काका और न्यायमूर्ति महादेव गोविन्द रानडेने पूनामें 'सार्वजनिक सभा' की स्थापना की। सरकारके सम्मुख लोगोंके दु:ख-कष्ट अुपस्थित

करना अिस सभाका प्रमुख अुद्देश्य था। अँग्रेज सरकारके सम्मुख जनताके कष्ट अुपस्थित करनेवाली यह प्रथम संस्था थी। धीरे-धीरे अिस सभाने ज्यूरीके अधिकार, रेलवे-यात्रियोंकी शिकायतें, म्युनिसिपलिटीमें लोक-निर्वाचित सदस्योंकी नियुक्ति, राजा और प्रजाका पारस्परिक सम्बन्ध आदि प्रश्नोंपर अँग्रेज सरकारके पास सूचनाअें भेजना शुरू किया। अिस सभा तथा 'बाम्बे अेसोसिअेशन' ने सन् १८७२ में नियुक्त पार्लमेन्टरी कमेटीके सम्मुख-साक्षी दी और सन् १८७६–७७ के अकालमें लोकोपकारी कार्य भी किअे। न्यायमूर्ति रानडे अिस सभाके आधारस्तम्भ थे। वे मौलिक विचारक थे। महाराष्ट्रके आद्य समाज-सुधारक रावबहादुर देशमुख अर्थात् 'लोक-हितवादी' भी ब्रिटिश राजको औश्वरकी देन मानते थे। ब्रिटिश लोगोंकी न्यायबुद्धिपर अुनका अडिग विश्वास था। वे कहते थे कि जैसे ही भारतीय राज-कार्य चलाने योग्य हो जाअेंगे, सभ्य अँग्रेज शासक स्वयं ही भारतके शासनकी बागडोर अुनके हाथोंमें सौंपकर अिंग्लैण्ड लौट जाअेंगे। अुनका यह भी विश्वास था कि भारतकी दासता अुसके सामाजिक दोषोंका ही कुफल है। अतः जबतक भारतकी जनता सामाजिक सुधारोंकी और अग्रसर नहीं होती तबतक भारतकी राजनीतिक प्रगति सम्भव नहीं। संक्षेपमें वे राजनीतिक सुधारोंकी अपेक्षा सामाजिक सुधारोंपर अधिक जोर देते थे और भारतीयोंको पश्चिमी विशेषतया अँग्रेजी सभ्यताका अुचित अनुकरण करनेको प्रोत्साहित भी करते थे। वे अुदार मतवादके समर्थक थे। अुन्होंने भारतकी सर्वांगीण अुन्नतिपर जोर दिया और प्रार्थना-समाज तथा विधवा-विवाह-मण्डल स्थापित किअे। महाराष्ट्रमें अिन समाज-सुधारक आन्दोलनोंकी तीव्र प्रतिक्रिया हुअी। सन् १८७४ में विष्णु शास्त्री चिपलूणकरनेमराठी भाषामें 'निबन्ध-माला' मासिक पत्रिकाका प्रकाशन प्रारम्भ किया। अुनका अटल विश्वास था कि संसारमें हिन्दू धर्म, संस्कृति, दर्शन तथा साहित्य ही सर्वश्रेष्ठ है। वे जन्मतः देशभक्त थे। विदेशी अंग्रेजी सत्ताके प्रति अुनके मनमें अनादरकी कटु भावना थी। वे स्वराज्यके पक्षपाती थे। अुनकी धारणा थी कि 'विदेशी अंग्रेजोंके सुराज्यकी अपेक्षा स्वजनोंका बुरा स्वराज्य

भी सौ गुना अच्छा होगा।' अुन्होंने रानडेकी समाज-सुधार नीतिकी कठोर आलोचनाकी और अुनपर कटु वाक्-प्रहार भी किअे। चिपलूणकर बहुत अूँचे दर्जेके निबन्ध-लेखक थे। अुनके लेखोंका नवयुवक पाठकोंपर बड़ा प्रभाव पड़ा। तेजस्वी चिपलूणकरने राजनीतिक सुधारकोंका भरसक समर्थन किया। अुनकी दृष्टिमें देशका सामाजिक ढाँचा तथा व्यवस्था निर्दोष थी। अुन्होंने अँग्रेजोंके अन्धानुकरणकी कठोर भर्त्सना की। गुलामी की मनोवृत्ति कहकर अुसकी बुरी तरहसे मजाक भी अुड़ाअी। अैतिहासिक तथ्योंके आधारपर सिद्ध किया कि सब दुःखोंका मूल पराधीनता है। अतअेव स्वराज्यकी पुनः स्थापना ही भारतीयोंका प्रथम कर्तव्य है। सन् १८७७ में अँग्रेज सरकारने 'हमारे देशकी सद्य स्थिति' शीर्षक अुनका १५० पृष्ठोंका सारगर्भित निबन्ध जब्त कर लिया। अुनके लेख देश-प्रेमसे परिपूर्ण होते थे। वे भारतके लिअे अँग्रेजोंका राज सर्वथा विनाशक अेवं कलंकस्वरूप मानते थे। अुन्होंने स्वावलम्बन तथा स्वार्थत्यागका सहारा लेकर स्वराज्य प्राप्तिके लिअे भारतीयोंको प्रोत्साहित किया। संक्षेपमें रानडे तथा चिपूलणकरकी दृष्टि तथा नीतिमें जमीन आसमानका अन्तर था। चिपलूण-करकी कथनी तथा करनीमे मेल था। अुन्होंने सरकारी नौकरी छोड़कर देश-बन्धुओंके हृदयमें स्वदेश, स्वधर्म, स्वसंस्कृति तथा स्वभाषाका ज्वलन्त अभिमान जाग्रत करनेके लिअे ही 'निबन्ध-माला' का प्रकाशन प्रारम्भ किया था। अिस समय तिलक पूनाके कालेजमें पढ़ते और अपने समानधर्मी मित्र गोपालराव आगरकरके साथ रात-रातभर जगकर राष्ट्रीय समस्याओं-पर विचार-विमर्श करते थे।

महापुरुष और प्रवाहगत साधारण पुरुषके मनमें बड़ा अन्तर होता है। महापुरुषका मन फोटोके कैमरेके लेन्सकी तरह होता है और साधारण पुरुषोंका मामूली काँचकी तरह। पहलेमें अतीत, वर्तमान तथा भविष्यकी प्रतिमा अुतरती है, परन्तु दूसरेमें अिसका पूर्ण अभाव रहता है; ठीक अुसी प्रकार जिस प्रकार साधारण काँचमें सूर्यकी प्रतिमा नहीं दिखाअी देती। अतअेव अुपर बताअे गअे विचार-प्रवाहोंका प्रभाव महापुरुष तिलकके मनपर पड़ना स्वाभाविक था।

चौथा प्रकरण

देश-सेवाका श्रीगणेश

क्षुद्राः सन्ति सहस्त्रशः स्वभरणव्यापारमात्रोद्यताः
स्वार्थो यस्य परार्थ अेव स पुमानेकः सतामग्रणीः ।
—भर्तृहरि

सन् १८७९ में तिलक प्रथम श्रेणीमें अेल-अेल. बी. की परीक्षामें अुत्तीर्ण हुअे । अुस समय अूँची अंग्रेजी शिक्षा अलाअुद्दीनके जादुअी चिरागकी भाँति थी । जो कुछ माँगा जाअे वह अुससे प्राप्त होता था । अंग्रेजीकी केवल चार किताबें पढ़नेवाले तहसीलदार बनकर सैकड़ों रुपया मासिक वेतन प्राप्त करते थे । तिलक तो प्रथम श्रेणीमें बी. अे., अेल-अेल. बी. अुत्तीर्ण हुअे थे । यदि वे चाहते तो न्याय-विभागमें पाँच-सात सौ रुपया मासिक वेतनपर मुंसिफ होकर सुखसे अपने जीवनका श्रीगणेश कर बीस-पचीस वर्षों बाद अुच्च न्यायालयके न्यायाधीश बन तीन-चार हजार रुपया मासिक प्राप्त कर लेते । अुस समय समाजमें वकीलोंकी आवश्यकता भी थी । तिलकके पूर्व बम्बअी प्रान्तमें केवल बीस बी. अे., अेल-अेल. बी.थे, अिसलिअे वकालतका धन्धा दिनपर दिन बढ़ता जा रहा था और अुसे समाजमें अूंची प्रतिष्ठा भी प्राप्त थी । अुन्हींके साथियोंने वकालत कर काफी धन पैदा किया और सुख-समृद्धिमें रहकर अपना जीवन बिताया, परन्तु भारतकी स्वतन्त्रताकी वकालत करनेके लिअे अपने सुखको लात मारनेवाले तिलक तो अेक असाधारण पुरुष थे ।

'न्यू अिंग्लिश स्कूल'की स्थापना

कविकुलशेखर कालिदासकी सूक्ति है कि 'नदी मुखेनेव समुद्र-माविशेत् ।' नदीके मुखसे विशाल समुद्रमें प्रवेश करना चाहिअे । देश तथा

समाजका कार्य सागरके समान ही विशाल और गम्भीर होता है। जो लोग सोच-विचार कर अथवा किसी अुद्देश्यको लेकर अुसमें प्रवेश नहीं करते, वे चन्द दिनोंमें ही परास्त अेवं निराश होकर अुससे पृथक हो जाते हैं। कअी लोग अुमंग और भावनाओंके अुद्रेकमें भी समाज-सेवा तथा देश-सेवाके क्षेत्रमें कूद पड़ते हैं, पर्याप्त स्वार्थत्याग भी करते हैं, किन्तु अन्ततोगत्वा निराश होकर प्रतिक्रियावादी बन जाते हैं। अच्छी तरह विचार करके ही अिस क्षेत्रमें अवतीर्ण होना चाहिअे। तिलककी देशभक्ति विचारपूर्ण थी और अुनकी भावना तथा तड़प अुन्हें क्रियाशील बना रही थी। वे और अुनके सहपाठी मित्र आगरकर रात-रातभर जगकर कालेज जीवनमें ही देश-सेवाका विचार करने लगे थे। अिससे अुन्होंने समाजमें मानसिक क्रान्ति पैदा करनेका निश्चय किया। सामाजिक जागृति होनेपर ही राजनीतिक अेवं सामाजिक क्रान्तिकी नींव डाली जा सकती है। मानसिक क्रान्तिके भी दो पथ हैं। प्रथम समाचार-पत्रों तथा व्याख्यानों द्वारा जन-साधारणके मनमें परिवर्तन अुपस्थित करना और दूसरा शिक्षा द्वारा नवयुवकोंके मनपर अभीष्ट संस्कार अुत्पन्न कर अुनके सामने नअे युगका आदर्श अुपस्थित करना। पहला मार्ग कठिनाअियोंसे भरा हुआ होता है और सफलताकी अुसमें बहुत कम सम्भावना रहती है, क्योंकि वृद्ध लोग, जो समाजमें लब्धप्रतिष्ठ भी होते हैं, प्रायः परिवर्तनोंके विरोधी होते हैं। नअी पीढ़ीपर संस्कारोंका जल्दी प्रभाव पड़ता है और वह प्रगति अेवं परिवर्तनोंका स्वागत भी करती है। बुद्धिमान तिलकने अपने मित्र आगरकरकी सहायतासे सर्वप्रथम नवोदित पीढ़ीकी शिक्षाका प्रश्न अपने हाथोंमें लिया। नअी पीढ़ीमें स्वभाषा, स्वदेश और स्वसंस्कृतिके प्रति अुत्कट निष्ठा अुत्पन्न करनेका लक्ष्य निर्धारित किया। यह कार्य सरकारी विद्यालयों द्वारा कदापि सम्भव न था क्योंकि ये विद्यालय तो क्लर्क निर्माण करनेवाले कारखाने मात्र ही थे। वहाँ स्वतंत्र विचारोंके लिअे अवकाश ही नहीं था। अतः अुन्होंने सर्वप्रथम देशकी पददलित और अुत्पीड़ित तरुणाअीके मनमें क्रान्ति पैदा करना प्रारम्भ किया। अिस कार्यमें मार्गदर्शनके लिअे अुन्हें

अेक अनुभवी शिक्षाविद्‌की आवश्यकता अनुभव हुअी। संयोगसे अिसी समय मराठी भाषाके शिवाजी, निबन्धमालाकार, प्रकाण्ड पण्डित विष्णु शास्त्री चिपलूणकर देश-सेवा करनेकी अुत्कण्ठासे रत्नागिरिके सरकारी हाअीस्कूलसे पदत्याग कर पूना पधारे थे। वे तपे हुअे, परिपक्व अनुभवी देशभक्त शिक्षक थे। पूनामें अुनके आगमनका समाचार सुनकर तिलक फूले नहीं समाअे। आगरकरको साथ लेकर वे अुनसे मिलने गअे। वहाँ समान हृदयके तीन महापुरुषोंका मेल त्रिवेणी-संगमके समान हुआ और तुरन्त ही सरस्वतीकी पावन-धारा बहने लगी। 'शुभस्य शीघ्रम्' न्यायके अनुसार सन् १८८० के जनवरी मासमें 'न्यू अिंग्लिश स्कूल' की स्थापना की गअी। ब्रह्मा, विष्णु, महेशकी भाँति विष्णु शास्त्री चिपलूणकर बी. अे., बलवन्तराव तिलक बी. अे., अेल-अेल. बी. और गोपालराव आगरकर अेम. अे. स्कूलके संस्थापक अेवं अध्यापक बने। अिन देशभक्तोंके स्कूलमें पहले दिन केवल १९ विद्यार्थी सम्मिलित हुअे, परन्तु ये निरुत्साह नहीं हुअे। अिन्होंने तन-मन-धनसे युवकोंको शिक्षा देनेका कार्य प्रारम्भ किया। तीनों ही प्रकाण्ड विद्वान् और अुत्साही अध्यापक थे। अेक मासमें ही स्कूलमें विद्यार्थियोंकी संख्या १५० हो गअी। फिर तो संस्था अुत्तरोत्तर बढ़ती ही गअी और तीन मासमें यह संख्या ५०० तक पहुँच गअी। न्यू अिंग्लिश स्कूल और अुसके संस्थापकोंकी सफलतामें दिन-पर-दिन चार चाँद लगने लगे। तीन वर्षोंके अन्दर विद्यार्थियोंकी संख्या १००० पहुँच गअी और स्कूलके सामने सामग्री, स्थान, भवन अित्यादिकी कठिन समस्या पैदा हो गअी। स्कूलमें पढ़ाअी बड़े सुचारु ढंगसे होती थी और मैट्रिक परीक्षाका फल ८० प्रतिशत रहता था जिससे विद्यार्थियोंका प्रवाह दिन-पर-दिन बढ़ता रहा। विवश हो व्यवस्थापकोंको संख्याको मर्यादित करना पड़ा और प्रवेशके सम्बन्धमें सैंकड़ों विद्यार्थियोंको सखेद अिन्कार भी करना पड़ा।

४०) रुपये मासिक वेतनपर

'न्यू अिंग्लिश स्कूल' की नींव स्वार्थ-त्यागपर अवलम्बित थी। स्कूल अल्पावधिमें फूला और फला, किन्तु तिलक और आगरकर केवल चालीस

रुपया मासिक वेतन लेते थे। सम्भवत: तिलक ही प्रथम अेल-अेल. बी. परीक्षा-अुत्तीर्ण शिक्षक थे जो अितने अल्प वेतनपर अुत्साहसे कार्य करते थे। अपने परिवारके पालण-पोषणके लिअे अुन्होंने यह नाममात्रका वेतन लेना स्वीकार किया; परन्तु अेंड़ीसे चोटी तकका पसीना बहाकर अध्यापन कार्य करते थे। तिलक और आगरकरके पसीनेसे सींचा गया स्कूलका पौधा दिन पर दिन अधिक लहलहाता गया।

अध्यापकस प्राध्यापक

जैसे वृक्षोंका विकास पत्तोंके बाद फूल और फलके रूपमें होता है, वैसे ही 'न्यू अिंग्लिश स्कूल' से सन् १८८५ में फर्ग्युसन कालेजका विकास हुआ। अिसके पूर्व तिलक और आगरकरने 'डेक्कन अेज्यूकेशन सोसायटी' की स्थापना की जिसका ध्येय शिक्षा-संस्थाओंकी स्थापना कर स्वदेश-प्रेमी विद्यार्थी तैयार करना था। तिलक तथा आगरकर अिस संस्थाके आजीवन संस्थापक-सदस्य थे। 'डेक्कन अेज्युकेशन सोसायटी' ने ७० हजार रुपयोंका चन्दा अेकत्र किया और कुछ व्यवहारिक अेवं राजनीतिक कठिनाअियाँ मिटानेकी दृष्टिसे वम्बअीके तत्कालीन गवर्नर मि. फर्ग्युसनके नामपर अुनके ही द्वारा अिस कालेजका शिलान्यास करवाया गया। तिलक जैसे अुग्रदलवादी देशभक्तने अिसमें भी समयानुकूल राजनीति अपनाअी। तिलक अिस कालेजमें गणित तथा संस्कृत पढ़ाते थे। कक्षामें अपने विषयके अतिरिक्त कुछ नहीं बोलते थे। विद्यार्थियोंकी शंका-कुशंकाओंको क्षणभरमें दूर करना अुनके लिअे सरल काम था। गणितकी पढ़ाअी तो अितनी तन्मयतासे करते थे कि विद्यार्थियोंके मस्तिष्कमें विषय तत्क्षण जम जाता था। विशेष आवश्यकता होनेपर ही वे ब्लेक बोर्डका अुपयोग करते थे, अन्यथा प्रश्नोंके अुत्तर मौखिक देते थे। संस्कृत-साहित्यके अध्यापन में भी वे अत्यन्त कुशल थे। अिस प्रकार यशस्वी अध्यापक तथा प्राध्यापक बनकर अुन्होंने अपनी आयुके दस वर्ष बिताअे, परन्तु अीश्वर तो तिलकको दूसरे विशालतर कार्योंमें लगाना चाहता था। संस्थाअें बढ़ीं तथा अुनकी व्यापकता भी बढ़ी। जितना व्याप अुतना संताप।

अध्यापक तथा प्राध्यापकोंकी संख्या बीस गुनी हो गअी। मूल संस्थापक तिलक अेवं आगरकरके समान स्वार्थत्याग दूसरोंके लिअे सम्भव न था। मतभेद हुआ, दलबन्दी बढ़ी। दलबन्दीका मुख्य कारण था सोसायटीके संगठनके सम्बन्धमें सदस्योंका मत-भेद। 'न्यू अिंग्लिश स्कूल' की स्थापनाके समय तिलक और आगरकर अित्यादिने यह निश्चय किया था कि यह संस्था योरपके जेसुअिट साम्प्रदायके ढंगसे चलाअी जाय। जेसुअिट सम्प्रदायके समस्त लोगोंको अुतनी रकमपर ही सन्तुष्ट रहना पड़ता है जितनी कि अुन्हें संस्थाकी ओरसे मिलती है। वे स्वयं और जो अुद्योग करते हैं, अुसकी समस्त आमदनी संस्थामें जमा करानी पड़ती है। अिस प्रकार किसीकी बुद्धिमत्ता, अुद्योगशीलता अथवा कार्यतत्परता कम या ज्यादह होनेका कोअी प्रभाव नहीं पड़ता। यही सिद्धान्त 'न्यू अिंग्लिश स्कूल' और फर्ग्युसन कालेजकी स्थापनाके समय ग्रहण किया गया था, परन्तु आगे चलकर अिस सम्बन्धमें तर्क-वितर्क होने लगे और दो पक्ष भी अुत्पन्न हो गअे। अेक पक्षका कहना था कि पाँच घन्टेतक सोसायटीका काम करनेके बाद आजीवन सभासद शेष समय अपनी अिच्छानुसार द्रव्यार्जन अथवा अन्य कामोंमें लगा सकते हैं। सबकी योग्यता और बुद्धि अेक-सी नही होती, अतअेव जो अधिक बुद्धि और क्षमता रखता है, वह यदि विद्यालयका काम करके शेष समयमें दूसरे काम भी करे तो आपत्ति नहीं होनी चाहिअे। दूसरे पक्षका कथन था कि आजीवन सभासद होनेका अर्थ यही है कि वह अपना सारा समय और सारी बुद्धि अेवं शक्ति सोसायटीके ही काममें लगावे और यदि दूसरे कार्यमें समय लगावे भी तो अुससे होनेवाली आय संस्थाकी सम्पत्ति समझी जाय। बलवन्तराव दूसरे पक्षके समर्थक थे। प्रश्न था कि अिस विषयका निर्णय कैसे हो? पहला पक्ष कहता था कि निर्णय बहुमतसे होना चाहिअे। तिलक अिसके खिलाफ थे। वे बहुमतकी अुपेक्षा करते हों, यह बात नहीं थी, परन्तु अुनका कहना था कि किसी संस्थाके संगठनके मूल तत्वोंमें बहुमतसे कोअी परिवर्तन नहीं करना चाहिअे; वरन् संस्थापकोंने जिन तत्वोंके आधारपर संस्थाकी बींव डाली है, अुन्हें अटल तत्व मानकर अनुयायियोंको अुनके अनुसार चलना ही श्रेयस्कर

है। अुनका यह भी कहना था कि जिन्हें यह सिद्धान्त स्वीकार न हो वे चाहें तो संस्थासे अलग हो सकते हैं, परन्तु अुन्हें सिद्धान्तोंमें परिवर्तन करानेके चक्करमें नहीं पड़ना चाहिअे। तिलक अिन तत्वोंका प्रतिपादन केवल मौखिक ही नहीं करते थे, बल्कि अिनके अनुसार आचरण भी करते थे। अेक बार स्वर्गीय श्री शिवाजीराव हाेलकर पूना आअे। अुन्होंने वहाँके विद्वानों और प्रतिष्ठित सज्जनोंको बुलाकर अुनका यथोचित सत्कार किया। तिलक भी बुलाअे गअे और अुन्हें ३५०) प्रदान किअे गअे। यह रकम अुनकी निजी सम्पत्ति थी। अतअेव यदि तिलक अुसे अपने पास रख लेते तो अनुचित न था, परन्तु अुन्होंने पूरी रकम सोसायटीको दे डाली।

अिसके अतिरिक्त कुछ गौण मतभेद और भी थे, परन्तु मतभेदकी मुख्य जड़ यही थी और जब अुसका निर्णय तिलकके प्रतिकूल हुआ, तथा अन्य कारणोंसे भी पारस्परिक विरोध बढ़नेका रंग दिखाअी दिया, तब अुनके सामने त्यागपत्र देनेके अतिरिक्त कोअी मार्ग नहीं था। सन् १८९० में अुन्होंने व्यथित हृदयके साथ 'डेक्कन अेज्युकेशन सोसायटी' से त्यागपत्र दे दिया। जिस संस्थाको अुन्होंने अपने खूनसे सींचकर हरा-भरा किया था, अुस संस्थाको छोड़ते समय अुनके मनमें कितना क्लेश हुआ होगा, अिसकी कल्पना पाठक स्वयं कर सकते हैं। त्यागपत्रमें अुन्होंने लिखा था कि "आज मुझे अिस संस्थासे अलग होते समय यह प्रतीत हो रहा है कि मैंने अपने जीवनके सारे ध्येयोंका ही परित्याग कर दिया है। अूंचा ध्येय सम्मुख रखकर गत दस वर्षोंतक हमने संस्थाके लिअे कष्ट अुठाअे। कुछ भी बाकी नहीं रखा। लोगोंकी भर्त्सना अेवं विरोधको भी धीरजके साथ सहन किया। अुपहास, व्यंग्य और निराशा भरे शब्दोंको भी हँसकर पी गया। जितना बन सका अुतना स्वार्थत्याग किया। संस्थाकी तन-मन-धनसे सेवा की। मेरी अेक मात्र महत्वाकांक्षा अिस संस्थाके अध्यापकके पदपर रहकर विनम्र सेवा करनेकी थी, किन्तु भगवान मुझसे कुछ और ही चाहता है। अतअेव जिस हृदय-विदारक मानसिक व्याकुलतासे मैं त्यागपत्र दे रहा हूँ, अुसकी कल्पना आप कर सकते हैं। भगवानकी कृपासे संस्था दिन प्रति दिन

आगे बढ़े ।" तिलक स्वभावसे विद्याव्यासंगी थे, परन्तु देशकी विशिष्ट तथा विषम परिस्थितियोंके कारण राजनीतिकी ओर मुड़े और 'राष्ट्रजनक' तथा 'लोकमान्य' कहलाकर अजर-अमर हो गअे । अुनकी आन्तरिक अिच्छा अुन्हींके शब्दोंमें कहनी हो तो "स्वराज्य मिलनेके बादमें गणितका अध्यापक होना ही पसन्द करूँगा और अध्यापक पदपर ही मरूँगा" यही थी । परन्तु 'देवमन्यत् चिन्तयेत्' मनुष्य जो सोचता है अुसके विपरीत देव या दैव करता है । अुनका शिक्षा-क्षेत्र परमेश्वरको व्यापक बनाना था । वे चहार-दीवारीके भीतर पढ़ानेवाले मामूली शिक्षक नहीं थे । ओश्वर अुन्हें लोक-शिक्षक बनाना चाहता था । तिलककी देश-सेवा रूपी गंगाकी अुत्पत्ति "न्यू अिंग्लिश स्कूल" रूपी गंगोत्रीसे हुओ, परन्तु जैसे गंगा तेजीसे बढ़ती हुओ हरिद्वारके समीप विशाल समतल, भूमिपर बहकर जन-साधारणको अपने पावन तथा विशद प्रवाहसे परिपुष्ट करने लगी, वैसे ही तिलककी बहुमुखी सेवाओंने अनेक रूपोंमें भारत और भारतीय जनताके भविष्य-निर्माणमें योग दिया ।

पाँचवाँ प्रकरण

'केसरी' का कँटीला किरीट

'केसरी'का अुद्देश्य-बोधक श्लोक—

'स्थितिं नो रे दध्याः क्षणमपि मदान्धेक्षण सखे
गजश्रेणीनाथ त्वमिह जटिलायां वनभुवि।
असौ कुंभिभ्रान्त्या खरनखरविद्रावित महा—
गुरुग्रावग्रामः स्वपिति गिरिगर्भे हरिपतिः॥

—पण्डितराज जगन्नाथ

लोक जागृतिके प्रभावशाली साधन समाचार-पत्र होते हैं। सम्राट नेपोलियन तोपोंकी आवाजसे अितना नहीं डरता था जितना समाचार-पत्रोंकी आवाजसे। फ्रान्सकी राज्यक्रान्ति (सन् १७७९) का प्रादुर्भाव रूसो और वाल्टेयरके प्रेरक निबन्धोंके प्रभावसे हुआ। जोसेफ मेजिनीने अपनी लेखनीसे अिटलीमें क्रान्तिकी आग सुलगाअी। तिलकके लेखन-गुरु विष्णु शास्त्री चिपलूणकरने लगातार सात साल तक 'निबन्ध-माला' का सम्पादन कर अंग्रेजी विद्यावारुणीपर मुग्ध हुअे नवशिक्षितोंकी आँखोंमें चुभनेवाला अंजन आँजा। तिलक अुन्हींके शिष्य थे। गुरुका अधूरा कार्य अुन्होंने अपने हाथोंमें लिया और लगभग चालीस वर्षों तक लेखनी द्वारा देशमें जागृति पैदा की। 'न्यू अिंग्लिश स्कूल' की जड़ जमते ही सन् १८८० के अन्तमें चिपलूणकर, तिलक और आगरकर समाजको जागृत करनेके सम्बन्धमें विचार करने लगे। तीनों ही प्रकांड विद्वान थे और जनतासे कुछ-न-कुछ कहनेके लिअे व्याकुल थे। अपने विचारोंकी छाप नवोदित पीढ़ीके मनपर डालनेका कार्य तो वे स्कूलमें करते थे, किन्तु प्रौढ़ और सर्व सामान्य शिक्षितोंके मनमें देश-प्रेम,

भाषा-प्रेम तथा संस्कृति-प्रेम जाग्रत करनेके लिअे अुन्होंने अपनी शिक्षा-संस्थाकी ओरसे समाचार-पत्र निकालनेका निर्णय किया ।

'केसरी' और 'मराठा' का प्रकाशन

संस्थाकी ओरसे 'केसरी' मराठी साप्ताहिक और दूसरा 'मराठा' अंग्रेजी साप्ताहिक पत्र प्रकाशित करनेका निश्चय किया गया । चिपलूणकर, तिलक और आगरकरका अेक सम्पादक-मण्डल बना किन्तु गोपालराव आगरकर 'केसरी' के और तिलक 'मराठा' के प्रधान सम्पादक बने । यह सम्पादक-मण्डल दोनों साप्ताहिक पत्रोंका संचालन करता था । प्रथम वर्षके 'केसरी' में शास्त्री, आगरकर और तिलक तीनोंके लेख प्रकाशित हुअे । साहित्यिक लेख शास्त्रीजी लिखते थे । अितिहास, अर्थशास्त्र तथा सामाजिक विषयोंपर आगरकर लिखते और धर्मशास्त्र अेवं राजनीति या कानून सम्बन्धी लेख तिलक द्वारा लिखे जाते थे । अग्रलेख लिखनेके अतिरिक्त तीनों अपने लिअे निश्चित विषयोंको छोड़कर अन्य लेखोंकी ओर ध्यान नहीं देते थे । फुटकर लेखादिकी पूर्तिका भार आगरकर पर था क्योंकि अुनमें विनोद, निस्पृहता अेवं रोमेन्टिक स्वभावकी झलक पद-पद पर पाअी जाती थी । सातवें अंकमें ही तिलकने 'बहिष्कार' शीर्षक लेख लिखा । अंग्रेजीमें 'मराठा' प्रकाशित करनेका हेतु था जनताकी माँगें, अुसकी आशा-आकांक्षाओं, अुसके दुखों और अुसकी वास्तविक परिस्थितिसे अंग्रेज सरकारको परिचित कराना, साथ ही आंग्ल विद्याविभूषित अूंची शिक्षा प्राप्त लोगोंमें राष्ट्रीय चेतना पैदा करना । तीसरा कारण यह था कि वे अन्य प्रान्तोंमें रहनेवालोंको भी अपने राजनैतिक तथा सामाजिक विचारोंसे परिचित कराना चाहते थे । अुन्होंने यह भली भाँति समझ लिया था कि समस्त भारतवर्षमें जागृति पैदा किअे बिना देशमें प्रबल संगठन तथा आन्दोलन नहीं चलाया जा सकता । अुस समय अंग्रेजी भाषा ही सम्पूर्ण भारतमें राजनैतिक जागृति पैदा करनेके लिअे सहायक हो सकती थी । दोनों पत्रोंके अुद्देश्योंके सम्बन्धमें कहा गया था कि "अंग्रेज सरकारके सम्मुख जनताके कष्ट, मत तथा

माँगोंको निर्भीकतासे अुपस्थित करनेवाला कोअी पत्र नहीं है, अिसलिअे हम 'केसरी' तथा 'मराठा' का प्रकाशन कर रहे हैं। दोनों पत्र लोक-जागृति करनेके लिअे हमारे हथियार हैं। अिनमें जो लिखा या प्रकाशित किया जाअेगा वह सम्पादक-मण्डलकी निर्धारित नीतिके अनुसार होगा। सत्यका निर्भीकता और लोकहितकी दृष्टिसे प्रतिपादन, प्रकाशन अेवं प्रचार करना हमारी दृढ़ प्रतिज्ञा है। हमें आशा है कि प्रस्तुत साप्ताहिक पत्रोंमें प्रकाशित लेख पत्रोंके नामको सार्थक करनेवाले होंगे।"

'केसरी' और 'मराठा' नामोंका सार्थक चुनाव

मराठी साप्ताहिक समाचारपत्रका नाम 'केसरी' बड़े सोच विचार कर बाद रखा गया था। जैसे केसरी अर्थात् वनराज सिंह शूर और पराक्रमी होता है तथा अपना श्रेष्ठ पद अपनी बहादुरीसे प्राप्त करता है न कि अन्य हीन चेष्टाओंसे, वैसे ही निर्भीकता, बहादुरी और सत्यप्रियताके साथ जनताकी राय प्रदर्शित कर श्रेष्ठ पद प्राप्त करना 'केसरी' का अुद्देश्य था। अिस नाममें अेक व्यंग्य भी निहित था, वह यह कि जिस प्रकार पराक्रमी सिंह दैववशात् या भूलसे जालमें फँस जाता है, वैसे ही महावैभवशाली, विशाल अेवं पराक्रमी भारतवर्ष भी धोखेसे अँग्रेजोंके दासता-पंकमें फँस गया है। अतअेव वास्तविक गुणोंका परिचय कराकर भारतको अुसी प्रकार पराक्रम करनेके लिअे अुत्तेजित करनेके हेतु पत्रका नाम 'केसरी' रक्खा गया। 'मराठा' का ध्येय था आँग्ल विद्या-विभूषित अेवं अँग्रेज सरकारकी गुलामी करनेवालोंमें पराक्रम-पूर्ण स्वतन्त्र और त्यागयुक्त अतीतके प्रति आदरकी भावना पैदा करना। अिस नाममें प्रान्तीयताकी भावना लेश मात्र भी नहीं थी। समाचार-पत्र का नाम 'मराठा' होनेपर भी अिसकी दृष्टि संकीर्ण और कार्यक्षेत्र प्रान्त विशेषतक सीमित नहीं रहा। अपने कार्यक्षेत्रकी अखिल भारतीय मर्यादा बतलाते हुअे मराठा-सम्पादक अर्थात् तिलकने, प्रथम लेखमें ही यह लिख दिया था कि "हमारे अितिहास प्रसिद्ध-नामको देखकर यदि किसीको अिस बातका भय प्रतीत हो कि हम दूसरोंके प्रदेशपर

आक्रमण करने या छापा मारने लगेंगे, तो अुसकी यह शंका सर्वथा निराधार होगी। 'मराठा' किसी प्रान्त विशेष या जाति विशेषका पक्षपाती नहीं होगा।" अिससे स्पष्ट है कि तिलककी दृष्टि राष्ट्रीयतासे ओतप्रोत थी। भविष्यमें अिन दोनों साप्ताहिक पत्रोंने अपने नाम सार्थक किअे और देशके स्वतन्त्रता-संग्राममें भरसक योग भी दिया।

तिलक और आगरकरने बोझ ढोअे

'केसरी' और 'मराठा' के प्रकाशनके लिअे अेक बेकार और २४०० रुपयोंमें गिरवी रखा हुआ छापाखाना मिला। नियमित समयपर किस्तबन्दीमें अुसकी कीमत अदा करनेकी शर्तपर अुसे खरीदा गया। प्रेस अेक स्थानसे दूसरे स्थानपर ले जाना था। बोझ अुठानेवाले अधिक पैसे माँगने लगे, परन्तु वहाँ सम्पादक-मण्डल निर्धनोंका था। काम तुरन्त करना था। अतअेव तिलक और आगरकर मजदूर बने और अुन्होंने बड़े हर्षसे छापाखानेके टाअिप, केस अपने सिरपर ढोअे। अपने महान और विशाल ध्येयकी पूर्तिके लिअे छोटे-से-छोटा काम करनेमें भी अुन्हें हिचक नहीं मालूम हुअी। सन् १८८१ जनवरीकी ४ तारीखको नियत समय पर 'केसरी' तथा 'मराठा' का प्रकाशन प्रारम्भ हुआ। प्रारम्भिक छह महीनोंमें 'केसरी' की केवल १२०० और 'मराठा' की केवल ५०० प्रतियाँ बिकती थीं। दोनों ही साप्ताहिक घाटेमें थे। बेचारे सम्पादक दूसरा कार्य करके अपनी गुजर-बसर करते थे। ये ध्येयनिष्ठ सम्पादक कंपोज करनेसे लेकर पत्र छप जानेपर अुनपर ग्राहकोंके पते लिखने, टिकट लगाने और अन्ततः पोस्ट बक्समें डालनेतकका सारा कार्य सहर्ष अेवं अुत्साहपूर्वक करते थे। पत्रोंके साहित्यिक, सामाजिक तथा राजनीतिक लेखोंका अभीष्ट प्रभाव भी पड़ने लगा। 'केसरी' की १६०० प्रतियाँ पहले वर्षके अन्ततक बिकने लगीं, परन्तु 'मराठा' की हालतमें विशेष परिवर्तन नहीं दिखा।

प्रथम कारावास

'केसरी' निर्भीक होकर अँग्रेज नौकरशाहीपर अपने तीखे तीक्ष्ण लेखोंका पंजा मारता रहता था और 'मराठा' बाघनख चलाता था। दोनोंके अग्रलेख

परतन्त्रताके किलेको ध्वंस करनेमें सुरंगका कार्य करने लगे। सत्य-प्रतिपादन, और निर्भीक मुँहतोड़ अुत्तर दोनोंकी विशेषता थी। 'केसरी' और 'मराठा' का सम्पादन करनेका अर्थ था आगसे खेलवाड़ करना। अंग्रेज सरकार अुनके लेखोंसे चिढ़-सी गअी। कोल्हापुर रियासतके अंग्रेज पोलिटिकल अेजेंटके अिशारेपर वहाँके दीवानने 'केसरी'–सम्पादक आगरकर और 'मराठा' – सम्पादक तिलक अेवं अुनके अन्य साथियोंपर मानहानिका मुकदमा चला दिया। तिलक और आगरकरने कोल्हापुरके महाराजाके सम्बन्धमें जो कुछ लिखा था वह अक्षरशः सत्य था और अुनके हृदयमें शिवाजी महाराजके वंशजोंके प्रति आदर भी था, किन्तु भयवश जानकारी प्रदान करनेवालोंके मुकर जानेके कारण कोर्टमें वे अपनी सफाअी नहीं दे सके। अुन्होंने निर्भीकतासे बयान दिया कि हम लोगोंने जो कुछ लिखा है वह सत्य है, किन्तु अुसके लिअे हम प्रमाण अुपस्थित करनेमें असमर्थ हैं। फैसलेमें अुन्हें चार मासके कैदकी सादी सजा सुनाअी गअी। दोनोंको डोंगरी किलेके अेक छोटे कमरेमें रक्खा गया। यह घटना सन् १८८२ की है। अिसके पूर्व समस्त भारतमें सामाजिक या राजनीतिक कार्य करने या लिखने बोलनेके अपराधमें कोअी भी नेता अथवा सम्पादक जेल नहीं गया था। बादमें बंगालके सिंह सुरेन्द्रनाथ बैनर्जीपर भी अिसी तरहका मानहानिका मुकदमा सन् १८८३ में चलाया गया और अुन्हें दो मासकी सादी कैदकी सजा दी गअी। हम यह निःसंकोच कह सकते हैं कि भारतमें देश-हितके लिअे कारावासमें जानेकी प्रथाका श्रीगणेश तिलक और आगरकरने किया। अुस समय अुनकी आयु २६ वर्षकी थी। जेलकी व्यवस्था अितनी कष्टप्रद और गन्दी थी कि १०१ दिनोंमें (क्योंकि १९ दिनोंकी छूट मिली थी) तिलकका वजन २६ पौंड और दुर्बल आगरकरका १६ पौंड घटा। किन्तु अुन १०१ दिनों तक दोनों मित्रोंने खूब चिन्तन मनन किया और भावी कार्योंकी योजनाअें बनाअीं मानों सरकारने अुन्हें विश्राम और चिन्तनके लिअे ही जेलमें बन्द किया हो। अिधर 'केसरी' की लोकप्रियता भी खूब बढ़ी। अुसकी ३६०० प्रतियाँ बिकने लगीं। देश-कार्यके लिअे जेल जानेवाले तिलकके प्रति लोगोंके हृदयमें

आदरकी भावना बढ़ गअी और वे अुन्हें नेता मानने लगे। जब वे जेलसे छूटे तब जनताने हजारोंकी संख्यामें जेलके फाटकपर अेकत्र हो अुनका स्वागत किया और पूनाकी अेक विशाल सभामें सार्वजनिक अभिनन्दन भी किया गया।

विष्णु शास्त्री चिपलूणकरकी अकल्पित मृत्यु

१८८२ के मार्चमें अेकाअेक तिलकके लेखन और शिक्षा-क्षेत्रके मार्ग-दर्शक चिपलूणकरकी सन्निपात-ज्वरसे मृत्यु हो गअी। अुनकी आयु केवल ३२ वर्षकी थी। अुनके हृदयमें स्वदेश, स्वधर्म और स्वसंस्कृतिके प्रति अगाध प्रेम था। अुन्होंने शिक्षा-विभागकी सरकारी नौकरी त्यागकर शिक्षा-संस्थाकी स्थापना करने तथा 'केसरी' और 'मराठा' के प्रकाशनमें तिलकका योग्य मार्गदर्शन किया। वे सामाजिक सुधारोंके पूर्व स्वराज्य प्राप्त करना आवश्यक मानते थे। अतअेव समाज-सुधारकोंपर तीव्र वाग्बाण भी फेंकते रहते थे। आपकी आकस्मिक मृत्युसे "केसरी" की अमिट क्षति हुअी। तिलक और आगरकर जैसे अति अुत्साही अेवं अपने मतके पक्के युवकों परसे अेक अनुभवी विद्वानकी छत्रछाया हट गयी। दोनों बहुत शोकाकुल हुअे और अुन्हें भावी आपसी मतभेदोंकी भी छाया दिखलाअी पड़ने लगी।

"केसरी" और समाज-सुधार

सन् १८८४ में बम्बअीके प्रसिद्ध समाज-सुधारक बैरामजी मलबारीने सरकारको अिस आशयका सुझाव भेजा कि बालविवाह प्रथा कानून द्वारा बन्द कर दी जाय और जिन विद्यार्थियोंका विवाह हो गया हो अुन्हें विश्वविद्यालयमें प्रवेश न मिले। कानून भंग करनेवालोंको योग्य दण्ड देनेकी भी सलाह दी गयी। सरकारी दरबारमें मलबारीकी बड़ी प्रतिष्ठा थी। लोगोंको अुनके प्रयत्नोंसे भय लगने लगा। बम्बअीमें विरोधी आन्दोलन छेड़ दिया गया। पूनामें भी वैसी ही हवा बहने लगी। "केसरी" के

सम्पादक-मण्डलकी सभा हुअी। अुसमें बहुमतसे निर्णय किया गया कि समाज-सुधारके कार्योंमें सरकारी हस्तक्षेपका कड़ा विरोध किया जाय। सम्पादक-मण्डलने समाज-सुधारके प्रति अपनी नीति निर्धारित की जिसके अनुसार धीरे-धीरे लोगोंको जाग्रत कर लोगोंकी प्रतिनिधि संस्थाओं द्वारा ही समाज-सुधार करना अुपयुक्त समझा गया। अुसकी रायमें समाजको अपना सुधार स्वयं करना चाहिअे न कि सरकार द्वारा। तिलक बहुमतके निर्णयके समर्थक थे, किन्तु अुनके परम मित्र आगरकर अिसके कट्टर विरोधी थे। अिसलिअे समझौतेके तौरपर निर्णय किया गया कि "केसरी" में अिस सम्बन्धमें जो लेख प्रकाशित हों अुनपर लेखकके नाम दिअे जाअेंगे ताकि लेखोंकी जिम्मेदारी लेखकोंपर रहे और सामान्य पाठकगण "केसरी" की नीतिके बारेमें भ्रममें न पड़ें। यह समझौता मतभेद टालनेके लिअे ही किया गया था किन्तु समझौता केवल मरहमपट्टी मात्र था। आपरेशनका कार्य मरहमपट्टी कैसे करती? दिन प्रतिदिन मतभेद बढ़ता गया और आगरकरने सम्पादक-पदसे त्यागपत्र दे दिया। सन् १८८७ में तिलक "केसरी" के प्रधान सम्पादक बने और अुन्होंने मृत्यु तक (१९२० तक) अुसके सम्पादकका कार्य किया। अिसके पश्चात् "केसरी" की बहुत ही आश्चर्यजनक अुन्नति हुअी। सन् १८८७ में "केसरी" की ४००० प्रतियाँ प्रकाशित होती थीं। सन् १८९३ में अुसकी बिक्री ६००० तक हो गयी और वह महाराष्ट्रका लोकप्रिय पत्र बन गया। सम्पादककी (तिलककी) विद्वत्ताकी अपेक्षा "केसरी" की लोकप्रियता निर्भीक समाज अेवं देश-सेवाके कारण अधिक बढ़ी। तिलक केवल सम्पादक नहीं थे, वे समाज-सेवक तथा देश-सेवक भी थे और अन्यायका प्रतिकार करना अुनकी स्वाभाविक वृत्ति थी; जिसका अच्छा प्रमाण "क्राफर्ड प्रकरण" है।

"क्राफर्ड प्रकरण"

अूँचे अँग्रेज अफसरोंके विरुद्ध जनताकी ओरसे तिलक सदा आन्दोलन चलाते रहते थे। "केसरी" अुनका प्रभावशाली हथियार था। अिस पत्रके

लेखोंके प्रहारसे अँग्रेज अधिकारी और सरकार जर्जरित होते रहते थे। तिलकने क्राफर्ड नामक बम्बअीके अँग्रेज कमिश्नरके खिलाफ सन् १८८८ में आन्दोलन प्रारम्भ किया जो 'क्राफर्ड प्रकरण' के नामसे प्रसिद्ध है। कमिश्नरपर मातहतों द्वारा रिश्वत लेने और लोगोंको बहुत सतानेका आरोप था। वह होशियार था परन्तु अति आलसी भी। 'केसरी' ने अुसकी गति-विधिकी कड़ी आलोचना की। सरकार जाग्रत हुअी और क्राफर्ड तथा अुसके अन्य भारतीय साथियोंपर, जो कि तहसीलदार और मामलतदार थे, रिश्वत लेनेके आरोप लगाअे गअे। आरोपोंकी जाँचके लिअे अेक कमीशन बैठाया गया। कमीशनने क्राफर्डको तो बरी कर दिया, परन्तु अुनके साथियोंको अपराधी ठहराया। तिलकने अिस अन्यायके विरुद्ध 'केसरी' तथा सार्वजनिक सभाओं द्वारा तीव्र आन्दोलन किया। मि० डिग्वी और ब्रेडला आदि ब्रिटिश पार्लमेन्टके सदस्योंसे पत्र-व्यवहार करके अुन्होंने अिस विषयको पार्लमेन्टमें भी अुपस्थित कराया। अिससे अिग्लैण्डमें बहुत खलबली मची। परिणाम यह हुआ कि भारत-सरकारने क्राफर्डको त्याग-पत्र देनेके लिअे विवश किया। तिलककी विजय हुअी। जनताको अैसा अनुभव होने लगा कि तिलक अुसके रक्षक और त्राता हैं।

अब 'केसरी' की बिक्री दुगनी होकर ६००० तक पहुँच गअी। तिलक कांग्रेसमें कार्य करना प्रारम्भ कर त्यागपूर्वक बहुमुखी सामाजिक सेवा करने लगे थे। अुनकी लोकप्रियताके साथ-साथ 'केसरी' की भी अुन्नति होती गअी। सन् १९०० में अुसका प्रकाशन ९००० प्रतियों तक पहुँच गया, क्योंकि सम्पादक तिलक देशके लिअे जेलमें डाल दिअे गअे थे। कारावाससे मुक्त होनेके पश्चात् तिलक 'लोकमान्य' बनकर कांग्रेसमें अुग्रदलके नेता बने। अतअेव सन् १९०५ में 'केसरी' की ११०४० प्रतियाँ बिकने लगीं। 'केसरी' का हिन्दी तथा गुजराती भाषामें भी प्रकाशन प्रारम्भ हुआ, क्योंकि तिलकको अपने अुग्र राजनीतिक मतोंका प्रचार अन्य भाषा-भाषियों तथा प्रान्तोंमें भी करना आवश्यक प्रतीत हुआ। सन् १९०६ में नागपुरसे हिन्दीमें 'केसरी' प्रकाशित होने लगा। हिन्दी 'केसरी' के योग्य सम्पादक द्वय

लब्धप्रतिष्ठ साहित्यिक स्वर्गीय माधवराव सप्रे और काशीके विख्यात कोश-रचयिता अेवं पौढ़ अनुवादक बाबू रामचन्द्र वर्मा थे। अिसी प्रकार गुजराती भाषामें अहमदाबादसे 'केसरी' का प्रकाशन आरम्भ हुआ। लोकमान्यके कारावासमें जानेपर हिन्दी अेवं गुजराती संस्करण का प्रकाशन स्थगित हो गया, परन्तु मराठी 'केसरी' की लोकप्रियता चौगुनी बढ़ी और सन् १९१५ में अुसकी बिक्री ३६००० तक पहुँच गअी। 'केसरी' का प्रचार अितना अधिक बढ़ा कि देहाती लोग 'केसरी' का अर्थ ही समाचारपत्र लगाने लगे। अँग्रेजी 'टाअिम्स आफ अिण्डिया' को भी वे 'केसरी' कहते थे। 'केसरी' ने साहित्यिक दृष्टिसे भी बहुत प्रगति की। 'केसरी' अेक आदर्श पत्र बना जिसका पढ़ना लोगोंकी रुचिका द्योतक हो गया। वह महाराष्ट्रका चलता-फिरता विश्वविद्यालय बन गया। लोकमान्य तिलकने साहित्य-सम्राट न. चि. केलकर, नाटचाचार्य प्र. कृ. खाडिलकर और गीता-वाचस्पति श्री ज. स. करन्दीकर जैसे सव्यसाची साहित्यिकोंको सम्पादन-कौशल सिखाया। वे स्वयं ही केवल यशस्वी सम्पादक नहीं थे, अपितु अनेक यशस्वी सम्पादकोंके निर्माता भी थे। तिलकको 'केसरी' का सम्पादन करते-करते अपने लेखोंके अपराधमें चार बार सजा भुगतनी पड़ी और कुल आठ साल जेलमें काटे। अँग्रेज सरकारको आपके कड़े लेखोंसे कअी बार मुंहकी खानी पड़ी और जनतामें जागृति पैदा हुअी। वास्तवमें तिलक ही भारतीय असन्तोष तथा अराजकताके जनक थे। अपने राजनीतिक दल अेवं कांग्रेसका समर्थन करनेके लिअे अुन्होंने 'केसरी' का अेक तीक्ष्ण शस्त्रकी भाँति अुपयोग किया।

छठा प्रकरण

सहजसुधारक तिलकके विरुद्ध अुग्र सुधारक आगरकर

सिन्धु और ब्रह्मपुत्राका अुद्गम स्थल अेक-दूसरेके बहुत निकट होनेपर भी आगे बढ़नेपर अुनके प्रवाह परस्पर विरुद्ध दिशामें जाते हैं और दोनोंके बीचका अन्तर अधिक बढ़ता जाता है। दोनों भारतवर्षकी पूर्व और पश्चिमकी मर्यादाओंपर बहती हुआी विभिन्न सागरोंमें गिरती हैं। तिलक और आगरकरका भी यही हाल था। कालान्तरमें दोनों ही पृथक्-पृथक् प्रणालियोंके अुग्र प्रतिनिधि बने।

तेजस्वी आगरकरकी जीवनी

गोपालराव आगरकरका जन्म सन् १८५६ में अेक अत्यन्त निर्धन परिवारमें हुआ था। आपके पिता गणेशराव आगरकर निश्चेष्ट व्यक्ति थे परन्तु आपकी माता बड़ी ही चतुर और धर्मपरायणा थीं। अुन्हींने ही अुपदेश देकर आपको अध्ययनके लिअे प्रोत्साहित किया। अँग्रेजी मिडल स्कूलमें शिक्षा प्राप्त करनेके लिअे आप पैदल ६ मील अपने पाँवसे रत्नागिरि जाते थे और शामको वापस आते थे। आपका बुद्धि-वैभव देखकर अध्यापक आपपर बहुत प्रसन्न रहते थे। दुर्भाग्यसे पिताकी मृत्यु हो गआी और आपका अध्ययन भी समाप्त हो गया। अिस समय आप केवल तेरह सालके थे। जीविका चलानेके लिअे आपको अेक अस्पतालमें कम्पाअुन्डरकी नौकरी करनी पड़ी, परन्तु आपकी माता महत्वाकांक्षिणी नारी थीं। अपने पुत्रकी बुद्धिपर अुनका अटूट विश्वास था। अुन्होंने आगरकरको अुनके मामाके यहाँ पढ़ाअीके लिअे अकोला भेज दिया। रावबहादुर महाजनी अेम. अे. अुस समय अकोला हाअी स्कूलके हेडमास्टर थे। बेचारे गोपालराव आगरकर मामाके घर काम करते और पढ़ते थे।

अुनके पास केवल अेक ही कुर्ता था। गंदा होनेपर अुसे रातमें ही धोते और सुखाते थे। अेक बार वर्षाके कारण चार दिनों तक अुसे साफ नहीं कर सके। अेक अध्यापक बिगड़े और कहने लगे कि "गन्दे लड़के, तू अपना जीवन गन्दा करेगा।" विद्यार्थी आगरकरने तत्काल अुत्तर दिया कि "मैं आपकी तरह अेम. अे. पास करूँगा!" यह अुत्तर सुनकर अध्यापक दंग रह गअे। आगे चलकर आगरकरने प्रथम श्रेणीमें मैट्रिक परीक्षा अुत्तीर्ण की और फिर पूनाके डेक्कन कालेजमें प्रविष्ट हुअे। वे टय़ूशन करके कालेजकी पढ़ाअी चलाते थे। आप अेकमात्र निर्धन विद्यार्थी थे, परन्तु स्वाभिमानकी कमी नहीं थी। किसीकी कृपा या अुपकारका ऋण लेना पसन्द नहीं था। बी. अे. प्रथम श्रेणीमें अुत्तीर्ण हुअे और फेलोशिप मिली। सन् १८८० में दर्शनशास्त्रमें अेम. अे. की परीक्षा अुत्तीर्ण की और तिलकके साथ न्यू अिंग्लिश स्कूलमें अध्यापक हुअे। जब आपने अेम. अे. की परीक्षा अुत्तीर्ण की तब बड़ोदाके गायकवाड़ महाराजने आपको ५०० रुपया मासिक वेतनपर बड़ोदा बुलाया, परन्तु आपने अिसे सधन्यवाद अस्वीकार कर दिया तथा तिलकको दिअे हुअे वचनोंका मृत्यु-पर्यन्त पालन किया। आप तिलकसे भी अधिक निर्धन परिवारमें पैदा हुअे, निर्धन रहे और सन् १८९५ में क्षयरोगसे अल्पायुमें ही आपकी मृत्यु हो गअी। तिलकसे तीव्र मतभेद होनेपर आपने सन् १८८७ में 'सुधारक' पत्रका सम्पादन किया और निर्भीकता तथा तर्कके बलपर सामाजिक सुधारोंका समर्थन किया।

त्यागमूर्ति आगरकर

जब आप अेम. अे. अुत्तीर्ण हुअे तब आपने भावुकतासे ओतप्रोत अेक पत्र अपनी माताजीको लिखा। अुसका आशय यह था कि "पूज्य माताजी, आप अैसी आशा करती होंगी कि मैं अब अूँचा सरकारी अधिकारी बनूँगा और सैंकड़ों रुपये वेतन पाअूँगा। मैंने और मेरे लिअे आपने निर्धनताके जितने कष्ट अुठाअे और जितनी यातनाअें सहन कीं अब आप अुनकी समाप्ति देखना चाहती होंगी जो स्वाभाविक भी है, किन्तु मुझे अैसा लगता है कि

सामान्य व्यक्तियोंकी भाँति केवल भोग-अुपभोगके लिअे मैंने अूँची विद्या नहीं सम्पादन की है। मैं खूब धन और अूँचा पद प्राप्त कर सकता हूँ, किन्तु अुनके त्यागमें ही मुझे अधिक सात्विक आनन्द प्राप्त होता है। निर्धन रहकर समाज और देशकी आमरण सेवा करनेकी मैंने दृढ़ प्रतिज्ञा की है। अिस कार्यमें आपका आशीर्वाद चाहता हूँ।" अिस पत्रमें आगरकरके तेजस्वी, त्यागी और कर्मठ जीवनका सार भरा हुआ है।

सर्वांगीण क्रान्तिकारी आगरकर

वे बुद्धिवादी और तर्कवादी थे। अुन्होंने पश्चिमी दर्शन-शास्त्र, समाज-शास्त्र और नीतिशास्त्रका गम्भीर अध्ययन किया था। जान स्टुअर्ट मिल, हर्बर्ट स्पेन्सर, जान मोर्ले अित्यादि पश्चिमी प्रगतिवादी दर्शनशास्त्रियोंके ग्रन्थोंका आपने गहराअीसे मनन किया था जिससे आपके कुछ विचार नास्तिकतासे मिलते-जुलते थे। ग्रन्थ-प्रमाण और परम्परावादको बिलकुल ही नहीं मानते थे। हिन्दू समाजकी कुरीतियों तथा कुप्रथाओंको तत्काल समाप्त करना चाहते थे। सामाजिक, राजनीतिक तथा आर्थिक विषमताको शीघ्र नष्ट-भ्रष्ट करनेके लिअे अुत्सुक थे। अंग्रेज सरकारके तो आप कट्टर विरोधी थे, फिर भी आवश्यकता पड़नेपर समाज-सुधारके कार्योंमें सरकारका हस्तक्षेप अनुचित नहीं मानते थे। अिस सम्बन्धमें आपका और तिलकका मतभेद होना अनिवार्य था। केवल बुद्धि और तर्कके बलपर ही आप रूढियों और धार्मिक प्रथाओंको ध्वंस करना चाहते थे। विधायकताकी अपेक्षा ध्वंसपर आपका अधिक विश्वास था, किन्तु तिलक धीरे-धीरे विधायक कार्यों द्वारा समाज-सुधार करनेके पक्षपाती थे। वे धार्मिक ग्रन्थोंको पूज्य मानकर कुप्रथाओंको दूर करना चाहते थे। आगरकर सामाजिक और धार्मिक क्रान्तिके समर्थक थे तो तिलक राजनीतिक क्रान्तिके। सामाजिक सुधारके सम्बन्धमें तिलकके पाँच बुनियादी सिद्धान्त थे :— (१) परतन्त्र भारतवर्षमें सामाजिक सुधारोंकी अपेक्षा राजनीतिक सुधारों अर्थात् स्वराज्यका महत्व अधिक है, (२) सुशिक्षित लोगोंको राजनीतिक सुधारोंके लिअे पहले सचेष्ट

होना चाहिअे, (३) श्रम-विभाजनकी दृष्टिसे सामाजिक सुधारका आन्दोलन चलानेवाले और राजनीतिक आन्दोलन करनेवाले कार्यकर्ता भिन्न-भिन्न हों, (४) समाज-सुधारकोंको अपने आचरण द्वारा अन्य लोगोंके सम्मुख आदर्श प्रस्तुत करना चाहिअे अर्थात् सामाजिक सुधारकोंकी कथनी और करनी अेक-सी हो और (५) किसी भी सामाजिक सुधारका प्रचार लोक-शिक्षा द्वारा लोगोंके हृदय-परिवर्तन द्वारा होना चाहिअे न कि सरकारी कानूनके बलपर। अंग्रेजी सरकारका समाज-सुधारमें हस्तक्षेप अुन्हें पसन्द नहीं था। तिलक समाज-सुधारको घरेलू मामला मानते थे। वे सदा आगरकरसे कहते थे कि पहले घरपर कब्जा करो अर्थात् स्वतन्त्र हो जाओ फिर घरमें क्या और किस प्रकारके सुधार करना है, अिसके सम्बन्धमें प्रयत्न करो। समाज-सुधारके चक्करमें पड़नेपर आपसी मतभेदके कारण संगठन क्षीण होता है और अंग्रेजोंके खिलाफ लड़नेके लिअे निर्बलता अुपस्थित होती है। अिसलिअे वे राज-नीतिक आन्दोलनोंपर अधिक बल देते थे। वे राजनीतिके क्षेत्रमें क्रान्तिकारी थे, किन्तु सामाजिक सुधारके सम्बन्धमें अुत्क्रान्तिवादी। आगरकर दोनों क्षेत्रमें क्रान्तिकारी थे, किन्तु सामयिकताके वशीभूत हो अुन्होंने सामाजिक कार्य पहले किअे और अल्पायुमें ही मरनेके कारण राजनीतिके क्षेत्रमें कार्य नहीं कर सके।

तिलकका आगरकरसे तीव्र मतभेद हुआ जिससे कुछ लोगोंको भ्रम हुआ कि तिलक सनातनी और सुधार-विरोधी हैं। किन्तु यह बात बिलकुल गलत थी। तिलकने स्वयं सन् १८८९ में पूनाके तुलसी बागकी विराट सभामें तुरन्त कअी समाज-सुधार करनेके लिअे जनतासे अनुरोध किया था, जैसे (१) लड़कीकी शादी सोलहवें वर्षसे पहले न हो। (२) लड़केकी शादी बीस वर्षसे पहले न हो। (३) चालीस वर्षोंके बाद पुरुषका विवाह न हो, यदि हो तो विधवाके साथ। (४) शराबबन्दी हो। (५) दहेजकी प्रथा बन्द की जाय। (६) निजी धनका दसवाँ भाग सामाजिक कार्योंमें दिया जाय और (७) विधवाका मुंडन न हो, अित्यादि। तिलक क्रियाशील सुधारक थे और वे चाहते थे कि हिन्दू-समाज स्वयं अपना सुधार करे। अुन्होंने समय-समयपर सामाजिक

सुधार-परिषदोंमें भी भाग लिया। सुधार सम्बन्धी कानूनोंके विरोधी थे न कि सुधारोंके। अकोलाके हरिजनोंके मोहल्लेमें जाकर अुन्होंने वहाँ पान-सुपारी ग्रहण की थी। वे कर्मसे वर्ण-व्यवस्था मानते थे न कि जन्मसे। "हिन्दू" शब्दकी आपने बड़ी अुदार व्याख्या की थी।

प्रामाण्यबुद्धि वेदेषु। साधनानाम् अनेकता॥
अुपास्यानामनियमः। सः अेव हिंदुरिति स्मृतः॥

तिलक वेदोंको पूज्य ग्रन्थ मानते थे। अुनकी धारणा थी कि पूजा तथा अुपासनाके अनेक प्रकार हो सकते हैं। हिन्दू-धर्म तथा संस्कृतिको समन्वयात्मक मानते थे। अपने धर्ममें निष्ठा रखते हुअे वे अन्य धर्मोंके प्रति सहिष्णुतापूर्ण व्यवहार रखते थे। हिन्दू-धर्म-ग्रन्थों तथा दर्शनशास्त्रका आपने गम्भीर अध्ययन किया था। हिन्दू-समाजकी बुराअियोंसे आप अच्छी तरह परिचित थे और अुनमें सुधार चाहते थे। अुधर हिन्दू-संस्कृतिकी अुदारता और हिन्दू दर्शनशास्त्रकी श्रेष्ठतामें आगरकरजीका विश्वास तो अवश्य था परन्तु वे हिन्दू-समाजकी प्रचलित संकीर्णता, अन्धश्रद्धा, विषमतापूर्ण रचना और अुसमें व्याप्त अनेक कुप्रथाओंको मिटानेके लिअे सदा व्याकुल रहते थे। अिसके लिअे वे कोअी भी मार्ग ग्रहण करनेमें झिझक दिखाना पसन्द नहीं करते थे। परन्तु तिलक लोगोंको साथ लेकर अुनका मत-परिवर्तन कर सुधार करना श्रेयस्कर मानते थे।

सन् १८८७ में तिलक "केसरी"के सम्पादक बने और आगरकरने अपने विविध सामाजिक क्रान्तिकारी विचारोंका प्रचार करनेके लिअे "सुधारक" नामका साप्ताहिक पत्र प्रारम्भ किया। अिसके द्वारा अुन्होंने मराठीके निबन्ध साहित्यको बहुत सम्पन्न बनाया। अुनके सम्पादकीय लेख बहुत कलात्मक होते थे। वे निर्भीकतासे सत्यका प्रतिपादन करते थे। अुनकी रचना ओज-गुण-युक्त और प्रभावशाली होती थी। भाषा अलंकृत और संस्कृत-समास प्रचुर होती थी। अुसमें सर्वांगीण विद्रोहका सन्देश निहित रहता था। आगरकर दृष्टा थे। पैंसठ वर्ष पहले आपने अस्पृश्यता-निवारण, सहशिक्षा

विधवा-विवाह, समाज-सत्तावाद, व्यक्ति-स्वातन्त्र्य, स्त्रियोंके समान अधिकार अित्यादि विषयोंपर मार्मिक अेवं तर्क-पुष्ट विवेचन किया। आप मराठीके श्रेष्ठ निबन्धकार, पत्रकार और साहित्यकार थे। "सुधारक" पत्रमें आपने अपने परम मित्र तिलक और "केसरी" पर कठोर वाग्बाण चलाअे। दूसरी ओरसे भी अैसा ही हुआ। आगरकरका समाजने बहिष्कार भी किया क्योंकि आप क्रान्तिकारी सुधारक थे। आपकी आँखोंके सामने ही आपकी शव-यात्रा निकाली गयी किन्तु आपने र [illegible] क्रोधको पास नहीं फटकने दिया। आपका शरीर सदा दमासे पीड़ित रहता था। घरमें दरिद्रता थी। डाक्टरी अिलाजके लिअे पैसे नहीं थे, किन्तु आपने अपनी टेक निभाअी। अपने ध्येयपर अडिग रहे। अुन्तालीस वर्षकी अल्पायुमें ही आपकी दुःखद मृत्यु हुअी। मरते समय भी आप स्थितप्रज्ञ जैसे निर्विकार थे। आपकी मृत्युपर 'केसरी' में लेख लिखते समय तिलक रो पड़े। वे शोकसे अितने व्याकुल हो गअे कि पाँच घण्टोंमें केवल दो कालम लिख पाअे। अितनी मित्रता और प्रेम होते हुअे भी प्रामाणिक मतभेदके लिअे तिलकने आगरकरजीका सदा विरोध ही किया। प्रेमपर सत्यनिष्ठा और कर्तव्य-बुद्धिने सदा विजय प्राप्त की। अिसमें दोनोंकी ही लोकोत्तर विशेषता है। परन्तु तिलकपर अपने महान् चरित्रसे यदि किसीने प्रभाव डाला तो वे अेकमात्र गोपाल गणेश आगरकर ही थे।

सातवाँ प्रकरण

कांग्रेसका कार्य तथा अन्य विधायक समाज-सेवा

नाभिषेको न संस्कारः सिंहस्य क्रियते वने ।
विक्रमार्जित . स्वयमेव मृगेन्द्रता ।।

भारतकी राष्ट्रीय महासभा अर्थात् कांग्रेस भारतीय राजनीतिमें क्रान्तिकारी विचारोंकी जनक है । अतअेव लोकमान्य तिलक अुससे कैसे अलग रह सकते थे ? कांग्रेसकी स्थापना सन् १८८५ में हुअी । अुसके प्रथम चार अधिवेशनोंमें अुपस्थित होकर भी लोकमान्य तिलकने अुसमें कुछ भी भाग नहीं लिया क्योंकि वे सरकारमान्य कालेजमें प्राध्यापक थे और शिक्षा तथा समाचार-पत्रोंके कार्यमें अत्यन्त व्यस्त थे । अुनकी धारणा थी कि शिक्षा-क्षेत्रमें कार्य करनेवालेको राजनीतिमें भाग नहीं लेना चाहिअे । दूसरा कारण यह था कि तिलक स्वभावसे ही सक्रिय कार्यकर्ता थे । सन् १८८९ में जब कालेजसे अलग हुअे तब आपने कांग्रेसके कार्यमें सक्रिय रूपसे हाथ बढाना प्रारम्भ किया । अिसी वर्ष आप बम्बअीके कांग्रेस-अधिवेशनमें सम्मिलित हुअे । अिस अधिवेशनके लिअे अुन्होंने पूनामें चन्दा अेकत्र किया । अधिवेशन सप्ताहमें 'केसरी' दैनिक पत्र बना और अुसने तहलका मचा दिया । वे कांग्रेस-अधिवेशनमें कौंसिल चुनाव सम्बन्धी अेक प्रस्तावपर बोले और अिस प्रकार कांग्रेस मंचपर पहली बार चमके । कांग्रेसकी प्रान्तीय राजनैतिक परिषद्में भी आप प्रमुख भाग लिया करते थे । अुसके पाँच वार्षिक अधिवेशनोंमें सम्मिलित होकर तिलकने जनतापर अपना प्रभाव डाला । धीरे-धीरे वे महाराष्ट्र प्रान्तीय कांग्रेसके प्रधान-मन्त्री बने । अुनका दौरा प्रान्तके कोने-कोनेमें होने लगा और अपनी लगन तथा कार्य-कुशलतासे वे महाराष्ट्रके प्रिय कांग्रेस-कार्यकर्ता तथा नेता बन गअे । फिर तो

आपका आत्मविश्वास तथा अुत्साह अितना बढ़ा कि आप पूनामें कांग्रेस-अधिवेशन करानेके लिअे व्यग्र हो अुठे । वास्तवमें कांग्रेसकी स्थापनाके समय पहला अधिवेशन (सन् १८८५ के दिसंम्बरमें) पूनामें होनेवाला था, परन्तु वहाँ अेकाअेक हैजेका प्रकोप होनेके कारण बाधा अुपस्थित हो गअी और अधिवेशन बम्बअीमें हुआ । सन् १८८९ में बम्बअी प्रान्तमें कांग्रेस-अधिवेशन करना निश्चित हुआ । तिलक तथा अन्य कार्यकर्ताओंने यह अधिवेशन पूनामें करानेकी भरसक चेष्टा की, परन्तु बम्बअीवालोंके अुत्साह तथा चार्लस ब्राअुलकी अुपस्थितिके कारण अुन्हें अपनी अुत्कट अिच्छा दबानी पड़ी और अधिवेशन बम्बअीमें ही हुआ । तत्पश्चात पूना-निवासियोंने अपने नअे तथा तेजस्वी कार्यकर्ताओंके सहयोगसे राष्ट्रीय महासभाका अधिवेशन सफलतापूर्वक पूनामें करनेकी अुत्सुकता प्रकट की और सन् १८९५ का कांग्रेस-अधिवेशन पूनामें होना निश्चित हुआ ।

पूनामें कांग्रेसका अधिवेशन

प्रान्तीय कांग्रेस कमेटीने तिलकको अिस अवसरपर प्रधान-मन्त्री चुना और अुनकी सहायताके लिअे अन्य दो मन्त्रियोंकी नियुक्ति की । व्यवस्था सब कुछ ठीक हुअी, परन्तु अिसी समय पूनामें मतभेद पैदा हुआ क्योंकि गत सात वर्षोंसे वहाँ अुग्र समाज सुधारक और सौम्य समाज-सुधारकोंमें काफी संघर्ष चल रहा था । बीच-बीचमें अेक तूफान-सा खड़ा हो जाता था । मलबारी सेठका सम्मत्ति वय सम्बन्धी विधेयक और ग्रामण्य प्रकरण, जिसमें तिलकपर भी सनातनियोंने प्रायश्चितके लिअे दबाव डाला, अित्यादि अैसी घटनाअें थीं कि पूनामें दो दल होना स्वाभाविक था । तिलकका दल राजनीतिमें अुग्र विचारका था । वे ही अनायास अुसके नेता बने । 'मुखरस्तत्र हन्यते' न्यायसे अुन्हें लेखों अेवं भाषणों द्वारा अुग्र समाज सुधारकोंका विरोध करना पड़ा । ज्यों-ज्यों अुनकी प्रतिष्ठा बढ़ती गअी त्यों-त्यों अुनके विरोधियोंका विरोध भी तीव्र होता गया । अुधर कांग्रेस-अधिवेशनके साथ अुसी मण्डपमें समाज-सुधार-परिषद्का वार्षिक अधिवेशन

भी गत आठ वर्षोंसे होता चला आ रहा था। पूना तथा अन्य नगरोंके समाज-सुधारकोंने अिस प्रथाके अनुसार यहाँ भी काँग्रेस-मण्डपमें समाज-सुधार-परिषद्के अधिवेशनका आयोजन करना निश्चित किया। पूनाके राजनैतिक सुधारकोंने, जिसके नेता तिलक थे, अिसका विरोध किया। अुनका कहना था कि समाज-सुधार-परिषद्का अधिवेशन काँग्रेसके मण्डपमें न हो। दुर्भाग्यसे काँग्रेस-स्वागत-समितिमें अुनका अल्पमत था। अन्य दो मन्त्री भी अुग्र सुधारवादी थे। अतअेव राष्ट्रीय सभाका मण्डप समाज-सुधार-परिषद्को दिया जाय अथवा नहीं अिस विषयपर विवाद छिड़ा और शहरमें तनातनी बढ़ने लगी। तिलक स्वयं सन्तुलित विचारके थे। अुनकी निजी राय थी कि काँग्रेस-मण्डपमें समाज-सुधार-परिषद्का अधिवेशन न हो क्योंकि वे समाज-सुधारको राजनीतिसे अलग रखना चाहते थे, परन्तु मन्त्रीके नाते अुन्होंने यह निश्चय किया कि अिस समय अपने साथिओंकी परवाह न कर अुग्र सुधार-वादियोंके साथ मिलकर काँग्रेस-अधिवेशनकी तैयारीका कार्य पूर्ण किया जाय। अुन्होंने अिस दृष्टिसे 'केसरी' द्वारा प्रचार भी किया। अुन्होंने काँग्रेसकी महानता तथा प्रतिष्ठाकी रक्षा करनेके लिअे अपने अनुयायिओंका आवाहन किया और अुसका अपेक्षित प्रभाव भी पड़ा। परन्तु अुग्र समाज-सुधारकों और राजनीतिक सुधारकोंमें कहा-सुनी हो गअी। किसीने-किसीके प्रति क्रोधमें अभद्र शब्दोंका व्यवहार किया और तनातनी बढ़ती गअी। परिणाम यह हुआ कि पूनाके सुधारकोंने, जिनके नेता न्यायमूर्ति रानडे तथा स्व. गोपालकृष्ण गोखले थे, काँग्रेस-अधिवेशनके लिअे चन्दा देना-दिलाना बन्द कर दिया और यह कहना शुरू किया कि जबतक तिलक काँग्रेसके मन्त्री हैं तबतक हम सहयोग नहीं देंगे। अुधर राजनैतिक सुधारकोंमें भी अिसकी प्रतिक्रिया हुअी। संघर्षने अुग्र रूप धारण किया और अैसा प्रतीत होने लगा कि काँग्रेस-अधिवेशन भंग होगा, परन्तु तिलकने अपने मनकी महानताका बहुत ही अच्छा परिचय दिया। अुन्होंने अिस अधिवेशनको सफल बनानेके लिअे अेंडीसे चोटी तकका पसीना अेक कर दिया और विरोधियोंको सन्तुष्ट करनेके लिअे मन्त्री-पदका भी परित्याग कर दिया। साथ ही अुन्होंने दूसरे

प्रकारसे सहयोग देकर कांग्रेस-अधिवेशनको सफल बनाया। बंगालके सिंह सुरेन्द्रनाथ बैनर्जीके सभापतित्वमें अधिवेशन निर्विघ्न सम्पन्न हुआ। राष्ट्रीय महासभा समाप्त होते ही तिलकका प्रभाव पूनामें और भी घना हो गया।

सार्वजनिक सभापर अधिकार

अिसी समय अुन्हें पूनाकी सार्वजनिक सभाका नेतृत्व करना पड़ा। अिस संस्थामें अुनके अनुयायिओंका बहुमत हुआ। वास्तवमें यह संस्था समाज-सुधारकों तथा याचनावादिओंकी बपौती थी। न्यायमूर्ति रानडे अुसके प्रमुख संस्थापक तथा आधार-स्तम्भ थे और गत २५ वर्षोंसे अिस संस्थापर अुनका पूरा अधिकार था। अिसके अतिरिक्त वे चाहते थे कि अुनके प्रिय तथा योग्य राजनैतिक शिष्य गोपालकृष्ण गोखले संस्थाके प्रधान-मन्त्री बनें जिससे अुनके दलका अधिकार अक्षुण्ण बना रहे, परन्तु तिलकने बाजी मार ली। समाज-सुधारक निराश हुअे और न्यायमूर्ति रानडे तथा गोखलेने 'डेक्कन सभा' नामक दूसरी संस्थाकी स्थापना की। तिलक नहीं चाहते थे कि अल्प मतवाले संस्थासे अलग हों। वे स्वयं प्रजातान्त्रिक प्रणालीके समर्थक तथा अनुयाअी थे और किसी भी संस्थामें अल्पमतमें रहकर कार्य करनेके लिअे तत्पर थे। अुन्होंने न्यायमूर्ति रानडे तथा स्व. गोखलेसे विनती की कि वे सार्वजनिक सभाका त्यागकर दूसरी संस्थाकी स्थापन न करें क्योंकि अुनका यह कार्य जनताके समक्ष बहुत गलत अुदाहरण अुपस्थित करेगा। न्यायमूर्ति रानडे तथा गोखले स्वयं अँग्रेजी प्रजातान्त्रिक ढंगकी प्रशंसा करते रहते थे, परन्तु अुन्होंने तिलककी यह प्रार्थना स्वीकार नहीं की।

बहुजनोंके नेता

जब तिलकका प्रभाव बढ़ने लगा और अेक-अेककर सब सार्वजनिक संस्थाओंपर वे अनायास अधिकार जमाने लगे, तब नरम दलके नेताओंने अुनके विरुद्ध वातावरण निर्माण करना आरम्भ किया। परन्तु बहुमतके

बलपर लोकमान्यका प्रस्ताव या कार्यक्रम तुरन्त मान्य हो जाता था और नरम दलके नेता मुँह ताकते रह जाते थे। नरम दलके नेताओं अर्थात् भूतपूर्व विचारपति म. गो. रानडे और गो. कृ. गोखलेका प्रान्तीय काँग्रेसमें भी अल्पमत होनेकी सम्भावना थी, अिसलिअे वे तिलकको अपढ़ लोगों का नेता कहकर आलोचना करने लगे और कहने लगे कि तिलक बहुमत (Brute Force) के बलपर बाजी मारते हैं। तिलकने अुन्हें तुरन्त अुचित अुत्तर दिया। अुन्होंने कहा कि जो नेता बहुमतको "ब्रूट फोर्स" अर्थात् पशुबल मानते हैं, वे यथार्थमें नेता ही नहीं; अधिनायक या डिक्टेटर हैं और स्वार्थ अेवं अधिकारसे सम्पन्न होकर लोगोंपर हुकूमत चलाते हैं। आरामसे कुर्सियाँ तोड़नेवाले अिने-गिने सुख-जीवी, स्वार्थरत तथा लोकहित-पराङ्मुख डिग्री होल्डरोंका नेता बनना तिलकको कतअी पसन्द न था। वे राजनीतिके क्षेत्रमें मनोविनोद तथा सामाजिक प्रतिष्ठाके लिअे नहीं आअे थे। वे तो जनताका दु:ख दूर करने और सरकारसे लोहा लेनेपर अुतारू थे। फिर नरम दलसे अुनका मेल कैसे बैठता? तिलकको अुग्रवादी नेता बनानेका श्रेय वास्तवमें नरम दलके नेताओंको ही था। वे स्वयं अपनेको अुग्रदलवादी कभी नहीं कहते थे। वैसे ही विरोधियोंको भी नरमदलीय कहकर नीचा दिखाना या अुनकी आलोचना करना अुन्हें पसन्द न था।

बम्बअी विधान-सभा तथा पूना म्युनिसिपल बोर्डके सदस्य

सन् १८९५ में तिलक पूना म्युनिसिपल बोर्डके लोक-निर्वाचित सदस्य बने। अुन्होंने शहरके स्वास्थ्य और शिक्षाकी ओर विशेष ध्यान दिया। वे स्वयं सुबह अुठकर अपने मोहल्लेकी (वार्डकी) स्वच्छता देखते थे। जनता पर अिससे अुनका अच्छा प्रभाव पड़ा। जनताने यह भली-भाँति जान लिया कि तिलक केवल आफिसकी कुर्सीपर बैठकर हास-परिहासमें समय बिताने-वाले प्रतिनिधि नहीं हैं। परिणाम यह हुआ कि सन् १८९५ में वे बम्बअी धारा-सभाके सदस्य चुने गअे। चुनावमें अुनके विरुद्ध नरम दलने अेक बड़े धनी और मशहूर वकीलको खड़ा किया था किन्तु जनता अर्थात् लोकब-

बोर्डने बहुमतसे तिलकको ही चुना । अुन दिनों बम्बअीकी काअुन्सिलमें केवल आठ ही लोकनिर्वाचित सदस्य रहते थे और सरकार लगभग ५२ सदस्य मनोनीत करती थी । अधिकार और कार्यक्षेत्र भी अति संकुचित और मर्यादित थे । तिलक जैसे तेजस्वी, बुद्धिमान और जनहितपरायण व्यक्तिके लिअे वहाँ कुछ करना-धरना असम्भव था, तो भी वे बड़ा सूक्ष्म अध्ययन कर वार्षिक बजटों (आय-व्यय पत्रकों) की आलोचना करते थे । सरकारसे बड़े पेचीदे और जनहितके प्रश्न पूछते थे । जनताकी दुर्दशाकी ओर सरकारका ध्यान खींचते और जितना हो सकता अुतना जनहितका कार्य अवश्य करते या करवा लेते । तिलकसे पहले किसी भी सदस्यने अितनी निर्भीकता तथा जनहित-दक्षता नहीं बताअी थी । अिन अधिकारहीन धारा-सभाओंको वे कभी-कभी "फार्स" या "प्रहसन" कहते थे, परन्तु कौंसिलमें जाना वे राजनीतिका आवश्यक अंग मानते थे । अिसीलिअे वे स्वयं दो बार कौंसिलमें गअे । ता. २१ जनवरी १८९५ के "केसरी" में निम्नांकित वर्णन मिलता है :--"धारा-सभा अेक प्रकारका मजाक प्रतीत होता है । क्योंकि गत कौंसिलका कार्य कुल ४५ मिनिट ही हुआ । अितने अल्प समयमें ही, लगभग २० प्रश्नोंके अुत्तर और कुछ कागज-पत्रोंकी पढ़ाअी अेवं अेक बिलका मसविदा मंजूर करनेका कार्य सम्पन्न हो गया ! तिलकको अिस बैठकमें केवल तीन प्रश्न पूछनेका मौका मिला और विशेष बात यह थी कि वेही अेक अैसे सदस्य थे जो प्रश्न करनेका साहस कर सके । पार्लमेंटरी पद्धति या विधान-सभा द्वारा देशका भला होनेकी बातपर अुनका कभी विश्वास नहीं रहा । अुन्होंने विधान-सभामें कार्य करनेका कटु अनुभव प्राप्त करनेके पश्चात अपना मुख जन-आन्दोलनकी ओर मोड़ा । क्योंकि वे जनशक्तिको जागृत करना चाहते थे ।

बहुमुखी देश-सेवा

तिलकको जो साधन या अवसर मिला अुसका अुन्होंने अुपयोग किया और अिस प्रकार अुन्होंने राष्ट्रकी बहुमुखी सेवा की । किसी भी सार्वजनिक

संकटके समय वे सहायता करनेके लिअे तुरन्त आगे आते थे। हिन्दू-मुसलमानोंके दंगे, प्लेगका आतंक, अकालकी विभीषिका और अँग्रेज अफसरोंका अत्याचार जैसे दैवी तथा मानवीय संकटोंके समय लोगोंको अपने अेकमात्र त्राता तथा नेता बलवन्तराव तिलक ही दिखलाअी देते थे।

सन् १८९३ में सौराष्ट्रके प्रभासपट्टण नामक स्थानमें हिन्दू-मुसलमानोंका पहला दंगा हुआ। अुसकी प्रतिक्रिया बम्बअीमें भी हुअी। वहाँके हिन्दुओंने प्रभासपट्टनके पीड़ित हिन्दुओंके प्रति हमदर्दी प्रदर्शित की। मुसलमानोंने भी अिसका जवाब वहाँके मुसलमानोंके प्रति सहानुभूति प्रकट करके दिया। बम्बअीमें दोनों समाजके बीच तंगदिली पैदा हुअी। अँग्रेज अधिकारियोंने अिसकी ओर जान-बूझकर ध्यान नहीं दिया। परिणामस्वरूप सन् १८९४ में बम्बअीमें भी भीषण दंगा हुआ। कअी हिन्दू और मुसलमान मारे अेवं काटे गअे। तिलकने पहले ही से अपने पत्र 'केसरी' द्वारा अँग्रेज अफसरोंको सचेत किया था, किन्तु भेद पैदा कर राज चलानेकी अँग्रेजोंकी नीतिके कारण मुसलमानोंको प्रोत्साहन मिला। क्योंकि अुस समय मुसलमानोंकी अपेक्षा हिन्दू राजनीतिमें अधिक जाग्रत थे और सरकार-विरोधी भी थे। यही बात धूलिया, मालेगाँव और पूनामें भी हुअी। जहाँ-तहाँ दंगे होने लगे और अँग्रेज अफसरोंकी छलयुक्त नीतिसे हिन्दुओंको बहुत हानि अुठानी पड़ी। भला तेजस्वी तिलक यह अन्याय कैसे सह सकते थे? अुन्होंने स्वयं पूनामें दंगेके क्षेत्रोंमें घुसकर हिन्दुओंको धैर्य बँधाया और अपने धार्मिक अधिकारपर डटें रहनेकी सलाह दी। तिलक सम्प्रदायवादी नहीं थे, वे हिन्दुओंकी सेवाकर कोअी नेता नहीं बनना चाहते थे, परन्तु अेक स्वाभिमानी और न्यायप्रिय व्यक्ति होनेके कारण हिन्दुओंके प्रति होनेवाले अन्यायोंको वे नहीं सह सकते थे। अन्याय देखते ही अुनका खून खौल अुठता था। अुनका पक्का विश्वास हो गया था कि दंगोंके पीछे अँग्रेज अफसरोंका हाथ है।

दो नअे सार्वजनिक अुत्सव

अन्तमें तिलकने यह निर्णय किया कि हिन्दुओंको अपना संगठन कर बल बढ़ाना चाहिअे और समय आनेपर अुन्हें अपनी रक्षाके लिअे अुसका अुपयोग भी करना चाहिअे। तिलक हिन्दू सभावादी या हिन्दू संगठक नहीं थे, किन्तु समयकी माँग देखकर अुन्होंने हिन्दुओंको संगठित रूपसे 'गणपति अुत्सव' तथा 'महाराजा शिवाजीकी जयन्ती' मनानेकी प्रेरणा दी और अुसमें सफल भी हुअे। 'गणपति-पूजा' जो अब तक घरेलू धार्मिक विधि मात्र थी, अुसे अुन्होंने सार्वजनिक अुत्सवका स्वरूप दिया। अिस अुत्सवमें प्रवचन, व्याख्यान तथा कीर्तन होने लगे और हिन्दुओंमें राष्ट्र, समाज, धर्म तथा संस्कृतिके प्रति श्रद्धा बढ़ने लगी। महाराष्ट्र भरमें अिसका व्यापक प्रचार हुआ जिससे हिन्दुओंमें जागृति पैदा होने लगी। अिसी प्रकार सन् १८९६ में रायगड़पर जहाँ महाराजा शिवाजीका राज्याभिषेक हुआ था, अुनकी पहली जयन्ती बड़े अुत्साहके साथ मनाअी गअी। वहाँ अेक योग्य स्मारक भी बनाया गया। यह अुत्सव भी महाराष्ट्रमें बहुत लोकप्रिय हुआ क्योंकि महाराजा शिवाजी महाराष्ट्रके राष्ट्र देव माने जाते हैं। अिस अुत्सवमें भी अितिहासके आधारसे राजनैतिक विषयोंपर विचार, विवाद और भाषण आदि होते थे। महाराजा शिवाजी स्वराज्यके संस्थापक थे। अुनके आदर्शोंको ग्रहणकर तिलकने जनताको पुनः स्वराज्य प्राप्त करनेके लिअे अुत्तेजित और सचेष्ट किया। तिलककी यह अुत्कट अिच्छा थी कि 'शिव जयन्ती' के समारोहको राष्ट्रीय स्वरूप प्राप्त हो और अुसमें मुसलमान भाअी भी सम्मिलित हों, क्योंकि महाराज शिवाजीने अपने राज्यमें मुसलमानोंके प्रति हिन्दुओंके समान ही व्यवहार किया था तथा अुनके धार्मिक स्थानोंकी रक्षा भी की थी। तिलकके शुद्ध तथा धर्म-निरपेक्ष राष्ट्रीयताके विचार अुनके "क्या शिवाजी राष्ट्रीय वीर नहीं थे ?" लेखसे स्पष्ट होते हैं। अुन्होंने लिखा था कि मानवी स्वभावमें वीर पूजा गहरी जड़ जमाअे हुअे है। हमारी राष्ट्रीय आकांक्षाओंको अुन सब शक्तियोंकी आवश्यकता है, जो वीर-पूजासे स्फुरित होती हैं। अिस अुद्देश्यकी सिद्धिके लिअे भारतीय अितिहासमें

केवल शिवाजी ही अेक अैसे वीर मिलेंगे। शिवाजी अुस समय पैदा हुअे थे जब सारा देश दुशासनसे अपना छुटकारा चाहता था। अुन्होंने अपने कार्योंसे यह दिखला दिया कि भारतवर्ष विधाता द्वारा अुपेक्षित नहीं है। यह बात सच है कि अुस समय मुसलमान और हिन्दू विभक्त हो रहे थे और शिवाजीको, जोकि अिस्लाम धर्मका आदर करते थे, मुगल शासनके विरुद्ध लड़ना पड़ा था। मुगल शासन लोगोंके लिअे असह्य हो गया था। पर अिसका यह अर्थ नहीं कि अब हिन्दू और मुसलमान, जो दोनों ही शक्तिहीन हो गअे हैं, और जो आज समान नियमों और कानूनोंके द्वारा शासित हो रहे हैं, अपने समयमें अत्याचारके खिलाफ खड़े होनेवाले वीर शिवाजीको अपना राष्ट्रीय वीर स्वीकार न करें। हम यह नहीं कहते कि शिवाजीकी कार्य-पद्धति भी स्वीकार की जाय। शिवाजीकी पद्धतिको अंगीकार करनेका यह समय नहीं है, परन्तु अुसका तत्व ग्रहण करना अनुपयुक्त न होगा।"

× × × ×

अुन्होंने यह भी कहा, "शिवाजी अुत्सव मुसलमानोंका दिल दुखानेके लिअे नहीं किया जा रहा है। समय बदल गया है और राजनैतिक स्थितिको देखते हुअे हिन्दू तथा मुसलमान अेक ही नावपर सवार हैं तथा अेक ही प्लेटफार्मपर खड़े हैं। क्या हम शिवाजीके जीवनसे कुछ प्रेरणा नहीं ग्रहण कर सकते? यही अेक सवाल है, जिसके निर्णयकी जरूरत है। अगर अिसका जवाब 'हाँ' है तो फिर अिसका कोअी महत्व नहीं कि शिवाजीका जन्म महाराष्ट्रमें हुआ था। बंगालके 'बंगाली' और 'अमृतबाजार पत्रिका' जैसे दो सुप्रसिद्ध पत्रोंने भी अिसी मतका अनुमोदन किया है। हम अकबर तथा अितिहासके पुराने किसी अन्य वीरका अुत्सव जारी करनेके विरोधी नहीं है। अुन अुत्सवोंका भी कुछ मूल्य होगा। 'शिवाजी-अुत्सव' का समस्त देशके लिअे--विशेष मूल्य है। हरअेक मनुष्यको यह देखना चाहिअे कि अिस अुत्सवकी अुपेक्षा न हो तथा अिसे कोअी असत्य रूपमें न ग्रहण करे। प्रत्येक वीर, चाहे हिन्दू हो या युरोपियन, समयके अनुसार काम करता है। अगर अिस तत्वको ध्यानमें

रखकर हम शिवाजीके जीवनको देखेंगे तो अुसमें अपवादजनक कोअी बात नहीं मिलेगी। परन्तु हमें अिस सम्बन्धमें बहुत गहरे अुतरनेकी आवश्यकता नहीं। हमें तो केवल अितना ही कहना है कि अिस समय शिवाजीको अुनके कार्योंके कारण नहीं, वरन भावोंके कारण राष्ट्रीय वीर मानना चाहिअे।"

× × ×

"देशकी परिस्थितिके अनुसार शिवाजीका जन्म हुआ था और शिवाजी महाराष्ट्रमें जन्मे थे। पर भावी नेता हिन्दुस्तानमें कहाँ जन्मेगा, अिसका कोअी ठिकाना नहीं। क्या आश्चर्य अगर यह भावी नेता मुसलमान हो। यही अिस प्रश्नकी ठीक व्याख्या है।"

अिस प्रकारके धार्मिक तथा अैतिहासिक अुत्सवों द्वारा सामयिक राजनैतिक आन्दोलन और जागृतिको प्रोत्साहन देनेका अुन्होंने सफल प्रयास किया। ब्रिटेनके मशहूर वक्ता तथा राजनीतिक लेखक बर्कने अपने "रिफ्लेक्शन्स ऑन फ्रेंच रिवोल्यूशन" "फ्रान्सकी राज्य-क्रान्तिपर मेरे विचार" नामक ग्रन्थमें राजनीतिके नेताका प्रमुख लक्षण यह बताया है कि वह "सामयिक परिस्थितियोंसे अधिक-से-अधिक लाभ अुठाता चले।" यदि तिलकको अिस सिद्धान्तकी कसौटीपर कसा जाय तो वे जनताके सच्चे नेता सिद्ध होंगे।

अकालमें कार्य

सन् १८९६ में महाराष्ट्रमें भीषण अकाल पड़ा। लगातार दो वर्षों तक वर्षा नहीं हुअी। जनता त्रस्त थी। तिलकने 'केसरी' द्वारा अकाल-पीडितोंकी सहायताके लिअे आन्दोलन किया। वे ग्राम-ग्राममें सार्वजनिक सभाअें करते, कार्यकर्ता भेजकर लोगोंकी अन्नादि द्वारा सहायता करते, अुन्हें संगठित होकर परस्पर सहायता करनेका अुपदेश देते, स्थान-स्थानपर सस्ते अनाजकी दूकानें खुलवाते तथा स्वयं गाँव-गाँवमें घूमकर अनाजका बटवारा करते या सस्ते अनाजकी दूकानोंमें तौलनेका कार्य करते थे। सरकारकी अक्षम्य अुदासीनताकी तीव्र आलोचना कर वे गवर्नरके पास 'सार्वजनिक सभाका' अेक प्रतिनिधि-मण्डल ले गअे और 'फेमिन बोर्ड' में सुधार करनेके

लिअे अुन्हें बाध्य किया। अिस प्रकार अकाल-पीड़ितोंकी सहायताके लिअे अुन्होंने कुछ भी अुठा नहीं रखा।

प्लेग में कार्य

अभी अकालसे छुटकारा नहीं मिला था कि अगले वर्ष सन् १८९७ में सारे महाराष्ट्रमें जोरका प्लेग फैल गया। शायद भारतमें यह पहला प्लेग था। लोगोंको अिसका पता नहीं था कि अिससे बचनेके लिअे क्या करना चाहिअे। लोकमान्य तिलक स्वयं गरीबोंके घर जाकर दवा-पानी देते, शुश्रूषा करते, शव ढोते और दिन-रात जन-सेवामें रत रहते। अुन्हीं दिनों अुनका बड़ा लड़का केशव जिसकी अवस्था १५ वर्षकी थी और जो सचमुच होनहार था, प्लेगका शिकार हुआ तथा अुसकी दुःखद मृत्यु हो गअी। परन्तु वे विचलित न हुअे। अुन्होंने धैर्यके साथ कहा "सार्वजनिक होलिकामें मेरी भी गोबरीका जलना स्वाभाविक था।" अुन्होंने अुस दिन "केसरी" का सम्पादकीय लेख भी लिखा। अैसे स्वार्थ-त्याग, स्थितप्रज्ञता तथा निस्वार्थ-सेवाकी मूर्ति लोकमान्य ही हो सकते थे। प्लेगके आतंकसे ग्रसित असहाय गरीब जनताकी सेवामें वे अितने निमग्न थे कि अुन्हें अपने घरकी परवाह ही नहीं थी। समस्त पूना नगर अुनका घर बन गया था। सरकारने प्लेगका फैलाव रोकनेके लिअे "क्वारण्टीन" बैठाअी और लोगोंको घरोंसे निकालनेके लिअे पुलिसके अतिरिक्त गोरे सैनिकोंसे भी काम लिया। ये पुलिस और सैनिक ग्रामीण जनताके साथ दुर्व्यवहार करते थे। अुनसे अैंठनेके लिअे नाना प्रकारसे सताते थे। अुनका सामान और घरेलू चीजें बेमतलब फेंक देते और घरोंमें घुसकर चोरी करते थे। कहीं-कहीं तो स्त्रियोंसे छेड़छाड़ करनेकी भी शिकायतें सुनी गअी थीं। जनतामें अत्याचारी सरकारी अधिकारियोंके विरुद्ध अितनी तीव्र घृणाकी भावना फैली कि श्री चाफेकर नामके अेक क्रान्तिकारी युवकने प्लेग-कमेटीके चेअरमैन मि० रैण्डका खून कर डाला। सर्वत्र सनसनी फैल गअी। कअी निरपराधी युवकोंको जेलमें बन्दकर दिया गया। अकारण जनतापर आक्रमण होने लगे। नागरिकोंके

अधिकारोंका अपहरण किया गया तथा पूनामें भयसे श्मशान जैसी शान्तिका वातावरण छा गया। भारतवर्षमें यह पहली राजनीतिक हत्या थी। पूनामें जहाँ-तहाँ सैनिकोंका डेरा लगा दिया गया। तिलकने भयोत्पीड़ित अेवं त्रस्त जनताकी ओरसे सरकारी अत्याचारोंकी बड़ी निर्भीकतासे तीव्र आलोचना तथा भर्त्सना की। लोगोंको धीरज बँधाकर अुन्हें वैधानिक ढंगसे आन्दोलन करनेके लिअे प्रोत्साहित किया। वे संभल गअे और सरकारी अफसर भी होशमें आअे। तिलक भयग्रस्त निहत्थी जनताके त्राता बने। अुन्होंने लोगोंके हृदयमें सम्मानका स्थान प्राप्त किया। वे अपनी जानको खतरेमें डालकर जनताकी सहायता करते और अँग्रेज सरकारसे लोहा लेते थे। वे जितने लोकप्रिय हुअे अुतने ही सरकारके अप्रिय भी बने। सरकारकी आँखोंमें अुनका नेतृत्व काँटोंकी तरह चुभने लगा। वह अुनके धैर्य, साहस तथा निर्भीकताको कैसे सह सकती थी।

आठवाँ प्रकरण

राजद्रोही लोकमान्य तिलक

"My position among the people depends upon my character and if I am cowed down by the prosecution, living here is as good as living in the Andamans. I think in me they will not find a *katchha* reed."

Tilak' s letter to Motilal Ghosh

फर्ग्युसन कालेजसे त्यागपत्र देनेके बाद तिलकने अँग्रेज सरकारकी शासन नीतिकी ओर दृष्टिपात किया और शासन-नीतिकी मूलगामी सूक्ष्म गति-विधियोंका अध्ययन कर 'केसरी' के सम्पादकीय लेखोंमें अुसकी सप्रमाण आलोचना प्रकाशित करना प्रारम्भ की। प्रारम्भमें हिन्दू मुसलमानोंके दंगे सम्बन्धी सरकारकी पक्षपातपूर्ण नीतिका रहस्य प्रकट कर आपने अिस दुष्ट नीतिसे बचनेकी भारतीयोंको समुचित चेतावनी दी। तत्पश्चात् आपने 'केसरी' द्वारा 'अकाल-निवारक-आन्दोलन' चलाया। आपने अपने लेखों द्वारा अकाल-ग्रस्त किसानोंको सलाह दी कि वे सामुदायिक माँग द्वारा जमीनके लगानमें छूट करानेका प्रयत्न करें। अुधर आपने सरकारकी अकाल-निवारक नीतिकी भी कड़ी आलोचना कर कुछ विधायक सूचनाअें दीं। बम्बअीके 'टाअिम्स' पत्रने तिलकके अिस आन्दोलनको 'नो रेन्ट कम्पेन' अर्थात् 'लगान बन्दीका आन्दोलन' कहकर सरकारको तिलकके प्रति सावधान रहनेका संकेत किया। अिस समाचार-पत्रको तिलक 'आयरिश लीग' के सम्पादक बै. पार्नेलके समान प्रतीत हुअे। सन् १८९६ के अकाल-आन्दोलनमें ही तिलकपर अभियोग लगाअे जानेकी सम्भावना थी, परन्तु वह टल गअी। फिर प्लेगके समय सर-कारकी असहनीय कारवाअियोंको लेकर सरकारके साथ तिलककी भारी

भिड़न्त हुअी । तिलकने अपने सम्पादकीय लेखों द्वारा सरकारकी नीतिकी तीव्र आलोचना की, परन्तु समयकी गति पहचानकर अुसने सब बरदाश्त कर लिया ।

सरकार जानती थी कि अिस सम्बन्धमें वह अधिक दोषी है और यदि किसी प्रकार यह सिद्ध हो गया कि प्रजा भूखके कारण मर रही है तो अुसकी बदनामी हुअे बिना न रहेगी । अुसने यह भली भाँति जान लिया था कि यह नया नेता तिलक हमारा शत्रु है और हमारे मर्मस्थान पर अचूक आघात करनेमें निपुण है । तिलकका नाम अँग्रेज सरकारकी काली बही (ब्लेक रजिस्टर) में लिखा गया जो अुनकी मृत्यु तक बराबर बना रहा । अकालके बाद ही रैण्ड साहबकी हत्या हुअी थी । अिसी समय तिलकने सरकारी दमनका कड़ा विरोध किया और सरकारको सावधान करनेके लिअे "राज्य करनेका अर्थ लोगोंसे भयानक बदला लेना नहीं" शीर्षक तर्कयुक्त तथा अत्यन्त प्रभावकारी सम्पादकीय लेख भी लिखा । अिसके पश्चात् तिलकने "क्या अँग्रेज सरकार पागल बनी है ?" नामक अेक दूसरा व्यंग्यपूर्ण सम्पादकीय लेख 'केसरी' में लिखा । जब तिलक जैसा विद्वान्, नीतिमान् और लोकप्रिय नेता अैसे वाग्बाण फेंकने लगा तब सरकारको गहरी चोट लगी । सरकारका रोष धधकने लगा । अैसे समयमेंही तिलकने 'शिव-जयन्ती-अुत्सव' में अेक बड़ा मार्मिक और प्रभावशाली भाषण दे डाला । वे स्वयं वकील थे और कानूनी बारीकियोंसे भली भाँति परिचित थे । अपने भाषणमें अनेकानेक अुदाहरण देकर अुन्होंने सरकारके राक्षसी दमनकी भर्त्सना की और अुसे अिस बातकी भी चेतावनी दी कि वह शासनका कार्य कानूनी ढंगसे चलाये । अुन्होंने सरकारको मदोन्मत्त पागल हाथीसे अुपमा दी जो अुन्मत्त होकर जनताके प्राणों तथा वित्तका ध्वंस कर रहा हो । अिस भाषणने जलेपर नमक छिड़कनेका काम किया । अिधर जनतामें धैर्य और चेतना अुत्पन्न हुअी तो अुधर सरकार आग-बबूला हो गअी । तिलकके लेखों और भाषणोंका अंग्रेजीमें अनुवाद पढ़कर ब्रिटिश पार्लमेन्टके साम्राज्यवादी सदस्योंने अुनके सम्बन्धमें "क्या यह राजद्रोह नहीं है ?" प्रश्न पूछा ।

अन्ततोगत्वा भारत सरकारने ता. २७ जुलाअी १८९७ को दफा १२४ अ के अनुसार तिलकको कैद किया। अुस समय तिलक कार्यवश बम्बअीमें ही थे। अेक अुच्च अंग्रेज अधिकारी कअी सैनिकोंको साथ लेकर रातके ग्यारह बजे तिलकको गिरफ्तार करने पहुँचा और अुन्हें जेलमें बन्द कर दिया गया।

राजद्रोहका अभियोग

दूसरे दिन सेशन कोर्टमें तिलकपर राजद्रोहके अपराधका अभियोग आरम्भ हुआ। लगभग तीन हजार लोग अभियोग सुननेके लिअे अेकत्र थे। तिलक ५० हजारकी जमानतपर रिहा किअे गअे। कोर्टके बाहर आते ही जनताने अुनका अभूतपूर्व स्वागत किया। सैकड़ों मालाअें पहनाअी गअीं। 'जय-जयकार'के नारे लगाअे गअे। सरकारने भली भाँति जान लिया कि तिलक लोगोंके सच्चे नेता हैं। अभियोग अेक महीने बाद फिर चालू होनेवाला था अिसलिअे अिस बीच तिलक पूना चले गअे।

डिफेन्स फण्ड (बचाव-निधि)

अिस समय तिलक अितने लोकप्रिय हो गअे थे कि जनताने स्वेच्छासे अुनके मुकदमेकी पैरवीके लिअे ५० हजार रुपयोंका 'डिफेन्स फण्ड' अेकत्र किया। अिसमें बंगाल प्रान्तका भी हिस्सा था। बैरिस्टर दावर जैसे बम्बअीके सुविख्यात वकील तिलककी ओरसे पैरवी कर रहे थे। जनताने अिस समय स्वेच्छापूर्वक जो आर्थिक सहायता प्रदानकी अुसके लिअे तिलकने अुसके प्रति हार्दिक कृतज्ञता प्रकट की। तिलककी आर्थिक स्थिति बहुत ही साधारण थी। कालेजसे त्यागपत्र देनेके पश्चात् अपने जीवन-यापनके लिअे आपने अेक निजी ला क्लास चलाया था। अुसके प्राध्यापक यशस्वी और लोक-प्रिय विद्वान् होनेके कारण ला क्लासकी अितनी तरक्की हुअी कि अन्य तीन-चार सहायक प्राध्यापकोंकी नियुक्ति अनिवार्य हो गअी। तिलक हिन्दू ला पढ़ाते थे। कुल खर्च निकालकर अुन्हें १५० रुपया प्रति मास बचता था। 'केसरी' सम्पादककी हैसियतसे अुन्हें कुछ भी नहीं मिलता

था। परिवारका खर्च प्रति वर्ष बढ़ता जा रहा था। नेता बन जानेपर वह और भी अधिक बढ़ा। कुछ मित्रोंकी सलाह और सहायतासे अुन्होंने लातुरमें अेक काटन फैक्टरीकी स्थापना की। अिसमें अुनका हिस्सा अेक तिहाअी था, परन्तु सार्वजनिक कामोंमें व्यस्त रहनेके कारण अुनका वहाँ पहुँचना भी सम्भव न था। अतः, वहाँसे प्राप्तिकी भी आशा नहीं थी। अिस अनिश्चित आर्थिक दशामें ही अुनपर मुकदमेकी विपत्ति आ पड़ी, किन्तु विपत्तिमें फँसानेवाला और सहायता करनेवाला परमेश्वर अेक ही होता है। अुसीने जनता जनार्दनको तिलककी सहायता करनेके लिअे प्रेरित किया।

बाबू मोतीलाल घोषको तेजस्वी अुत्तर

कलकत्ताके प्रसिद्ध समाचार-पत्र 'अमृतबाजार पत्रिका' के यशस्वी सम्पादक बाबू मोतीलाल घोषने अपने मित्र तथा व्यवसाअी-बन्धु तिलकसे प्रार्थना की कि वे सरकारसे माफी माँगकर अपनेको मुक्त करा लें। तिलककी जेल सम्बन्धी कठिनाअियाँ सुनकर घोष बाबूको दुख हुआ था और मित्र-प्रेमके वशीभूत होकर ही अुन्होंने वह सुझाव दिया था। परन्तु भूख लगनेपर भी क्या सिंह घास खाता है? मानी पुरुषोंके लिअे तो मानहानि मृत्युसे भी अधिक दुःखद होती है। गीतामें भगवानने कहा है "संभावितस्यचाकीर्तिमरणा-दतिरिच्यते।" तिलक मानधन पुरुष थे। अुन्होंने घोष महाशयको अुत्तर दिया कि "मेरी सामाजिक प्रतिष्ठा मेरे आचरणपर निर्भर है। यदि मैं अभियोगसे भयभीत होकर हार मान लेता हूँ और फिर देशमें रहता हूँ तो मेरा यहाँ रहना अन्दमानमें रहनेके बराबर ही होगा। मैं कच्चे गुरुका चेला नहीं हूँ। अंग्रेज सरकारको भी अनुभव करना पड़ेगा कि मैं पक्के गुरुका अत्यन्त पक्का चेला हूँ।"

'राजद्रोह' और डेढ़ सालकी सख्त सजा

सितम्बर मासमें मुकदमा पुनः चलने लगा और सरकारकी ओरसे अेडवोकेट जनरलने कहा कि "अिस बातको सिद्ध करनेकी कोअी आवश्यकता

नहीं प्रतीत होती कि 'केसरी' के लेखों द्वारा किसी व्यक्तिके मनमें अंग्रेज सरकारके प्रति सक्रिय घृणा पैदा हुअी क्योंकि केवल अुसकी सम्भावनासे ही हमारा काम चल सकता है। तिलक अेक प्रतिष्ठित सम्पादक हैं। 'केसरी' की सात हजार प्रतियाँ बिकती हैं। केवल बम्बअीमें अुसकी नौ-सौ प्रतियाँ आती हैं। अिससे स्पष्ट है कि 'केसरी' पत्र कितना लोकप्रिय तथा प्रभावशाली है। अैसे पत्रके सम्पादकीय लेखोंका प्रभाव अुसके पाठकोंपर पड़े बिना नहीं रह सकता। 'केसरी' अंग्रेज सरकारको 'विदेशी' कहता है और कहता है कि जनता सरकारके अन्यायके कारण त्रस्त है। तिलकने अिसीलिअे 'शिवाजी अुत्सव'को राजनीतिक स्वरूप दिया है और अुसके बहाने अंग्रेज सरकारके प्रति जनतामें घृणा पैदा करनेकी भरसक चेष्टा की है। अंग्रेजी राज्यमें रहनेवाले प्रत्येक भारतवासीके हृदयमें सरकारके प्रति असन्तोष पैदा कर 'केसरी' खोया हुआ स्वराज्य पुनः प्राप्त करनेके लिअे जनताको अुभाड़ता भी है। अिसलिअे राजद्रोहके अपराधमें तिलकको अुचित दण्ड मिलना परमावश्यक है।" बैरिस्टर दावरने तिलककी पैरवी की; परन्तु व्यर्थ। अन्ततोगत्वा नौ ज्यूरिओंमेंसे छै ने तिलकको राजद्रोही घोषित किया और विचारपति स्ट्रेचीने अुसे स्वीकार किया। अिसके पश्चात् न्यायमूर्तिने तिलकको कुछ कहनेकी आज्ञा दी। तिलक शान्त चित्तसे खड़े हुअे। अुनके अुद्‌गार सुननेके लिअे दर्शक अत्यन्त अुत्सुक थे। कोर्टमें सन्नाटा छाया था। तिलकने गम्भीरतासे कहा कि "यद्यपि ज्यूरीने मुझे दोषी सिद्ध किया है तो भी मैं अपने आपको निर्दोष ही समझता हूँ। मैंने ये लेख राजद्रोहके अुद्देश्यको सामने रखकर नहीं लिखे थे और मैं समझता हूँ कि अुनका प्रभाव राजद्रोह अुत्पन्न करनेमें सहायक न होगा। मेरे लेखोंमें प्रयुक्त शब्दोंका सही अर्थ करनेके लिअे सरकारकी ओरसे ही मराठी भाषाके किसी विद्वानको बुलाना चाहिअे था जो नहीं हुआ।" तिलककी दलीलें न्यायमूर्ति स्ट्रेचीको कैसे जँच सकती थीं। अुन्होंने तो डेढ़ वर्षकी सश्रम कारावास-सजा सुना ही दी। अपना निर्णय सुनाते हुअे विचारपतिने यह भी कहा कि तिलकने प्लेगके समय जो अथक लोक-सेवाकी अुसके लिअे मैं अुनकी प्रशंसा करता

हूँ, किन्तु राजद्रोहके अपराधसे वे मुक्त नहीं किअे जा सकते। तिलकने बड़े धैर्यसे सजाका हुक्म सुना। अुनके कअी मित्र तथा अनुयाअी पसीज अुठे, परन्तु वे टससे-मस न हुअे क्योंकि वे अिसके लिअे पहलेसे ही तत्पर थे।

तिलकके मित्रोंने लंदनकी प्रिवी कौन्सिलमें अपील दायर की। वहाँ अुदारदलके नेता मि. आस्क्विथने तिलककी पैरवी की। न्यायमूर्ति स्ट्रेचीने अपने जजमेन्टमें कहा था कि तिलकने जनतामें अँग्रेज सरकारके प्रति घृणा पैदा की, "Disaffection means lack of affection which amounts to lack of loyalty." "घृणाका अर्थ प्रेम अर्थात् राज्यनिष्ठाका अभाव है।" न्यायमूर्ति स्ट्रेचीने तिलकपर राजद्रोहका अपराध स्वयं येनकेन प्रकारेण मढ़ा। अिस अपीलका महत्व अिस दृष्टिसे भी था कि अिण्डियन पिनल कोडकी दफ़ा १२४ अ को स्पष्ट करनेका यह पहला अवसर लंदनकी प्रिवी कौन्सिलके समक्ष अुपस्थित हुआ। बॅ. आस्क्विथने बड़ी बुद्धिमानीसे पैरवी प्रारम्भ की, परन्तु प्रिवी कौंसिलके विचारपति अुस समय अिस बड़े अुत्तरदायित्वके भारको वहन करनेके लिअे तैयार न थे। किसी भी मार्गसे वे पिण्ड छुड़ानेकी सोचने लगे। न्यायमूर्तिगण अैसे कार्योंमें बहुत निपुण होते हैं। अुन्होंने कुछ देरतक बॅ. आस्क्विथका कथन सुना और अेक कानूनी शंका अुपस्थित कर दी कि अपील प्रिवी कौंसिलमें मंजूर हो सकती है या नहीं। सरकारी वकीलने अुनका अुद्देश्य ताड़ लिया और प्रार्थना की कि तिलककी अपील प्रिवी कौंसिल मंजूर न करे। अपने विचारके समर्थनमें अुसने कअी दलीलें भी पेश कीं। अन्ततोगत्वा न्यायमूर्तिओंकी मनचाही हुअी और अपील नामंजूर कर दी गअी। कुछ भी हो तिलकके अिस मुकदमेने अुस समय अैतिहासिक स्वरूप धारण किया था। अिसीलिअे डा० पट्टाभि सीतारामय्याने कॉंग्रेसके अितिहासमें लिखा है कि तिलककी वजहसे अिण्डियन पिनल कोडकी दफा १२४ अ तथा १५३ अ में विस्तार किया गया ताकि राजद्रोहके अभियोगका क्षेत्र व्यापक बने। अुन्होंने लिखा है कि "Because of him sections 124 A and 153 A were added to the Penal Code so as to amplify the scope of

the offences" तिलकको तुरन्त ही येरवड़ा-सेन्ट्रल जेलमें भेजा गया। वहाँ बारह महीनोंमें अुनका वजन ३० रतल घटा। अुस समयका कारावास-जीवन अत्यन्त कष्टप्रद था अिसलिअे वे शरीरसे क्षीण हुअे किन्तु मनसे अधिक बलवान बने।

अँग्रेज महापंडित प्रो० मेक्समूलरकी सहानुभूति

तिलककी सजाका समाचार सुनते ही प्राच्यविद्या पंडित प्रो० मेक्स-मूलरको अति दुःख हुआ। तिलकपर अुनकी प्रगाढ़ निष्ठा थी। अुनकी विद्वत्ताका वे बहुत आदर करते थे। अुन्होंने ब्रिटिश और भारत सरकारसे तिलककी रिहाअीके लिअे अनुरोध किया। आवेदन-पत्रपर कअी अँग्रेज तथा भारतीय विद्वानोंके हस्ताक्षर थे जिनमें प्रो० मेक्समूलरके अतिरिक्त सर लुअीत्यम हार, सर रिचार्ड गर्थ, विलियम केन, दादाभाअी नौरोजी तथा रमेशचन्द्र दत्त आदि मुख्य थे। हस्ताक्षर करनेवाले समस्त अँग्रेज महापंडित तिलकके 'ओरायन' अर्थात् 'वेदकाल निर्णय' नामके ग्रंथसे बहुत प्रभावित थे। अिस आवेदन-पत्रपर अेक वर्ष पश्चात् भारत सरकारने अपना अनुकूल मत प्रकट किया।

कांग्रेसमें आदर प्रदर्शन

सन् १८९७ के दिसम्बरमें कांग्रेसका अधिवेशन अमरावतीमें हुआ। सरकारने तिलकके प्रति जो अत्याचार किया था अुसकी अध्यक्ष सर शंकरन् नायरने कड़ी निन्दा की। बंगालके सिंह सुरेन्द्रनाथ बैनर्जीने भी अपने प्रभावशाली भाषणोंमें तिलकके प्रति सम्मान प्रदर्शित करते हुअे सरकारकी कड़ी आलोचना की। अुन्होंने अत्यन्त व्यग्रचित्तसे यहाँ तक कहा कि "मेरा शरीर यहाँ है, परन्तु मेरी आत्मा यरवदा जेलमें है।" कांग्रेस-अधिवेशनमें तिलककी 'जयजयकार' हुअी और सरकारी नीतिकी घोर भर्त्सना की गअी। अिसके पूर्व किसी भी भारतीय नेताकी 'जयजयकार' कांग्रेस-मण्डपमें नहीं हुअी थी।

लन्दनकी 'ओरिअेन्टल असोसिअेशन' के प्रयत्नोंके कारण, जिसके अध्यक्ष प्रकांड पंडित प्रो० मेक्समूलर थे, तिलकको सजाकी पूरी अवधिसे छै मास पूर्व ही मुक्त कर दिया गया, परन्तु सरकारने अपनी टेकपर दृढ़ रहते हुअे अुनकी छै मासकी सश्रम सजा मुलतबी रखी। अग्निसे तपकर स्वर्णके समान अधिक शुद्ध अेवं तेजस्वी होकर तिलक जेलसे बाहर आअे। जनताने अुनका हार्दिक अेवं भव्य स्वागत किया। हजारोंकी सभाओंमें तिलकका जहाँ-तहाँ अभिनन्दन होने लगा। 'जयजयकार'से आकाश गूंज अुठा। अुनपर फूलोंकी वर्षा हुअी और किसीने अुन्हें स्फूर्तिवश 'लोकमान्य' कहकर गौरवान्वित किया। यह विशेषण यथार्थ होनेके कारण लोकप्रिय भी बन गया और तिलक सचमुच लोकमान्य सिद्ध हुअे।

नवाँ प्रकरण

काँग्रेसमें अुग्रदलके नेता

"Ever since 1896 Tilak was trying to induce the Congress to show a little more grit."

History of I. N Congress.

लोकमान्य तिलक जब १८९७ में जेल गअे, तब बम्बअी धारा-सभा तथा पूना म्युनिसिपल बोर्डके प्रमुख सदस्य तथा सार्वजनिक सभा अेवं प्रान्तीय काँग्रेस कमिटीके सेक्रेटरी भी थे। वे कारावाससे क्षीण शरीर लेकर मुक्त हुअे, फिर भी पुनश्च "हरि: ॐ" करके पहलेसे भी अधिक अुत्साहके साथ "केसरी" का सम्पादन करने लगे और काँग्रेसके कार्यमें भी अुनका सहयोग अधिक बढ़ गया। "केसरी" की बिक्री अितनी बढ़ी कि तिलकको बड़ा छापाखाना खरीदना पड़ा। काँग्रेस कार्यकर्ताओंमें नअी चेतना अुत्पन्न हुअी। कुछ महीनों बाद सन् १८९८ में काँग्रेसके मद्रास-अधिवेशनमें लोकमान्य तिलकके अध्यक्षीय मंचपर पदार्पण करते ही सभी दर्शकोंने अुनका करतल ध्वनिसे स्वागत किया। काँग्रेसके सभापतिने भी अुन्हें "लोकमान्य" कहकर काँग्रेसकी ओरसे स्वागत किया। लोकमान्यने भी गद्‌गद् कण्ठसे जनता-जनार्दनकी वन्दना की। जनता नअे नेताकी खोजमें थी। नरमदलवालोंकी वैधानिक नीति बेकार सिद्ध हो चुकी थी। लोकमान्यने यह बात अच्छी तरह समझ ली थी और वे काँग्रेसमें अपना बहुमत बनानेके प्रयत्नमें संलग्न थे। बहुमतके बलपर प्रजातान्त्रिक ढंगसे वे काँग्रेसपर कब्जा करना चाहते थे। यही समयकी माँग थी क्योंकि घमंडी लार्ड कर्जन, भारतके बड़े लाट अर्थात् गवर्नर जनरल बनकर आ चुके थे। वे भारत भूमिपर श्मसान-सी शान्ति स्थापित करना चाहते थे। नव अंकुरित राष्ट्र-चेतनाको समूल नष्ट करना अुनका ध्येय था। अुनकी यह प्रबल धारणा थी कि

भारतवर्षमें सब कुछ कठोर शासनके बलपर हो सकेगा। अैसे विषम समयमें लोकमान्य जैसे लौह नेताकी परम आवश्यकता थी। भारतकी भावी राजनैतिक दलबन्दीका बीज तो पूनामें सन् १८९६ की सार्वजनिक सभामें ही बोया जा चुका था। न्यायमूर्ति रानडेके राजनीतिक प्रशिष्य गो. कृ. गोखले और काँग्रेसके प्रायः सभी पुराने नेता, जैसे सुरेन्द्रनाथ बैनर्जी, मेहता, वाच्छा अित्यादि लोकमान्य तिलकको अुग्र राजनीतिक लोकनेता कहकर अुनसे मतभेद रखते थे। लोकमान्य तिलक काँग्रेसमें अपना अुग्रदल बलशाली बनानेमें जुट गअे। वे कट्टर अनुशासनवादी थे। अपने सिद्धान्तोंपर अुनका पूरा विश्वास था। चन्द वर्षोंमें ही काँग्रेसमें अपना बहुमत बना लेनेकी दृढ़ आशासे प्रोत्साहित होकर वे तन-मन-धनसे काँग्रेसके कार्यमें जुट गअे और अनेक बार अपने प्रयत्नोंमें असफल होनेपर भी विचलित नही हुअे।

सन् १८९९ में काँग्रेसका अधिवेशन लखनअूमें हुआ। सर रमेशचन्द्र दत्त सभापति थे। गोखले, फिरोज़ शाह मेहता, सुरेन्द्रनाथ बैनर्जी, वाच्छा आदि नरमदलके नेता सदलबल वहाँ अुपस्थित थे। लोकमान्य तिलक भी अपने चन्द साथियोंके साथ पहुँचे। लोकमान्य तिलकने बम्बअीके गवर्नर लार्ड सैंडहर्स्टके राजशासनकी भर्त्सना तथा कड़ी आलोचना करनेवाला प्रस्ताव प्रस्तुत किया, क्योंकि अुनके शासनकालमें महाराष्ट्रमें प्लेग तथा अकालका प्रकोप हुआ और सरकारी जुल्मोंके कारण जनता त्रस्त हुअी। नरमदलके अध्यक्षने अिस प्रस्तावको अुपस्थित नहीं होने दिया, क्योंकि सरकारके अत्याचारोंकी भर्त्सना करनेका वे साहस नहीं रखते थे। लोकमान्य तिलकने बहुत समझाया अेवं वादविवाद भी किया, किन्तु अुस समय काँग्रेसमें अुनका दल अल्पमतमें था अिसलिअे असफल रहे। काँग्रेसके अितिहासमें डा. पट्टाभि सीतारामय्याने लिखा है: "In 1899 Lokmanya wanted to move a resolution condemning the regime of Lord Sandhurst. A storm of opposition was raised. He challanged the delegates to prove that his regime had not been ruinous. He quoted misdeeds of bureaucracy but

the president threatened his resignation." लोकमान्यकी दलीलोंसे नरमदलवाले विरोधी भी अवाक् हो गअे, परन्तु सभापतिकी त्यागपत्र देनेकी धमकीने तिलकको स्तब्ध कर दिया।

चार महीनोंके बाद सातारामें महाराष्ट्र प्रान्तीय काँग्रेसका अधिवेशन हुआ। वहाँ भी नरमदलके रथी-महारथी गोखले, मेहता, वाच्छा और सेटलवाड़ आदि सदलबल पहुँचे। अुनका हेतु लोकमान्य तिलकको परास्त करना था। लोकमान्य तिलक भी सदलबल पहुँच गअे। अुग्रदलकी शक्ति दिन-प्रति-दिन बढ़ रही थी। विषय-निर्धारिणी समितिमें तिलककी हार हुअी, किन्तु खुले अधिवेशनमें स्वयं लोकमान्यने बम्बअीके गवर्नरकी भर्त्सना करनेवाला प्रस्ताव प्रभावशाली भाषणके साथ प्रस्तुत किया। काफी देरतक विवाद हुआ और अन्ततोगत्वा प्रस्ताव भारी बहुमतसे स्वीकृत हुआ। नरमदलके प्रमुख नेता फिरोज शाह मेहताने अिस प्रस्तावका कड़ा विरोध किया था। लोकमान्य तिलककी 'जयजयकार' हुअी और यहींसे काँग्रेसमें नरमदलकी हारका श्रीगणेश आरम्भ हुआ। धीरे-धीरे तिलकका प्रभाव बढ़ा और महाराष्ट्रमें नरमदल फीका पड़ा।

सन् १९०० में काँग्रेसका अधिवेशन लाहौरमें हुआ। लोकमान्य तिलक सदलबल वहाँ पहुँचे। अध्यक्षने अुन्हें अपने पास मंचपर बैठाया। जिस प्रकार मद्रास-अधिवेशनमें अुनकी 'जयजयकार' हुअी थी, वैसे ही यहाँ भी हुअी। अिस समय काँग्रेसके संस्थापक और भूतपूर्व अध्यक्ष दादाभाअी नौरोजी, वेडरवर्न तथा ह्यूम अित्यादिने काँग्रेसको बड़े प्रेरक सन्देश भेजे थे। अुन्होंने काँग्रेसको कुछ सक्रिय आन्दोलन चलानेकी सलाह दी थी जिससे अुन्हें विलायतमें भारतके सम्बन्धमें कुछ कार्य करनेके लिअे बल प्राप्त हो। लोकमान्य तिलकने अिन मुनित्रयके विचारोंका हार्दिक अभिनन्दन किया और काँग्रेसको सक्रिय तथा बलवती बनानेके लिअे बहुमतके नरम-दलवादी नेताओंसे अत्यन्त करुणार्द्र प्रार्थना की, परन्तु अुन्होंने अुनकी बात नहीं सुनी। लोकमान्य विचलित नहीं हुअे। अुन्हें यह पक्का आत्मविश्वास था कि बहुमतके बलपर अेक दिन वे कांग्रेसपर प्रभाव स्थापित कर लेंगे।

केवल धारासभामें विरोध करनेसे न बनेगा

सन् १९०१ के प्रारम्भमें बम्बअीकी धारा-सभामें सरकारने जमीन महसूल सम्बन्धी अेक विधेयक अुपस्थित किया, जिसके अनुसार जमीन मालिक कर्जके बदलेमें साहूकारको अपनी जमीन नहीं बेंच सकता था। सरकारका कहना था कि जमीन बेंचकर या गिरवी रखकर छोटे-छोटे जमीदार कर्ज लेते हैं और अन्ततोगत्वा अुनके कर्जका बोझ बढ़ता ही जाता है। यह कानून बढ़ती हुअी कर्जदारीको रोकनेके लिअे पेश किया गया है। अिसका परिणाम यह होता कि महाजन लोग छोटे-छोटे जमींदारोंको कर्ज नहीं देते और अुनकी (जमींदारोंकी) हालत अत्यन्त गअी-बीती हो जाती। अुधर सरकारने को-आपरेटिव सोसायटीज स्थापित कर अुनके द्वारा छोटे-छोटे जमीदारोंको कर्ज देनेकी भी कोअी व्यवस्था नहीं की। मि. वेडर्नवर्न और दिनशा वाच्छा जैसे कांग्रेसके भूतपूर्व सभापतियों तथा अर्थ-शास्त्रियोंने सरकारसे निवेदन किया कि पहले को-आपरेटिव सोसायटीज द्वारा कर्ज देनेका प्रबन्ध किया जाय, फिर अैसा कानून बने, परन्तु सरकारने अपनी नीति परिवर्तित करनेसे साफ अिन्कार कर दिया। मि. वाच्छाकी (जो लोकमान्य तिलकके विरोधी थे) आँखें खुलीं। अुन्होंने बम्बअीमें विराट् सभाका आयोजन किया जिसमें नरमदलके सिरमौर फिरोजशाह मेहताने भी सरकारी नीतिकी आलोचना कर सरकारसे प्रार्थना की कि वह अुस कानूनको अुपस्थित न करे। मि. दिनशा वाच्छा, सर फिरोज शाह मेहता, स्व गोपाल-कृष्ण गोखले आदि नरमदलके प्रमुख नेता अिन दिनों बम्बअी-धारासभाके सदस्य थे। अुन्होंने अपनी प्रभावकारी वाग्मितासे अिस कानूनका कड़ा विरोध किया, परन्तु सरकार अपने निश्चयपर अटल रही। अन्ततोगत्वा अपना विरोध प्रदर्शित करनेके लिअे नेताओंने कौन्सिल-हालका परित्याग किया। लोकमान्य तिलकने अिस साहसपूर्ण विरोधका सम्पादकीय लेखमें हार्दिक अभि-नन्दन किया। आपने अिस कानूनको 'मर्ज रोकनेकी अकसीर दवा मृत्यु' कहकर मजाक अुड़ाअी और सरकार को-आपरेटिव सोसायटीजकी स्थापना करनेकी

विधायक सूचना भी दी। अन्य नेताओंके समान आपने भी सार्वजनिक सभामें अिसका विरोध किया, परन्तु व्यर्थ। अन्तमें आप अिस निष्कर्ष पर पहुँचे कि जनताकी शक्ति जाग्रत किअे बिना सरकार अपनी मनमानी नीतिसे विचलित नहीं होगी। आपने अनेक अैतिहासिक तथ्योंके आधारपर नरमदलके नेताओंसे निवेदन किया कि वे केवल धारासभामें विरोध करनेपर अत्यधिक जोर न दें वरन् कॉंग्रसके द्वारा जनताका बल जागृत कर प्रभावशाली संगठनका निर्माण करें। फिर भी नरमदलके बुद्धिमान नेता तिलकके मार्गदर्शन पर चलनेके लिअे तैयार नहीं हुअे।

आदर्श मृत्यु-लेख

अिसी समय या अिसके कुछ आगे-पीछे, प्रकाण्ड पश्चिमी विद्वान प्रोफेसर मेक्समूलर (जिनको तिलक भट्ट मोक्षमूलर कहते थे), विख्यात पश्चिमी दार्शनिक हर्बर्ट स्पेन्सर तथा न्यायमूर्ति म. गो. रानडेकी शोचनीय मृत्यु हुअी। तिलकने अुनके सम्बन्धमे हृदयद्रावक संवेदनासूचक लेख लिखे। अुन्होंनें अिन मनीषियोंका अनुकरण कर भारतकी विचार तथा ज्ञान-परम्परामें वृद्धि करनेका भारतीय नव शिक्षितोंको अुपदेश दिया। न्या. रानडेके प्रति आपने हार्दिक श्रद्धांजलि अर्पित की और अुनको भारतका महान राजनीतिक तथा सामाजिक विचारक अेवं सुधारक कहकर गौरवान्वित किया। अिन लेखोंमें मतभेदकी बू छू तक नहीं गयी थी। तिलकका कहना था कि मतोंकी अपेक्षा व्यक्तिके स्वार्थ-त्याग तथा प्रत्यक्ष आचरणसे ही अुसके बड़प्पनको पहचानना चाहिअे। अिस अुदार अेवं सहिष्णुतापूर्ण सिद्धान्तके आधारपर ही वे लिखते और आचरण करते थे। सन् १९०१ में कॉंग्रेसका अधिवेशन कलकत्तामें हुआ। नरमदलके नेता श्री दिनशा वाच्छा सभापति थे। अिस समय महामना पं. मदनमोहन मालवीयने शिक्षा-कमीशन सम्बन्धी अेक प्रस्ताव प्रस्तुत किया जिसमें सरकारी नीतिकी भर्त्सना और आलोचना की गअी थी, क्योंकि नअे शिक्षा-कमीशनमें अेक भी भारतीय नहीं था। लोकमान्य तिलकने बड़ा तर्कयुक्त अेवं प्रभावशाली

भाषण देकर अिस प्रस्तावका समर्थन किया । अुन्होंने जापान, अमेरिका तथा ब्रिटेनकी शिक्षा-प्रणालियोंसे भारतकी निकम्मी शिक्षा-प्रणालीकी मार्मिक तुलना कर भारत सरकारको अुचित सुधार करनेके लिअे आह्वान किया । अुनका भाषण बड़ी शान्तिके साथ सुना गया । सन् १९०२ और १९०३ के काँग्रेस-अधिवेशनोंमें कअी अनिवार्य कारणोंसे वे अनुपस्थित रहे, किन्तु काँग्रेसकी सेवा निष्ठापूर्वक करते रहे ।

बिरल गुण-प्रशंसा

सन् १९०२ की जनवरीमें पूना-विश्वविद्यालयके वर्तमान कुलपति, श्री रघुनाथ पुरुषोत्तम परांजपे केंब्रिज-विश्वविद्यालयसे सीनियर रेंगलर होकर पूना लौटे । आपने गणितकी सबसे अुच्च परीक्षा प्रथम श्रेणीमें अुत्तीर्ण की थी । आप पहले भारतीय विद्यार्थी थे जिसने कैंब्रिजमें अितना अूंचा स्थान प्राप्त किया था । लोकमान्य तिलकने सम्पादकीय लेखमें आपका स्वागत किया । अितना ही नहीं वे स्वयं युवक रैंगलरके घर गअे और अुनकी प्रशंसा की । तिलक स्वयं गणितज्ञ थे अतः अेक भारतीय विद्यार्थीके यशसे अुनका हृदय अुमड़ पड़ा । प्रायः अैसा देखा जाता है कि "गुणी च गुणरागी च सरलः विरलः भवति ।" अिसलिअे लोकमान्य तिलक विरल गुण प्रशंसा करनेवाले अुदार हृदय महान् पुरुष थे । भविष्यमें अुनका अुक्त व्यवहार सचमुच सार्थक सिद्ध हुआ, क्योंकि रैं. परांजपे भी अुनके विरोधी बने ।

अपने सम्पादकीय लेखोंमें तिलक बार-बार नरमदलकी अति वैधानिक नीतिकी तीव्र आलोचना करते थे । अठारह वर्षोंसे काँग्रेस प्रस्ताव स्वीकृत करती चली आ रही थी । सरकारसे प्रार्थना करती थी, अनुरोध करती थी और प्रतिनिधि-मण्डल भेजती थी, परन्तु जहाँ सहयोग करती वहाँ भी सरकारपर अुसका कोअी असर नहीं पड़ता । सरकारी नीतिमें कोअी परिवर्तन दिखाअी नहीं देता था । भारतीय जनताको नअे राजनैतिक अधिकार भी नहीं दिअे जाते थे । काँग्रेसकी मामूली माँगें भी अस्वीकृत कर दी जाती थीं ।

संक्षेपमें काँग्रेस अँग्रेज सरकारके चरण छूने जाती तो सरकार घमण्डसे अुसे ठुकरा देती। तिलकका कहना था कि अब अिस नीतिका परित्याग कर काँग्रेसको कुछ ठोस कार्य करनेके लिअे तत्पर हो जाना चाहिअे। अुनके लेखोंका प्रभाव पड़ रहा था और नरमदलकी नीति चन्द दिनोंमें ही समाप्त होनेवाली थी। भारतमें जहाँ-तहाँ अुग्रदल अंकुरित हो रहा था। लोकमान्य तिलक अैसे समयकी ही राह देख रहे थे।

काँग्रेसके दल-संस्थापककी चेतावनी

सन् १९०४ में काँग्रेसका अधिवेशन बम्बअीमें हुआ। स्वागताध्यक्ष थे बम्बअीके सिंह श्री फिरोज शाह मेहता और सभापति थे सर हेनरी काटन जो काँग्रेसके संस्थापकोंमें अेक थे। अध्यक्षने बड़ी व्याकुलतासे कहा :—

"Years ago I called on you to be up and doing. Years ago I warned you that nations by themselves are made. Have you heeded these counsels?" अर्थात् "वर्षों पहले मैंने आपको जागृत और सक्रिय बननेको कहा था। मैंने वर्षों पहले चेतावनी दी थी कि कोअी भी राष्ट्र अपना निर्माण स्वयं करता है। क्या आपने स्वावलम्बी और आत्मनिर्भर बननेके सम्बन्धमें मेरी सूचनापर ध्यान दिया ?" अुन्होंने यह भी कहा कि नरमदलकी निष्क्रिय तथा दुर्बल नीतिके कारण काँग्रेस निष्प्रभ अेवं दुर्बल बनी है। नरमदलको यह आलोचना खटकी। अुनके नेता बेचैन हुअे। स्वागताध्यक्ष फिरोज शाह मेहताने बड़े ही प्रभावशाली भाषणमें नरमदलकी नीतिका समर्थन किया, परन्तु व्यर्थ। स्वागताध्यक्षके विचार अध्यक्षके विरुद्ध थे। बड़ा ही आकर्षक दृश्य था। सर हेनरी काटनके विचारोंसे लोकमान्य सहमत थे। अुन्हें अैसा प्रतीत हुआ मानों काटन साहब अुन्हींके विचार प्रकट कर रहे हों।

काँग्रेसमें संघर्षका प्रारम्भ

लोकमान्य तिलकने सभापतिके विचारोंका समर्थन किया और कहा कि भारत जैसे परतन्त्र देशमें राजनीति पुष्पोंकी शय्या नहीं है। वर्षमें

अेक बार दिसम्बरके अन्तिम सप्ताहमें अिकट्ठा होकर कुछ भाषण देना और कुछ प्रस्ताव स्वीकारकर नम्रतापूर्वक अँग्रेज सरकारसे अनुरोध करना ही काँग्रेसका कार्यक्षेत्र नहीं होना चाहिअे। काँग्रेसका अधिवेशन बड़े-बड़े बैरिस्टर, वकील और सुखजीवी लोगोंका अड्डा बन गया है जो जनताके दु:खोंके प्रति अुदासीन हैं। काँग्रेसका कार्य तो निरन्तर किसी-न-किसी रूपमें चलता रहना चाहिअे। अध्यक्ष सर हेनरी काटनकी सूचना थी कि काँग्रेसको भारतवर्ष तथा विलायतमें वैधानिक आन्दोलन प्रारम्भ करना चाहिअे जिससे जनता सदा जागृत रहे और जनताकी आशा-आकांक्षाओंके प्रति दोनों सरकारोंका ध्यान आकर्षित हो। लोकमान्यने अिस सुझावका समर्थन किया, किन्तु नरमदलका गढ़ होनेके कारण बम्बअीमें किसी प्रकारकी योजना नहीं बनाअी जा सकी। लोकमान्य निराश नहीं हुअे। लाला लाजपतरायने अिसी अधिवेशनमें काँग्रेसका विधान बनानेका प्रस्ताव रखा, क्योंकि अब तक काँग्रेसका कोअी विधान ही नहीं था। लालाजीने प्रस्ताव प्रस्तुत किया और लोकमान्यने अुसका हार्दिक अनुमोदन किया। बम्बअीके सिंह फिरोज शाह और पंजाबके सिंह लालाजीमें झड़प हुअी जिससे वातावरण गरम हो गया तथा लालाजीको अपना प्रस्ताव वापस लेना पड़ा। अिस समयसे काँग्रेसमें विधिवत् संघर्ष प्रारम्भ हुआ। प्रतिवर्ष तिलकका प्रभाव बढ़ता गया। विरोधियोंपर भी अुनका प्रभाव पड़ा। सर तेजबहादुर सप्रूने अिस समय लोकमान्य तिलकके सम्बन्धमें कहा था कि "अुनमें राजनीतिज्ञकी असामान्य योग्यता है। अुनकी देशभक्ति, अुनका साहस तथा अुनके व्यक्ति-निरपेक्ष विचार अतुलनीय हैं और अिसीलिअे विरोधियोंके मनमें भी अुनके प्रति आदरभाव रहता है।" लोकमान्य समयसे बीस वर्ष आगे थे। वे दूरदृष्टा थे और राजनीतिके क्षेत्रमें आत्मनिर्भर होकर काँग्रेसमें आगे बढ़ रहे थे।

नरमदल और अुग्रदलकी नीतिमें मूल-भेद

अब तक काँग्रेस पर नरमदलवादियोंका पूरा अधिकार था, वे ब्रिटिश शासनको अीश्वरकी देन मानते थे किन्तु अुग्रदलके संस्थापक लोकमान्य

तिलकने असे अस्वाभाविक बताया। नरमदलवादी ब्रिटिश शासनकी शान्ति, व्यवस्था अेवं पाश्चात्य संस्कृति आदिसे अत्यन्त प्रभावित थे, किन्तु अुग्रदल-वादी अुसके लाभोंको स्वीकार करते हुअे भी भारतके राष्ट्रीय चरित्र और सभ्यतापर पड़नेवाले अुसके कुप्रभावोंकी ओर विशेष रूपसे सजग थे और अपने अतीत गौरवका स्मरण कर जनताके नैसर्गिक अधिकारोंकी माँग प्रस्तुत कर रहे थे। नरम राजनीतिज्ञोंकी राय थी कि अिंग्लैण्डमें प्रतिनिधि-मण्डल भेजकर कानूनकी मर्यादामें पत्रोंमें हलचल मचाकर प्रस्तावों अेवं व्याख्यानों आदि द्वारा अँग्रेज सरकारकी मनोवृत्तिमें अनुकूल परिवर्तन किया जा सकता है। वे धीरे-धीरे राजनीतिक सुधारोंकी प्राप्तिमें भी विश्वास रखते थे। अिसके विरुद्ध अुग्रदलवादी स्वावलम्बनके पक्षमें थे। वे विदेशी नौकर-शाहीपर जनताका दबाव डालकर औपनिवेशिक स्वराज्य (होम रूल) प्राप्त करना चाहते थे। आवश्यकतानुसार यह दल सरकारका शान्तिपूर्वक विरोध भी करना चाहता था। अुसका मूलमन्त्र स्वावलम्बन था। लोकमान्य तिलकके मतानुसार अुद्देश्यके कारण नहीं, वरन् अुसकी प्राप्तिके मार्गोंके कारण अुनके दलको अुग्रवादियोंकी अुपाधि मिली थी। अुग्र राजनीतिज्ञ लोकमान्य तिलक और नरमदलके नेताओंकी नीतिमें यही मूलभूत अन्तर था.

वंग-भंगका आन्दोलन

लार्ड कर्जन भारतमें अिस प्रतिज्ञाके साथ राज्य-कार्य चला रहे थे कि अुनके प्रयत्नों द्वारा अँग्रेजी सत्ता सदा अक्षुण्ण बनी रहेगी। किसी प्रकारकी जागृति अथवा राजनीतिक आन्दोलन अुन्हें असह्य थे। सन् १९०५ की जनवरीमें बम्बअी-काँग्रेसके मनोनीत सभापति सर हेनरी काटनने अुनसे मिलनेकी तिथि तथा समय निर्धारित करनेकी प्रार्थना की। अध्यक्षके नाते वे अुनके सम्मुख काँग्रेसकी माँग अुपस्थित करना चाहते थे, किन्तु साम्राज्यवादी कर्जनने अुनकी प्रार्थना ठुकरा दी और कहा कि "काँग्रेसका सभापति गवर्नर जनरलके बंगलेके कम्पाअुण्डमें भी प्रवेश करने योग्य नहीं है।" "I shall not allow him to cross the fringe of my

bungalow." भारतकी राष्ट्रीय जागृतिको बुरी तरहसे कुचलनेके लिअे अुन्होंने बंग-भंगकी कूटनीतिक योजना तैयार की। बंगाल प्रान्तमें राष्ट्रीय जागृति दिन-पर-दिन बढ़ रही थी। अँग्रेजी शिक्षाका पर्याप्त प्रचार होने और पश्चिमी देशोंके अितिहास पढ़नेसे शिक्षित लोगोंमें समानता, स्वतन्त्रता तथा विश्वबन्धुत्व अित्यादिके अुच्च तत्वोंके प्रति आदर अेवं निष्ठा अुत्पन्न हो गअी थी। वहाँसे लोग काँग्रेसमें अधिकाधिक संख्यामें सम्मिलित हुअे। बंगालमें सभाओं तथा पत्रोंके सम्पादकीय लेखोंमें सरकारी व्यवस्थाकी बड़ी कड़ी आलोचना होने लगी। अिधर बम्बअीके अधिवेशनमें अध्यक्ष सर हेनरी काटन और लोकमान्य तिलकने काँग्रेसको कुछ-न-कुछ सक्रिय कार्य करनेके लिअे चेतावनी दी। अिस सूचनाका बंगालके प्रतिनिधियोंने सहर्ष स्वागत किया। अैसा दिखाअी देने लगा कि बंगाल प्रान्त भारतीय राजनैतिक आन्दोलनका अगुवा बनेगा। कर्जनने बंग-भंगकी कुल्हाड़ी बंगाल पर चलाअी और कहा कि शासनकी सुविधाकी दृष्टिसे बंगाल प्रान्त दो हिस्सोंमें बाँटा जा रहा है। असम और चार पूर्वी जिले मिलाकर पूर्वी बंगाल बनाया गया और शेषका पश्चिमी बंगाल। अुनका वास्तविक अुद्देश्य यह था कि पूर्व बंगालमें मुसलमानोंकी बहुसंख्या होनेसे वह प्रान्त राजनैतिक जागृतिमें पिछड़ा रहे और मुसलमान अँग्रेजोंके प्रति राज्यनिष्ठ बने रहें। अिस प्रकार मुसलमानोंके हाथोंमें पूर्वी बंगाल जानेपर हिन्दू और मुसलमानोंमें सदा संघर्ष चलता रहता और अुनकी राजनीतिक अेकता अशक्य हो जाती। कर्जनने देशमें हिन्दू-मुसलमानोंमें फूट पैदा कर शासन चलाने अेवं भारतीय राष्ट्रीय नवचेतनाको क्षति पहुँचानेके अुद्देश्यसे ही सन् १९०५ के जुलाअी मासमें बंगभंगकी विषैली योजना कार्यान्वित की। अुनके अिस कार्यने बंग-भूमिके हृदयपर तलवारके जख्मका काम किया। समस्त बंग प्रदेश क्षुब्ध हो अुठा। जातीय अभिमान जागृत हुआ। जैसे साँप पुरानी केंचुल फेंक देनेसे अतीव चंचल और फुर्तीला हो जाता है, वैसे ही बंगभंगकी कुल्हाड़ीके आघातसे बंगभूमिमें चेतना तथा देशभक्तिका स्रोत बहने लगा। सारा बंग-प्रदेश विरोधमें अुठ खड़ा हुआ। बंगालके प्रमुख पत्र 'अमृतबाजार पत्रिका' ने

अिस समाचारको मोटी काली रेखाओंके बीच मृत्यु समाचारके समान प्रकाशित किया। विद्यार्थी, शिक्षक, किसान, जमीदार, अशिक्षित तथा सुशिक्षित सभीने अिस जहरीली योजनाका तीव्र विरोध किया।

अेक राष्ट्रीयताकी भावनाका सूत्रपात

लोकमान्य तिलकने अपने समाचार-पत्र 'केसरी' द्वारा बंग-भाअियोंके प्रति सम्वेदना प्रकट की और अिस योजनाका सक्रिय विरोध करनेके लिअे अुन्हें प्रोत्साहित भी किया। अुन्होंने लार्ड कर्जनकी कुटिल नीतिकी तीव्र निन्दा कर 'बंगभंग' का निर्णय कार्यान्वित न करनेकी चेतावनी सरकारको दी। महाराष्ट्रमें दौरा कर अिस सम्बन्धमें जनताको जागृत किया और बंगीय भाअियोंको आश्वासन दिया कि वे स्वयं तथा महाराष्ट्रकी जनता अुनकी सहायक हैं। अवसर पाते ही जनतामें अँग्रेज सरकारके विरुद्ध असन्तोषका निर्माण करना लोकमान्य अपना राष्ट्रीय कर्तव्य मानते थे। परन्तु बेमौके वे कुछ भी नहीं करते थे। वे बंगालके प्रति हमदर्दी, सहानुभूति तथा भ्रातृभाव निर्माण करनेके साथ अखिल भारतीय राष्ट्रीयताकी भावना भी प्रबल करते थे, क्योंकि लार्ड कर्जन तथा अँग्रेज सरकार यह समझती थी कि भारतवर्षमें राष्ट्रीय अेकता न होनेके कारण बंगालका प्रश्न अखिल भारतीय स्वरूप नहीं ग्रहण कर सकता। अिनकी दृष्टिमें भारतने अतीत कालमें कभी भी अेक राष्ट्र होनेका परिचय नहीं दिया। लोकमान्यकी प्रखर राष्ट्रीयता तथा दूरदर्शिताने अँग्रेज सरकारकी यह कूटनीति नष्ट-भ्रष्ट कर दी। लोकमान्यने अन्य प्रान्तोंके नेताओंका ध्यान बंगालकी गंभीर समस्याकी ओर आकर्षित किया। अुन्होंने बड़ी बुद्धिमानी, तर्क तथा अैतिहासिक तथ्योंके बलपर सिद्ध किया कि यह प्रहार भारतवर्षकी राष्ट्रीय भावना, अधिकार और आत्मापर है। लोकमान्यके निर्भीक प्रयत्नों तथा साहसपूर्ण प्रचारसे भारतवर्षमें राष्ट्रीयताकी लहर दौड़ गअी। जिस प्रकार अिटलीमें जोसेफ मैजिनीने राष्ट्रीयताकी भावनाका निर्माण किया, जार्ज वाशिंगटनने अुत्तरी अमेरिकामें राष्ट्रीय अैक्य पैदा किया, प्रिन्स

बिस्मार्कने जर्मनीमें अेक राष्ट्रीयताकी भावना जागृत की, वैसे ही लोकमान्य तिलकने भी भारत भरमें अिस समय यह कार्य कर दिखाया। अुन्होंने समस्त भारतको अेक राष्ट्रदेवकी आरती अुतारनेके लिअे तैयार किया। अिससे बंगाली भाअियोंका अुत्साह दुगुना बढ़ गया। अुन्हें यह विश्वास हो गया कि लोकमान्य तिलकका महाराष्ट्र तथा समस्त भारत अुनका समर्थक है। आन्दोलनमें अुग्रता आअी। ७ अगस्तको बंगालमें सरकार-विरोधी हड़ताल हुअी। शोकका दिन मनाया गया। कलकत्ताके टाअुन हालके मैदानपर अेक विराट् सभा हुअी जिसमें अेक लाख श्रोता अुपस्थित थे। काँग्रेसके भूतपूर्व सभापति सुरेन्द्रनाथ बेनर्जी, महाराजा भूपेन्द्र बोस, विपिनचन्द्र पाल अित्यादि प्रभावशाली नेताओंके कड़े और गम्भीर भाषण हुअे तथा सरकारी कुटिल नीतिकी तीखी आलोचना की गअी। आन्दोलन प्रखर होनेपर अँग्रेजी (विलायती) मालका बहिष्कार करना निश्चित हुआ। जहाँ-तहाँ विलायती कपड़ोंकी होलियाँ जलने लगीं और विलायती कपड़ों तथा विलायती-मालकी दूकानोंपर स्वयंसेवकों द्वारा पिकेटिंग (धरना) शुरू हुअी। स्वदेशी माल तथा स्वदेशी कपड़ेको प्रोत्साहन मिलने लगा अेवं स्वदेशीकी भावनाको शक्ति प्राप्त हुअी। लोकमान्य तिलक जैसा चाहते थे वैसा ही हुआ। वे स्वयं, अिस प्रकारके बहिष्कारके समर्थक थे, क्योंकि सन् १८८० में सर्वप्रथम नवयुवक तिलक पर भी स्व. सार्वजनिक काकाके स्वदेशी सम्बन्धी विचारोंका प्रभाव पड़ा था, जिसे कार्य-रूपमें परिणित करनेका अुन्हें यह अच्छा अवसर मिला।

काशीकी काँग्रेसमें

सन् १९०५ में काशीमें काँग्रेसका अधिवेशन श्री गोपालकृष्ण गोखलेकी अध्यक्षतामें हुआ। वास्तवमें आप पक्के नरमदलवादी थे, परन्तु आपने भी अिस समय सरकारकी भर्त्सना कर स्वदेशीका समर्थन किया। दर्शकोंको अैसा आभास हुआ कि गोखले अुग्र तिलककी ओर झुक रहे हैं। अिस अधिवेशनमें लोकमान्यने बंगालके प्रति सहानुभूतिका प्रस्ताव प्रस्तुत किया

और वह स्वीकृत हुआ। दूसरे प्रस्तावमें अुन्होंने कांग्रेसकी ओरसे युवराजका स्वागत करनेका कड़ा विरोध किया। लाला लजपतरायने अुनका समर्थन किया। अिस प्रकार तिलक धीरे-धीरे कांग्रेसको अुग्र बनानेमें समर्थ हो रहे थे। मि. व्हलंटाअीन चिरोलने अपनी, 'Unrest in India' (अनरेस्ट अिन अिंडिया) नामक ग्रन्थमें तिलकको "The father of Indian unrest" 'भारतीय असन्तोषका जनक' कहा है। अिस अधिवेशनके सम्बन्धमें अुस ग्रन्थमें लिखा गया है कि :—"In the two memorable sessions of Congress held at Benaras in 1905 and the other at Calcutta in 1906, when the agitation over the partition of Bengal was at its height Mr. Tilak's personality was the dominant not at the tribune but at the lobby. Even Mr. Gokhale played into his hands and from the presidential chair at Benaras commended the boycott as a political weapon used for definite political purpose."

अिससे लोकमान्य तिलकके दिन-पर-दिन बढ़नेवाले नेतृत्वका पता चलता है। महात्मा गांधीने बहिष्कारकी अिसी कल्पनाका सन् १९२० में अुग्र विकास किया जिससे देशका बल बहुत अधिक बढ़ा।

हिन्दी राष्ट्रभाषा और नागरी लिपिसे राष्ट्रीय अेकता

अिसी समय काशी-नागरी-प्रचारिणी-सभाने अपने भवनमें अन्य नेताओंके साथ लोकमान्य तिलकका स्वागत किया। नागरी-प्रचारिणी-सभाके कार्यकी प्रशंसा करते हुअे लोकमान्य तिलकने कहा कि "यद्यपि मैं भी अुन लोगोंमें हूँ जो कहते हैं कि भारतकी भावी राष्ट्रभाषा हिन्दी ही होनी चाहिअे, परन्तु दुर्भाग्यवश हिन्दी न बोल सकनेके कारण मैं अँग्रेजी ही में अपने भाव प्रकट करता हूँ।" राष्ट्रभाषाके सम्बन्धमें अपने विचार व्यक्त करते हुअे आपने कहा कि सबसे पहली और सबसे अधिक महत्वपूर्ण बात, हमें यह स्मरण रखना चाहिअे कि यह आन्दोलन केवल अुत्तरीय भारतमें

सर्वसामान्य लिपि कायम कर देने तक ही परिमित नहीं है । यह अेक महान् आन्दोलन है । मैं तो कहूँगा कि यह अेक राष्ट्रीय आन्दोलन है, जो सारे भारतवर्षमें अेक सर्वसामान्य भाषा स्थापित करना चाहता है । राष्ट्रीयताकी दृष्टिसे भारतमें सर्वसामान्य भाषाका होना अत्यन्त महत्वपूर्ण है । सर्व-सामान्य भाषा के द्वारा ही हम अेक-दूसरेसे विचार-विनिमय कर सकते है । भगवान् मनुने ठीक कहा है कि वाक् अर्थात् भाषा ही से हरअेक बात बोली या समझी जाती है । अतअेव अगर आप राष्ट्रको अेकताके सूत्रमें बाँधना चाहते हैं तो अिसके लिअे अेक राष्ट्रीय भाषाके अतिरिक्त कोअी दूसरा प्रबल माध्यम नहीं हो सकता ।

"यह अुद्देश्य किस प्रकार सिद्ध हो सकता है ? हमें याद रखना चाहिअे कि हमारा अुद्देश्य केवल अुत्तर भारत ही के लिअे सर्वसामान्य भाषा स्थापित करना नहीं है । हम चाहते हैं कि सारे भारतमें (मद्रास तकके लिअे) अेक सर्वसामान्य भाषा कायम हो । अिसमें सन्देह नहीं कि जिस परिमाणमें हमारा अुद्देश्य विस्तृत होता जायगा, हमारी कठिनाअियाँ भी अुतनी ही बढ़ेंगी । पहले हमें अुन कठिनाअियोंका सामना करना होगा, जिन्हें हम अैतिहासिक कठिनाअियाँ कह सकते हैं । प्राचीन कालमें आर्योंमें जो झगड़े हुअे और बादमें हिन्दू-मुसलमानमें जो लड़ाअियाँ हुअीं, अुनसे हमारे देशकी भाषा सम्बन्धी अेकता टूट गअी । अुत्तरीय भारतमें जो भाषाअें बोली जाती हैं, वे संस्कृतसे निकली हैं । अिसके विपरीत जो भाषाअें ठेठ दक्षिणमें बोली जाती हैं, वे द्राविड़ी भाषाअें हैं । अिन भाषाओंमें जो फर्क है, वह केवल शब्दों ही का नहीं, अुन अक्षरोंका भी है, जिनसे शब्द बनते हैं । अिससे आगे बढ़कर आजकल हिन्दी और अुर्दूके भेदका भी प्रश्न खड़ा हो रहा है । अिस प्रश्नकी चर्चा ज्यादातर अिस प्रान्तमें है । हमारी ओर (महाराष्ट्र देशमें) मोड़ी नामकी अेक शीघ्र-लिपि है । यह देवनागरी और बालबोधसे, जिसमें मराठी किताबें साधारण तौरसे छापी जाती हैं, भिन्न हैं । पहले हमें अुन्हीं भाषाओंको हाथमें लेना चाहिअे जो आर्य भाषाअें हैं; अर्थात् जो संस्कृतसे निकली हैं । ये भाषाअें हिन्दी, बंगाली,

मराठी, गुजराती और गुरुमुखी हैं। और भी कअी अुपभाषाअें हैं, पर मैंने खास-खास भाषाओंका नाम लिया है। ये सब भाषाअें संस्कृतसे निकली हैं और जिन लिपियोंमें लिखी जाती हैं, वे लिपियाँ भारतकी प्राचीन लिपियोंका परिवर्तित रूप हैं। समयके साथ-साथ अिन भाषाओंके व्याकरण, अुच्चारण और लिपिकी विशेषताअें बढ़ने लगीं, पर अिन सबकी वर्ण-मालाओंमें समानता बहुत कुछ पाअी जाती है।"

आपने नागरी-लिपिके सम्बन्धमें यह भी कहा कि 'नागरी-प्रचारिणी-सभा' सब आर्य भाषाओंके लिअे अेक सर्वसामान्य लिपि कायम करना चाहती है, जिससे कि अुस लिपिमें छपी हुअी पुस्तकें आर्य भाषा-भाषी आसानीसे पढ़ सकें। मेरा खयाल है कि अिस बातमें हम सबकी राय अेक होगी, हम सब लोग अिसकी अुपयोगिताको स्वीकार करेंगे। अतअेव हमें सब आर्य भाषाओंके लिअे नागरी लिपि स्वीकार करना चाहिये।

"नागरी लिपि ही क्यों?" अिस सम्बन्धमें अपने विचार व्यक्त करते हुअे आपने कहा कि "मेरा खयाल है अिस प्रश्नको हम केवल अैतिहासिक दृष्टिसे ही हल नहीं कर सकते। अगर आप प्राचीन शिला-लेखोंको देखेंगे तो आपको मालूम होगा कि अशोकके जमानेसे जुदा-जुदा समयमें कोआ दस तरहकी लिपियाँ प्रचलित थीं। ब्राह्मी अिन सबसे पुरानी समझी जाती है। बादमें धीरे-धीरे अक्षरोंमें परिवर्तन होता गया। हमारी वर्तमान सब मौजूदा लिपियाँ पुरानी लिपियोंका परिवर्तित रूप हैं। अिसलिअे मेरे ख्यालसे केवल प्राचीनताकी दृष्टिसे सर्व-सामान्य लिपिके सवालको हल करना ठीक न होगा।"

रोमन लिपिके सम्बन्धमें अपना मत व्यक्त करते हुअे आपने बताया कि "लिपि सम्बन्धी प्रश्नको टालनेके लिअे हमें अेक समय यह कहा गया था कि हम सब रोमन लिपिको स्वीकार करलें। अिसके समर्थनमें अेक युक्ति यह दी गअी थी कि अिससे केवल भारत ही में नहीं, अेशिया और यूरोपके बीच भी अेक सर्वसामान्य लिपि कायम हो जायगी। यह बात मुझे निरी भ्रमात्मक जान पड़ती है। रोमन लिपि बड़ी ही दोषपूर्ण है और

वह अुन स्वरोंके लिअे अनुपयुक्त है, जिन्हें हम बोलते हैं। अँग्रेज वैयाकरणोंने भी अिसकी सदोषता और अपूर्णताको स्वीकार किया है। कहीं-कहीं दूसरे किसी अक्षरके तीन-तीन या चार-चार अुच्चारण होते हैं और कहीं किसी अुच्चारण या स्वरके लिअे अिसके दो-तीन अक्षर लिखने पड़ते हैं। यदि हमें सर्वसामान्य लिपिकी जरूरत है तो हमें अुस लिपिको स्वीकार करना चाहिअे जो रोमन लिपिसे अधिक पूर्ण और सांगोपांग हो। यूरोपके संस्कृत पण्डितोंने प्रकट किया है कि देवनागरी वर्णमाला अुन सब अक्षरोंसे पूर्ण है, जो आजकल यूरोपमें प्रचलित हैं। अतअेव अैसी हालतमें आर्य भाषाओंके लिअे सर्वसामान्य लिपिकी खोजमें दूसरी जगह जाना आत्मघातक है। अिसके आगे भी मैं तो यह कहूँगा कि हमारे यहाँके अक्षरों और स्वरोंके विभाजन (क्लासीफिकेशन) जिसपर कि हमारे प्राचीन विद्वानोंने बहुत परिश्रम किया और जिन्हें हम पाणिनिके ग्रन्थोंमें पूर्णता पर पहुँचा हुआ देखते हैं, अितने पूर्ण हैं कि संसारकी किसी भाषामें अितना पूर्ण और अुत्कृष्ट विभागीकरण नहीं मिलेगा। यह भी अेक कारण है कि हम जिन स्वरोंको काममें लाते हैं, अुन्हें प्रकट करनेके लिअे देवनागरी लिपि ही सबसे ज्यादा अुपयुक्त है। यदि आप 'सैक्रेड बुक आफ दी ओस्ट' (पूर्वके पवित्र ग्रन्थ) नामक ग्रंथमालासे प्रकाशित प्रत्येक पुस्तकके अन्तिम भागपर दी हुअी भिन्न-भिन्न लिपियाँ देखेंगे तो आपको मेरी बातपर विश्वास हो जायगा। हमारे यहाँ अेक-अेक अक्षरका अेक-अेक स्वर अर्थात् अुच्चारण है और प्रत्येक स्वरके लिअे अेक-अेक अक्षर है। मैं नहीं जानता कि अिस विषयमें कोअी मतभेद रहा होगा कि हमें कौन-सी वर्णमाला स्वीकार करनी चाहिअे। देवनागरी वर्णमाला ही में अिस बातकी पूरी योग्यता है। अब प्रश्न लिपिका या लेखनके अुस रूपका रहा जो कि भिन्न-भिन्न प्रान्तोंमें वर्णमालाके अक्षर धारण करते हैं और मैं आपसे पहले कह चुका हूँ कि यह प्रश्न केवल प्राचीनताकी बुनियादपर हल नहीं हो सकता।"

आपने यह भी कहा कि "लार्ड कर्जनके निर्दिष्ट समय (स्टैंडर्ड टािअम) की भाँति हम निर्दिष्ट या प्रामाणिक लिपि चाहते हैं। अगर लार्ड कर्जन हमें प्रामाणिक समयके बजाय राष्ट्रीय ढंगपर प्रामाणिक लिपि देते तो वे हमारे विशेष आदरके पात्र होते। पर अुन्होंने अैसा नहीं किया। हमें प्रान्तीयताको छोड़कर विचार करना चाहिअे। बंगाली लोग स्वभावतया ही बंगाली भाषा पर अभिमान करते हैं। अिसके लिअे मैं अुन्हें दोष नहीं देता। कोअी गुजराती भाअी भी यह कह सकता है कि गुजराती लिपि लिखनेमें सुगम है, क्योंकि अुसके अक्षरोंपर शिरोरेखा नहीं रहती। महाराष्ट्रके लोग भी यह कह सकते है कि मराठी अैसी लिपि है, जिसमें संस्कृत लिखी जाती है, अिसलिअे वही भारतकी सर्वसामान्य लिपि होने योग्य है।"

अिस प्रश्नपर व्यवहारिकताकी दृष्टिसे विचार करनेका अनुरोध करते हुअे आपने कहा कि, "मैं अिन विचारोंके तत्वको पसन्द करता हूँ; पर हमें अिस सवालको हल करना चाहिअे और अिसके व्यवहारिक रूपपर विचार करना चाहिअे। हम चाहे जो लिपि स्वीकार करें, पर वह अैसी होने चाहिअे जो लिखनेमें सुलभ हो, आँखोंको सुन्दर दिखे और जल्दीसे लिखी जा सके। जिन अक्षरोंका आप प्रयोग करें, वे अैसे हों जो सब आर्य भाषाओंके भिन्न-भिन्न स्वरोंको व्यक्त कर सकें तथा द्रविडियन भाषाके स्वर भी बिना किसी प्रकारके चिह्न लगाअे अुसमें लिखे जा सकें। हरअेक स्वरके लिअे अेक-अेक अक्षर हों।"

नागरी-प्रचारिणीके प्रयत्नोंकी जिक्र करते हुअे आपने कहा कि, "आपने अिस अुद्देश्यके लिअे कमेटी नियत की और सर्वसामान्य नागरी लिपिकी खोज निकाला। पर मेरी समझमें अब हम लोगोंको सरकारके पास जाना चाहिअे और अिस आवश्यकताकी ओर अुसका ध्यान खींचना चाहिअे। अुससे प्रार्थना करनी चाहिअे कि प्रत्येक प्रान्तकी देशी भाषाओंकी पाठ्य-पुस्तकोंमें अिस लिपिके कुछ पाठ जोड़ दिअे जाअें, जिससे भावी सन्तान अपने स्कूली-जीवनमें ही अिस लिपिसे परिचित हो जाअें।"

काशी-हिन्दू-विश्वविद्यालयका समर्थन

अिसी समय महामना मालवीयजीने टाअुन हालमें भिन्न-भिन्न प्रान्तोंके नेताओंकी सभामें हिन्दू-विश्वविद्यालयकी स्थापनाकी योजना पर मोटे तौरसे प्रकाश डाला। लोकमान्यने अिस योजनाका सहर्ष समर्थन किया और कहा कि "हम महाराष्ट्र-निवासी सामान्यतया निर्धन हैं, परन्तु हमारे पास विद्यारूपी धन पर्याप्त है। मैं निपुण तथा कार्यक्षम प्राध्यापक देनेका अभीसे आश्वासन देता हूँ।"

बहिष्कार-दावाग्नि

लोकमान्य तिलकको बंगालमें प्रचलित हुआ बहिष्कारका शस्त्र बहुत जँचा। बहिष्कारकी खाद मिलते ही स्वदेशीकी लता तेजीसे पनपने लगी। पूना तथा महाराष्ट्रमें जहाँ-तहाँ विलायती कपड़ोंकी होलियाँ जलने लगीं। लोकमान्य तिलकके प्रोत्साहनसे सन् १९०६ के कार्तिक मासमें पंढरपुरके धार्मिक मेलेके समय स्वदेशी वस्त्रोंकी प्रदर्शनी हुअी, जिसमें कअी प्रकारके स्वदेशी कपड़े तथा अन्य सैंकड़ों स्वदेशी वस्तुअें प्रदर्शित की गअीं। मेलेमें कअी लाख दर्शक अुपस्थित थे। जनताको भाषणों द्वारा स्वदेशी तथा बहिष्कारका महत्व समझाया गया। लोकमान्य तिलक केवल बोलनेवाले ही नेता नहीं थे। अुनकी करनी कथनीसे दो कदम आगे रहती थी। अुन्होंने दो-तीन लाख रुपयोंकी पूंजी अेकत्र कर बम्बअीमें 'स्वदेशी को-आपरेटिव स्टोर्स' की स्थापना की, जिसकी ओरसे स्वदेशमें बने कपड़ोंकी दो-तीन दूकानें चलाअी गअीं और बुनकरोंको आर्थिक सहायता भी दी गअी। तिलक जिस प्रकार स्वदेशीका प्रचार करते थे, अुसी प्रकार अुनकी सहधर्मिणी सत्यभामाबाअी तिलक भी महिलाओंकी सभाओंमें स्वदेशीका प्रचार करती थीं। स्वदेशी-प्रचारके लिअे तलेगांवमें कांचका कारखाना प्रारम्भ किया गया। अिसके लिअे अेक-अेक पैसेका चन्दा अेकत्र करनेकी योजना बनाअी गअी। लोकमान्यने अिस विधायक-कार्यमें भरसक सहायता की। वे राजनीतिक असन्तोषको विधायक स्वरूप देना चाहते थे, परन्तु सरकारकी मनमानी तथा निरंकुश दमननीतिने

अुनको अुग्रताकी ओर मोड़ा। वे अपने सम्पादकीय लेखों तथा प्रभावशाली भाषणों द्वारा जनताको यह शिक्षा देते थे कि प्रत्येक वस्तु खरीदते समय यह देखना भारतीयोंका कर्तव्य है कि वह स्वदेशी है अथवा नहीं। जनताको चाहिअे कि स्वदेशी वस्तु परदेशी वस्तुसे अधिक महँगी होने पर भी खरीदें, क्योंकि अिससे अुसका पैसा भारतमें ही रहेगा। त्याग और कष्टके बिना स्वदेशीका आंदोलन कभी भी सफल नहीं हो सकता। अिस तत्वका प्रतिपादन वे अमिरिका, अिटली, ब्रिटेन अित्यादि देशोंके अितिहासके आधारपर करते थे।

राष्ट्रीय विद्यालयोंकी स्थापना

बंगालमें बहिष्कारका आंदोलन दावाग्नि-सा अधिकाधिक अुग्र होने लगा। जब सरकार टस-से-मस न हुअी तब नेताओंने सरकारी कालेज तथा हाअी स्कूलोंका बहिष्कार करनेके लिअे विद्यार्थियोंको आदेश दिया। बंगालमें राष्ट्रीय विद्यालयों तथा विद्यापीठोंकी स्थापना हुअी और अुनमें हजारोंकी संख्यामें विद्यार्थी प्रविष्ट हुअे। महाराष्ट्र जो कि बंगालकी व्यथासे व्याकुल था अिस क्षेत्रमें भी पीछे नहीं रहा। महाराष्ट्रमें भी राष्ट्रीय विद्यालयोंकी स्थापना हुअी। सन् १९२१ में अिसी नीतिका क्रान्तिकारी विकास महात्मा गान्धीने किया और काँग्रेसने विद्यार्थियोंको सरकारी स्कूलोंको त्यागकर राष्ट्रीय शिक्षा लेनेका आदेश दिया। संक्षेपमें स्वदेशी, बहिष्कार और राष्ट्रीय शिक्षा-रूपी साधनत्रयी द्वारा लोकमान्यने भारतकी जनताको सक्रिय बनानेकी चेष्टा की।

कलकत्ताकी क्रान्तिकारी कांग्रेस

लोकमान्य तिलकने बंगभंगके विरुद्ध आसेतुहिमालय आन्दोलन प्रारम्भ किया। प्रत्येक प्रान्तमें अुन्हें अुत्साही तथा साहसी कार्यकर्ता मिले। नअे कार्यकर्ता देशकी स्वतन्त्रताके लिअे कुछ-न-कुछ ठोस कार्य करनेको तड़प रहे थे। दूसरी ओर लार्ड कर्जनकी नीति दिन-प्रति-दिन अधिक कड़ी और निरंकुश होती जा रही थी। लोकमान्य तिलक नअी चेतनायुक्त देश-

सेवकोंके स्वाभाविक नेता बने। अग्रदलवादी नअे कार्यकर्ताओंमें काँग्रेस-कमेटियोंपर अधिकार प्राप्त करनेकी स्पर्धा पैदा हुअी। अेक ओर पुराने कार्यकर्ता अपना अधिकार नहीं छोड़ना चाहते थे और दूसरी ओर जनताकी अिच्छानुसार वे आगे कदम बढ़ानेको भी तैयार नहीं थे। काँग्रेस पर अपना अधिकार जमाये रखनेके लिअे वे हर प्रकारसे प्रयत्न करने लगे। लोकमान्यके नेतृत्वमें अग्रदल और फिरोज शाह मेहता, सुरेन्द्रनाथ बैनर्जी अेवं गोपालकृष्ण गोखले अित्यादिके पुराने नरमदलके बीच काँग्रेसकी सत्ताके लिअे संघर्ष अनिवार्य हो गया, क्योंकि लोकमान्य तिलक काँग्रेस जैसी अखिल भारतीय राजनीतिक संस्थाको ही साधन बनाकर अँग्रेज सरकारसे लोहा लेना चाहते थे। वे पक्के लोकतन्त्रवादी थे। अुन्हें यह विश्वास था कि समयानुकूल आगे बढ़ने पर ही वे जनताके सच्चे प्रतिनिधि हो सकेंगे और जनता स्वयं अुन्हें अपना नेता बनाअेगी। अिस विश्वासके आधारपर ही वे कांग्रेसमें प्रविष्ट हुअे और प्रतिवर्ष अुनका प्रभाव बढ़ता ही गया। अब वे अितने आगे बढ़ चुके थे कि बंगालके लब्धप्रतिष्ठ नेता और प्रख्यात वक्ता विपिनचन्द्र पालने अुनका नाम कलकत्तामें होनेवाले कांग्रेस-अधिवेशनके अध्यक्षपदके लिअे प्रस्तावित किया। प्रत्येक प्रान्तसे अिस प्रस्तावको समर्थन प्राप्त हुआ। नअी परिस्थितिमें नअे साहस और नअी दृष्टिके सभापतिकी आवश्यकता थी। कांग्रेस-अध्यक्षपदके लिअे लोकमान्य तिलकका नाम सुनते ही अुग्रदलके सहस्रों कार्यकर्ता आनन्दसे विभोर हो अुठे। नरमदलवादी नेताओंका धैर्य भंग हुआ। अुनका अुत्साह जाता रहा और अुनके चेहरे फीके पड़ गअे। अुन्होंने लोकमान्य तिलकके विरुद्ध वातावरण फैलाना आरम्भ किया। लोकमान्य तिलक सदा निजी स्वार्थ और आत्मप्रतिष्ठासे परे रहते थे। वे तत्वके पुजारी थे न कि आत्मप्रतिष्ठाके। यदि वे चाहते तो तीव्र संघर्ष कर कांग्रेसके सभापति बन जाते, किन्तु अैसा करनेसे कांग्रेस दुर्बल होकर समाप्त हो जाती। अुन्हें यह स्वीकार नहीं था। वे तो कांग्रेसको अधिकाधिक प्रबल और प्रभावशाली बनाकर अुसके द्वारा स्वतन्त्रताके लिअे अंग्रेज सरकारका मुकाबला करना चाहते थे।

लोकमान्यकी सफल युक्ति

अपने साथियोंके बार-बार अनुरोध करनेपर भी अुन्होंने अपना नाम सभापति-पदके लिअे प्रस्तुत नहीं होने दिया, किन्तु अुन्होंने मध्यवर्ती राह सोची। अुन्होंने दलबन्दीसे पृथक् रहनेवाले प्रतिनिधियों द्वारा कलकत्ता-कांग्रेसके सभापति-पदके लिअे लण्डनस्थित राष्ट्र-प्रपितामह दादा भाओ नौरोजीका नाम प्रस्तावित करवाया। दादा भाओी कांग्रेसके संस्थापकोंमें प्रमुख थे तथा अिसके पूर्व दो बार सभापति रह चुके थे। अिसके अलावा ८५ वर्षोंकी वृद्धावस्थामें भी वे विलायतमें कांग्रेसकी ओरसे भारतको अधिकाधिक राजनीतिक अधिकार प्राप्त करानेके लिअे प्रयत्नशील रहते थे। अिधर ब्रिटिश सोशलिस्ट पार्टीके नेता हाअिड मनसे अुनकी मैत्री थी और अिस पार्टी द्वारा संचालित सभाओंमें अुन्होंने प्रगतिवादी तथा अुग्र विचार भी प्रकट किअे थे। लोकमान्य तिलकने अुनके विचारोंमें होनेवाले परिवर्तनोंका निरीक्षण बहुत बारीकी और मार्मिकतासे किया था। दादा भाओ नौरोजीका नाम सूचित होते ही लोकमान्यके विरोधी नेताओंने अुसका सहर्ष समर्थन किया। वे मानते थे कि अतिवृद्ध तथा क्षीणकाय दादा भाओी नवयुवकोंके नव स्थापित अुग्रदलकी नीतिका स्वप्नमें भी समर्थन नहीं कर सकते। अिसके अतिरिक्त दादा भाओीने ब्रिटिश पार्लमेण्टका सदस्य बनकर अभी तक वैधानिक तरीकेसे ही भारतकी सेवा की थी। अुनसे अवैधानिक अुग्र मार्गके समर्थनकी किसी प्रकार आशा नहीं की जा सकती थी। यदि वे चाहते तो भी अुनका कृश शरीर अुन्हें अैसा नहीं करने देता।

दोनों दलके नेता सदलबल कलकत्ता पहुँचे। कलकत्ताका यह अधिवेशन क्रान्तिकारी तथा युग-प्रवर्तक होने जा रहा था, क्योंकि बंग-भंगके पश्चात् कांग्रेसमें दो विरोधी दल स्थापित हो चुके थे और दोनों अपनी-अपनी शक्ति बढ़ानेमें संलग्न थे। अेक दल याचनावादी था और दूसरा अधिकारवादी। पहला नरमदल था तो दूसरा नया अुग्रदल। दोनों कांग्रेसपर अधिकार जमाना चाहते थे। मनोनीत सभापति दादा भाओीका अभूतपूर्व स्वागत किया गया, क्योंकि अुनसे दोनों दल अपने विचारोंके समर्थनकी

अपेक्षा रखते थे । काँग्रेस-मण्डपमें जिधर देखिअे अुधर स्वदेशी, बहिष्कार, स्वराज्य और राष्ट्रीय शिक्षा अित्यादिके सम्बन्धमें आदर्श वाक्य आकर्षक ढंगसे सुनहरे अक्षरोंमें लिखे दिखाअी देते थे। काँग्रेसका मण्डप नअे तेज और नअे अुत्साहसे भरपूर था। दादा भाअी नौरोजीने अपना अन्तिम तथा क्रान्तिकारी भाषण पढ़ा। अिस भाषणका स्वरूप पुराने सभापतियोंके भाषणोंसे सर्वथा भिन्न था। पुराने सभापति आलंकारिक भाषामें, बड़े दरबारी ढंगसे अँग्रेज सरकारसे भारतवर्षको अधिकाधिक राजनीतिक अधिकार प्रदान करनेकी विनम्र प्रार्थना करते थे। अुनके भाषणोंमें नवनीत जैसी मृदुता रहती थी। अँग्रेजोंकी कृपासे वे आगे बढ़ना चाहते थे। अिस परम्पराको त्यागकर वृद्ध दादा भाअीने अति सरल, स्पष्ट तथा निर्भीक भाषामें काँग्रेसके सम्मुख स्वराज्यका ध्येय अुपस्थित किया। अिस ध्येयकी प्राप्तिके लिअे स्वदेशी बहिष्कार, राष्ट्रीय शिक्षा अित्यादि साधनत्रयीका आपने प्रभावशाली अुपदेश दिया। आपने व्यथित हृदयसे कहा कि स्वराज्यकी प्राप्ति स्व-शक्तिसे होती है न कि याचनावृत्तिसे। अपना अनुभव बतलाकर आपने यह भी कहा कि नवयुवकों द्वारा नया ठोस कार्य किअे बिना केवल वैधानिक तरीकेसे स्वराज्यकी प्राप्ति असम्भव है। तपे हुअे दादाजीके भाषणोंसे अुग्रदलको प्रोत्साहन प्राप्त हुआ तो पुराने नरमदलवादी निराश हुअे।

लोकमान्य तिलककी विजय

विषय-निर्वाचिनी-समितिमें अुग्रदलकी ओरसे स्वदेशी तथा बहिष्कारका समर्थन करनेवाला प्रस्ताव प्रस्तुत किया गया। बंगालके अुग्रदलीय नेता बाबू विपिनचन्द्रपालने प्रभावशाली समर्थन किया और अुद्देश्योंका विस्तृत रूपसे स्पष्टीकरण भी किया। बम्बअीके सिंह फिरोज शाह मेहताने प्रस्तावका कड़ा विरोध किया। कअी वक्ताओंके भाषण हुअे, परन्तु लोकमान्य तिलकका भाषण अति गंभीर और तत्व-प्रतिपादक रहा। अुसमें अुनकी बुद्धिकी चमक-दमक भरी हुअी थी। अुन्होंने कवि कुलशेखर कालिदासकी यह सूक्ति वहाँ सुनाअी :—

'वागर्थाविव संपृक्तो वागर्थप्रतिपत्तये ।
जगतःपितरौ वन्दे पार्वतीपरमेश्वरौ ॥'

अर्थात्–"जैसे वाणीसे अर्थ अलग नहीं किया जा सकता, वैसे स्वदेशीसे बहिष्कारको अलग नहीं किया जा सकता । जैसे नटेश्वरके शरीरमें पुरुष तथा स्त्रीके अंग अभिन्न होकर रहते हैं, वैसे ही स्वदेशी और बहिष्कार भी अभिन्न हैं।" अुन्होंने अिटली, अमेरिका और आयर्लैण्डके अितिहासके अुदाहरण देकर यह प्रमाणित किया कि विदेशी वस्तुओंके बहिष्कारका मार्ग अपनाये बिना स्वदेशीका प्रचार नहीं हो सकता । अुन्होंने नरमदलके सब आक्षेपोंका मुँहतोड़ अुत्तर दिया और स्वदेशीका व्रत चलानेमें स्वार्थत्यागकी हँसी अुड़ानेवाले फिरोज शाह मेहताको चुनौती दी कि क्या किसी देशमें स्वार्थत्याग बिना स्वदेशी तथा बहिष्कारका आन्दोलन सफल हुआ है ? अुन्होंने डंकेकी चोट यह भी कहा अब स्वार्थत्यागसे परहेज करनेवालोंके दिन लद चुके हैं । देश और जनता जागृत हो चुकी है और वह स्वराज्यके मार्गपर आगे बढ़ना चाहती है । अतः याचनावादी क्षीणबल भाअी अुसे आगे बढ़नेसे न रोकें । लोकमान्य तिलकके भाषणका अपेक्षित प्रभाव पड़ा और अुनका प्रस्ताव भारी बहुमतसे पारित हुआ । नरमदलपर लोकमान्य तिलककी यह पहली विजय थी । अिससे अधिक तीव्र वाद-विवाद बहिष्कारके दूसरे प्रस्तावपर हुआ । अुसमें कहा गया कि भारतकी प्रचलित राज्यशासन-व्यवस्थामें जनताकी ओरसे भेजी हुअी अर्जियोंपर सरकार सहानुभूतिके साथ विचार या निर्णय नहीं करती, अिसलिअे बंगालमें प्रारम्भ किअे गअे बहिष्कार आन्दोलनको कांग्रेस मान्यता देती है और अुसे वैधानिक भी मानती है । प्रस्ताव कांग्रेसकी नीतिमें क्रान्तिकारी परिवर्तन करानेवाला था, अिसलिअे नरम-दलकी ओरसे अुसका विरोध श्री गोपाल कृष्ण गोखले और महामना पंडित मदनमोहन मालवीयने कलामयी वाणी द्वारा किया । दोनों ओरसे कअी वक्ताओंके लम्बे-चौड़े भाषण हुअे । परन्तु अिस प्रस्तावपर बोलते हुअे अुग्रदलके नेता लोकमान्य तिलकने बड़ी वैधानिक सूक्ष्म तथा पैनी दृष्टिका

परिचय दिया और प्रस्ताव बहुमतसे स्वीकृत हो गया। अपने भाषणके अन्तिम अंशमें लोकमान्य तिलकने यह वैधानिक चेतावनी दी कि जब कोअी प्रस्ताव बहुमतसे स्वीकृत होजाता है तब अुसका यह अर्थ नहीं होता कि केवल अुसके समर्थकोंपर ही अुसका बन्धन रहे और विरोधी अुसे कार्यान्वित न करें, अथवा अुसकी अुपेक्षा करें। अुन्होंने कहा कि वाद-विवादके पश्चात् बहुमतसे स्वीकृत प्रस्ताव संस्थाका नियम बन जाता है। अतअेव अुसका पालन करना संस्थाके सभी सदस्योंके लिअे आवश्यक है। यदि कोअी सदस्य अैसा नहीं करता तो वह संस्थाका अनुशासन भंग करता है। यदि काँग्रेसको बलशाली संस्था बनाकर अुसे स्वराज्य-प्राप्तिकी ओर बढ़ाना है तो काँग्रेसका अनुशासन अक्षुण्ण रखना आपका परम कर्तव्य है। अनुशासनहीन संस्था कभी कामयाब नहीं हो सकती। लोकमान्य तिलकके अिस भाषणने काँग्रेसमें नव-चेतना पैदा की, अुसका कायापलट किया और ब्रिटिश साम्राज्य-वादका मुकाबला करनेके लिअे वह अनुशासनशील संस्था बनकर खड़ी हो गअी। अिस प्रकार कलकत्ता काँग्रेसमें अुग्रदलकी सर्वतोमुखी विजय हुअी। बहुमतने लोकमान्य तिलकका नेतृत्व मान लिया।

नअे अुग्रदलकी नीति तथा सिद्धान्त

काँग्रेस-अधिवेशन समाप्त होनेके पश्चात् कलकत्ताके मैदानमें बाबू विपिनचन्द्र पालकी अध्यक्षतामें लोकमान्य तिलकका भाषण नअे अुग्रदलके सिद्धान्तोंके सम्बन्धमें हुआ। अिस भाषणमें अुन्होंने जनताके सम्मुख अपने हृदयका निचोड़ जोरदार शब्दोंमें प्रस्तुत किया। आपने अितिहासके आधार-पर प्रमाणित किया कि आजका अुग्रदलवादी भविष्यका नरमदलवादी है। आपने बताया कि समय परिवर्तनशील है; अतअेव राजनीतिज्ञोंको अपनी नीतिमें समयके अनुकूल प्रगति अेवं परिवर्तन करना चाहिअे। जो समयका रुख नहीं पहचानता वह राजनीतिज्ञ नहीं। दादाभाअी नौरोजी, अुमेशचन्द्र बैनर्जी, डिग्बी, हेनरी काटन अित्यादि हमारे पुरखों अेवं काँग्रेसके संस्थापकोंने वैधानिक तरीकोंसे अिस देशकी काफी सेवा की है, किन्तु समय अुनको

पीछे छोड़ गया और अब अुनके तरीके बेतुके तथा निकम्मे हो गअे हैं। हम अुनके प्रति कृतज्ञ हैं, क्योंकि अपने समयके अनुकूल अुन्होंने देशकी सेवा की है। अुनके अनुभवके बलपर हमें आगे बढ़ना है। आत्मनिर्भरताकी साधनत्रयी——स्वदेशी, बहिष्कार और राष्ट्रीय शिक्षाके आधारपर हम स्वराज्यका ध्येय प्राप्त करना चाहते हैं। स्वार्थ-त्याग हमारा प्रभावशाली हथियार है और जनताका बल हमारा बल है। मदोन्मत्त अँग्रेज सरकार जनताके बलके बिना हमारी राजनैतिक माँगें कदापि स्वीकार नहीं करेगी। हमारे पास वैज्ञानिक शस्त्रास्त्र नहीं। हमारी रायमें अुनकी आवश्यकता भी नहीं, क्योंकि हमारे पास अुनसे भी अधिक प्रभावशाली शस्त्र हैं, अिसका नाम है बहिष्कार। यही हमारा अन्तिम राजनीतिक शस्त्र है। हम यह भली-भाँति जानते हैं कि हमारे सहयोगसे ही मुठ्ठीभर अँग्रेज यहाँ राज्य कर रहे हैं। अिस राज्यकी बागडोर अनेक भारतीय अफसरोंपर निर्भर है। यदि भारतीय जनता अँग्रेज सरकारसे असहयोग कर दे तो अँग्रेजोंको राज्य चलाना मुश्किल हो जाय। मुझे पूरा विश्वास है कि हम भारतीय शासनके लिअे योग्य हैं। शासनके सब अधिकार हमें तुरन्त मिलने चाहिअे। मैं अपने घरकी तालीपर अधिकार जमाना चाहता हूँ, फिर भले ही अिने-गिने अँग्रेज मित्रके नाते यहाँ रहें। स्वराज्य हमारा साध्य है। अिसकी प्राप्तिके लिअे सशस्त्र प्रतिकारकी आवश्यकता नहीं। स्वार्थत्याग और आत्म-संयम हमारे नैतिक हथियार हैं। अुन्हें ही मैं बहिष्कार-योग कहता हूँ। अिस बहिष्कार-योगका दूसरा तथा महत्वका व्यावहारिक अंग है लगान वसूल करने तथा राज्यशासन चलानेमें परदेशी सरकारसे सहयोग न करना। हम न्याय-विभागसे सम्बन्ध-विच्छेद करें अेवं अपनी अदालतें स्थापित करें। हम भारतीय सेनासे हटें और अँग्रेजोंकी सत्ता तथा साम्राज्य दृढ़ करनेके लिअे लड़ना छोड़ दें। समय आनेपर हम लगान न देनेका आन्दोलन भी छेड़ेंगे। संक्षेपमें हम आत्मनिर्भर होकर सरकारसे मुकाबला करेंगे। सरकार जो राजनीतिक अधिकार या सुधार हमें प्रदान करेगी, अुनको स्वीकार कर हम स्वराज्यके लिअे दुगने अुत्साहसे लड़ते रहेंगे।

लोकमान्य तिलकका अुक्त भाषण अुनकी अुग्र राजनीतिका तत्व है। नरमदलकी नीतिसे अुनकी नीति मूलतः किस रूपमें भिन्न थी, अिसका अिससे तुरन्त पता चलता है। यदि अुनका बस चलता तो कांग्रेस द्वारा सन् १९२१ में राष्ट्रपिता महात्मा गांधीने जो असहयोग आन्दोलन चलाया, अुसका प्रारूप सन् १९०७ में ही दिखाअी पड़ जाता।

दसवाँ प्रकरण

मित्रताका आदर्श

ते वन्द्यास्ते कृतिनः श्लाघ्या तेषांहि जन्मनोत्पत्तिः ।
यैरुज्झितात्मकार्यैः सुहृदामर्था हि साध्यन्ते ।।

लोकमान्य तिलकका सार्वजनिक जीवन जितना अुदात्त, निस्वार्थ, विशाल और आदरणीय था अुतना ही अुनका व्यवहार तथा व्यक्तिगत आचरण भी स्निग्ध अेवं मृदु था । कविकुल गुरु कालिदासने सज्जनोंका हृदय-वर्णन करते समय लिखा है; "वज्रादपि कठोराणि मृदूनि कुसुमादपि" अर्थात् "सज्जनोंका हृदय वज्रसे भी अधिक कठोर होता है, साथ ही फूलसे अधिक मृदु भी ।" लोकमान्य तिलकका जीवन अिसका प्रत्यक्ष अुदाहरण है । श्री वासुदेव सदाशिव बापट कालेजमें आपके सहपाठी मित्र थे । वे बड़े बुद्धिमान, दक्ष और कार्यकुशल व्यक्ति थे । दरिद्रताके कारण बी.अे. तक नहीं पढ़ सके । बीचमें ही अुन्हें बड़ौदा रियासतमें ७५) मासिक की नौकरी मिल गअी । बुद्धिमान और कार्यकुशल तो थे ही । अँग्रेज अधिकारी अुनपर प्रसन्न हुअे जिससे अुनकी यथेष्ट अुन्नति हो सकी । दस वर्षोंमें ही वे सर्वे सेटलमेन्ट-विभागके प्रमुख अधिकारी बन गअे और साढ़े सात सौ रुपया मासिक वेतन पाने लगे । अिस अवधिमें अुनका और तिलकका प्रेम-सम्बन्ध पूर्ववत् बना रहा । दोनों अेक-दूसरेके अुत्कर्षमें दिलचस्पी लेते और आनन्दित होते, परन्तु दोनोंका आपसमें पत्र-व्यवहार बहुत नहीं होता था । दोनोंके दिल साफ थे और मित्रता निर्हेतुक थी । दोनोंके मार्ग परस्पर विरोधी थे । अिधर श्री बापट रियासतमें बड़े अधिकारी बने तो तिलक बड़े राजद्रोही नेता । सन् १८९४ में श्री बापट पर अेकाअेक आपत्तिके बादल मँडराने लगे । बड़ौदाके दीवान अुनका अुत्कर्ष न देख सके । अतः महाराजा गायकवाड़की अनु-

परिस्थितिमें अुन्होंने वहाँके पोलिटिकल-अेजेन्टसे सम्बन्ध स्थापितकर श्री बापटके विरुद्ध अेक भयंकर षड्यन्त्र रचा। श्री बापट अपने कार्यमें संलग्न रहते थे अिसलिअे अुन्हें अिस विरोधी वातावरणका काफी समय तक पता भी नहीं चला। अेक दिन अेकाअेक पोलिटिकल-अेजेन्टने अुन्हें बुलवाया और अुनके सम्मुख अुनके विरुद्ध दायर की गअी सैंकड़ों अर्जियोंके बण्डल रख दिअे। श्री बापट सन्न रह गअे। अुनकी आँखोंके सामने अँधेरा छा गया। अुनसे कुछ अुत्तर देते न बना। अुत्तर देनेसे लाभ भी क्या होता? पोलिटिकल अेजेन्टने अुनसे कहा कि आपके विरुद्ध जो आक्षेप हैं अुनकी जाँचके लिअे अेक कमीशन नियुक्त करता हूँ। वही कमीशन अुचित कार्यवाही करेगा। आप अपनी सफाअी और बचावका यथाशक्ति प्रयत्न कीजिअे। अेजेन्टकी वाणी मीठी छुरी थी। श्री बापटके सामने भविष्यका भयंकर परिणाम अुपस्थित हो गया और अुन्होंने अपने सहपाठी मित्र तिलकको पत्र लिखकर सहायताकी माँग की। तिलक कुशल वकील तो थे ही। अुन्होंने तत्काल जोशी नामके अेक परिचित अेवं प्रतिष्ठित व्यक्तिको बड़ौदा भेजा और बापटको किस ढंगसे पूना लाया जाअे यह युक्ति भी बता दी। तिलककी तरकीब कामयाब हुअी और बड़ौदाके गुप्तचरोंके रहते हुअे भी बापट पूना पहुँच गअे। तिलकने अुन्हें अेक मास तक अज्ञात स्थलमें सुरक्षित रखा और अुनसे सब जानकारी प्राप्त करली। बड़ौदा-रियासतके पुलिस-अधिकारी बापटकी खोज पूनामें करते रहे, परन्तु अुनका प्रयत्न व्यर्थ सिद्ध हुआ। डेढ़ मासके पश्चात् तिलकने बड़ौदा स्टेटके पोलिटिकल अेजेन्टको पत्र लिखा कि बापट मेरे यहाँ हैं और अपने कानूनी बचावके लिअे बड़ौदामें अुपस्थित होना चाहते हैं, बशर्ते कि अुन्हें गिरफ्तार न कर कानूनी सहूलियतें दी जाअें। पोलिटिकल अेजेन्टने तिलककी शर्त मान ली। तिलक स्वयं अपने मित्रको साथ लेकर बड़ौदा पहुँचे और वहाँ अेक धर्मशालामें पाँच महीने तक ठहरे। अुनकी सलाहसे बम्बअीसे अेक सुविख्यात बैरिस्टर बुलवाया गया। तिलक दिन-रात जगकर केस तैयार करते और पैरवी करनेमें बैरिस्टरकी मदद करते। तिलकके कानूनी ज्ञान और अुनकी बुद्धिमत्ता देखकर वे आश्चर्यसे मुग्ध हो

जाते थे । असलमें केस लड़ते थे तिलक, परन्तु अुन्होंने कमिश्नर पर प्रभाव डालनेके लिअे अेक बैरिस्टरको हजार रुपया देकर पैरवीके लिअे खड़ा किया था । अन्तमें सत्यकी विजय हुअी और बापट निर्दोष सिद्ध हुअे । अिस प्रकार तिलकने पाँच महीने तक खून-पसीना अेक कर मित्रकी सहायता की और अुन्हें आपत्तिसे बचाया ।

अिसी प्रकार जब सन् १८९७ के अगस्त मासमें अुन पर चलाअे गअे राजद्रोहके पहले अभियोगकी सुनवाअी बम्बअीमें प्रारम्भ हुअी तब अुन्हें जमानत पर मुक्त किया गया । वे किसी आवश्यक कामके लिअे पूना गअे थे । वहाँ अुन्हें समाचार मिला कि अुनके मित्र श्री बाबा साहब कालराके शिकार हुअे हैं और मरणासन्न अवस्थामें हैं । मित्रके अन्तिम दर्शनके लिअे तिलक वहाँ दौड़े । भेंट होते ही बाबा साहबने अुन्हें मृत्यु-पत्र लिखनेको कहा । तिलकने लिखा और बाबा साहबके निकट सम्बन्धियोंके तीन नाम संरक्षकों (ट्रस्टी) में लिखे, परन्तु ट्रस्टियोंमें जो पहला नाम लिखा गया था अुसे हटाकर बाबा साहबने अुसके स्थानपर तिलकको अपना नाम लिखनेके लिअे कहा । तिलक ट्रस्टीकी कानूनी जिम्मेदारीसे पूर्णतया परिचित थे । अुन्होंने बहुत कार्यव्यस्त होनेके कारण अिससे अपनी अनिच्छा प्रकट की, परन्तु जब मरणासन्न बाबा साहबने व्याकुल हृदय अेवं अश्रुपूरित नेत्रोंसे तिलककी ओर देखा और अत्यन्त विकल वाणीमें अपनी अन्तिम अिच्छा दुहराअी तो तिलकके सामने ट्रस्टी-पद स्वीकार करनेके अतिरिक्त और कोअी अुपाय न था । निस्पृह मित्र तिलक अपने मित्रकी अन्तिम अिच्छाको कैसे ठुकरा सकते थे ? वे ट्रस्टी बन गअे । राजद्रोहके अभियोगकी तलवार अुनपर पहलेसे ही लटक रही थी । फिर अुनपर यह नअी नाजुक जिम्मेदारी आ पड़ी । तिलकपर राजद्रोहका अभियोग चला और अुन्हें डेढ़ सालकी सश्रम सजा हुअी । जेलसे छूटते ही अुन्होंने मृत बाबा साहबकी युवती विधवा ताअी महाराजको औरंगाबादके जगन्नाथ नामक अेक होनहार लड़केको गोद लेनेकी सुविधा दी । तिलकके विरोधियोंने जिनमें कअी राजनीतिक क्षेत्रके विरोधी भी थे, ताअी महाराजको भड़का दिया और तिलकपर यह आरोप लगवाया कि अुन्होंने

अुनकी अिच्छाके विरुद्ध जगन्नाथ महाराजको गोद लिवाया है। अिसके अतिरिक्त विधवा ताअी महाराजने कोल्हापुरके बाला महाराज नामक गृहस्थको गोद लिया और बाला महाराज अपने परिवारके साथ पूनामें मृत बाबा साहबके निवास-स्थानपर रहने लगे। तिलकने ताअी महाराज और अुनके नअे दत्तक पुत्रको समझानेकी चेष्टा की। अुनको कानूनी भय भी बताया, किन्तु तिलकके विरोधियोंने बेहद जाल फैला रखा था। कहा जाता है कि कोल्हापुरके महाराज नअे दत्तकके पक्षमें थे और वे तिलकके कट्टर विरोधी थे, क्योंकि तिलक अँग्रेजी राज्यके विद्रोही नेता थे। जब समझौता नहीं हो सका तब प्रमुख संरक्षककी हैसियतसे तिलकने बाला साहबको निवासस्थान छोड़नेके लिअे नोटिस दिया और अपने द्वाररक्षक नियुक्त किअे। आग भड़कने लगी। विधवा ताअी महाराज पूनाके डिस्ट्रिक्ट मैजिस्ट्रेट मि० अंस्टनसे भेंट करनेके लिअे अुनके बंगलेपर गअीं और अुन्होंने तिलकके विरुद्ध बहुत विषाक्त बातें कहीं। मि० अंस्टन भी दो-तीन बार ताअी महाराजके निवास-स्थानपर चाय-पार्टीके लिअे आअे। तिलक अपने निश्चय पर डटे रहे। तिलकके विरुद्ध षड्यन्त्र रचा गया और ताअी महाराजने मि० अंस्टीनके पास तिलकके बन्दीवाससे अपनी मुक्तिके लिअे प्रार्थना-पत्र प्रेषित किया। मि० अंस्टीन तो राजद्रोही तिलकको सतानेके लिअे अुतावले ही हो रहे थे; अिसलिअे अुन्होंने पुलिस भेजकर ट्रस्टियोंके पहरेदारोंको हटवाया और संरक्षकोंका भत्ता रद्द कर दिया। तिलकने हाअीकोर्टमें अपील की और फिरसे ट्रस्टियोंका भत्ता दिलवाया तथा पहरेदारोंकी पुनः नियुक्ति कराअी। तिलककी विजय हुअी। स्वर्गीय बाबा साहबका निवास-स्थान छोड़कर बाला साहबको कोल्हापुर लौटना पड़ा। अिसी बीच मि० अंस्टीनकी दुष्टतासे तिलकपर सरकारकी ओरसे फौजदारी अभियोग प्रारम्भ हुआ। अुनपर सात आरोप लगाअे गअे, जिनमें धोखा देना, मृत बाबा साहबके धनका दुरुपयोग करना और झूठी गवाही देना अित्यादि मुख्य थे। तिलक टससे मस नहीं हुअे। अुन्हें भविष्यका भयंकर स्वरूप पहलेसे ज्ञात था।

सरकारने अिस अभियोगकी कानूनी कारवाअीके लिअे मि० क्लेमन्टस नामक स्पेशल मैजिस्ट्रेटकी नियुक्ति की। स्पेशल मैजिस्ट्रेटने लगातार ५८

दिनों तक अिस फौजदारी मुकदमेकी सुनवाअी की। तिलककी ओरसे अुनके मित्र श्री खरे पैरवी करते थे और तिलक स्वयं अुन्हें कानूनी मदद देते थे। तिलकके सब मित्र चिन्ताग्रस्त थे, क्योंकि यह समय अुनके चरित्र अेवं शीलकी अग्नि-परीक्षाका था। यदि वे फौजदारी अदालतमें अपराधी सिद्ध हो जाते तो अुनकी राजनीतिक प्रतिष्ठा और नेतृत्वको धक्का लगता। परन्तु स्थितप्रज्ञ तिलक शान्त थे। "सत्यमेव जयते" अुनका अटल सिद्धान्त था। परमेश्वर पर अुनका पूरा भरोसा था। अन्तमें स्पेशल मैजिस्ट्रेटने १८४ पन्नोंका लम्बा-चौड़ा निर्णय सुनाया। मैजिस्ट्रेटने लिखा कि "तिलकका हेतु निस्वार्थ है, परन्तु झूठी साक्षी देनेके आरोपमें अुन्हें डेढ़ वर्षकी सश्रम सजा दी जाती है, और अिसके अलावा १००० रुपया जुर्माना किया जाता है।" दुर्भाग्यसे तिलक फौजदारी गुनहगार सिद्ध हुअे। मित्रों तथा जनताको यह जानकर सन्तोष हुआ कि स्पेशल जजने तिलकके निस्वार्थ हेतुका आदर किया। अुसी दिन जमानत पर अुनकी रिहाअी हुअी। बादमें सेशन कोर्टने भी तिलकको दोषी ठहराया, किन्तु सजा अेक वर्षसे घटाकर केवल छह मासकी कर दी। तत्काल ही कोर्टमें तिलकके हाथोंमें हथकड़ियाँ डाल दी गअीं तथा मामूली फौजदारी अपराधीकी भाँति अुन्हें येरवड़ा सेन्ट्रल जेल भेज दिया गया। अुनके अनेक मित्रोंके नेत्रोंसे आँसू बहने लगे। सामान्य जनता शोकमें डूब गअी। चार-पाँच दिन तक जेलमें रखनेके पश्चात् वे जमानतपर छोड़ दिअे गअे। अुन्होंने हाअीकोर्टमें अपील की और अगले महीनेमें ही हाअीकोर्टने अुन्हें पूर्ण रूपसे निर्दोष ठहराया।

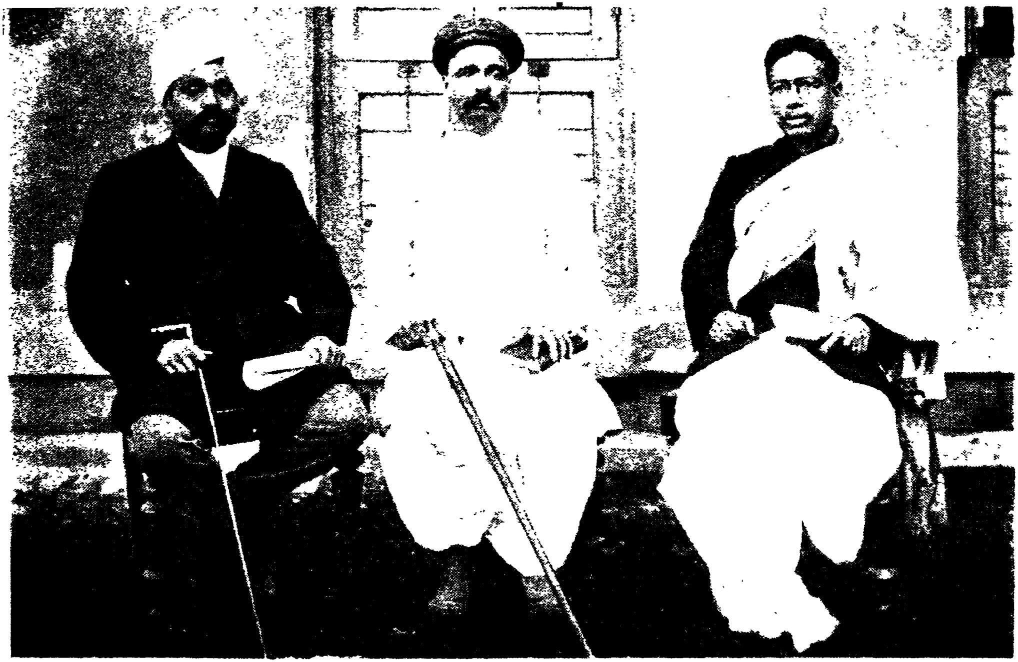
विराट् सभामें स्वागत

१९०४ के मार्चकी २२ तारीखको महर्षि अण्णासाहेब पटवर्धनकी अध्यक्षतामें रेमार्केटके मैदानमें पूनाकी जनताने तिलकका हार्दिक स्वागत किया। लगभग बीस हजार श्रोताओंने अुनके प्रति खड़े होकर आदर व्यक्त किया, 'जयजयकार' की। अुन्होंने जनताकी वन्दना स्वीकार की और गम्भीरतासे कहा– "आनन्दके समय हँसना और दुःखके समय रोना अज्ञानके लक्षण हैं। सुख तथा दुःख और निन्दा-स्तुतिकी चिन्ता न कर अपने कार्यपर डटे रहना ही पुरुषार्थका लक्षण है। अतअेव आप सच्चे पुरुषार्थी

बननेका प्रयत्न कीजिअे । परमेश्वर आपको अुचित बल दे, मेरी अुससे यही प्रार्थना है ।''

अटल अुदार वृत्ति

लोकमान्य तिलक दोषमुक्त हुअे, परन्तु जगन्नाथ महाराज और बाला महाराजके बीच दुश्मनों-सी स्पर्धा चल पड़ी और दीवानी दावा बम्बअी हाअीकोर्टसे लन्दन स्थित प्रिवी कौंसिल तक गया । जैसे मलेरियाका बुखार बार-बार रोगीको सताता है, वैसे ही यह दीवानी मुकदमा सन् १९१९ तक समय-समय पर तिलकको सताता रहा, परन्तु तिलकने बड़ी सहनशीलता और लगनसे सफलता प्राप्त की । अन्तमें अुन्हें अिसके लिअे प्रीवी कौंसिलके समक्ष लंदन जाना पड़ा । जब लंदन जाने लगे तब जगन्नाथ महाराजने बड़ी नम्रतासे अुनसे अनुरोध किया कि अिस मुकदमेमें जो खर्च हुआ है, अुसे स्वीकार करें और भावी लंदन-यात्राका खर्च भी लें । तिलकने हँसकर अुत्तर दिया--''क्या आप अपनी अिस्टेट मेरी अिस्टेटसे अलग मानते हैं ? मैं आपको अपना तीसरा पुत्र मानता हूँ । अतः आपसे (पुत्रसे) खर्च लेनेका मुझे नैतिक अधिकार नहीं है ।'' यह अुत्तर सुनकर जगन्नाथ महाराज मौन रह गअे । वे तिलककी आर्थिक स्थितिसे पर्याप्त परिचित थे, अतअेव अुन्होंने धैर्यके साथ कहा कि ''यह व्यवहारकी बात है अतअेव आप व्यय हुआ धन अवश्य स्वीकार करनेकी कृपा करें ।'' तिलकने गम्भीर होकर स्वीकृति प्रदान की और कहा कि ''आप अपना बंगला और बगीचा मुझे दे दीजिअे, क्योंकि अुन्हें मुझे 'न्यू पूना कालेज' को दान करना है । यदि अिनका मूल्य तीस हजार रुपया है तो अिसके अलावा मैं अितनी ही और रकम आपको अपना तीसरा पुत्र मानकर दान देता हूँ ।'' जगन्नाथ महाराज अवाक् हो गअे । मानसिक तथा शारीरिक कष्टके अलावा अिस मुकदमेमें तिलकने अपने पाससे लगभग साठ हजार रुपअे व्यय किअे, किन्तु मृत मित्रके पुत्र या पत्नीसे अेक पैसा भी स्वीकार नहीं किया । क्या यह अुपनिषद्के ''मा गृधः कस्यचिद्धनम्'' सिद्धान्तका जीता-जागता अुदाहरण नहीं है ?



बाऑं ओरसे—लाला लाजपतराय, लोकमान्य तिलक और विपिनचन्द्र पाल

ग्यारहवाँ प्रकरण

सूरतमें संघर्ष

अेकोऽहमसहायोऽहं कृशोऽहमपरिच्छदः ।
स्वप्नेप्येवंविधा चिन्ता, मृगेन्द्रस्य न जायते ॥

The great indomitable Tilak would break but not bend.
—Pandit J. Nehru

कलकत्तेमें कांग्रेस द्वारा लोकमान्य तिलकके स्वराज्य, स्वदेशी, बहिष्कार और राष्ट्रीय शिक्षाका चतुःसूत्रीय कार्यक्रम स्वीकार किये जाने पर नरमदल-वादी नेता चिढ़-से गअे, क्योंकि अुन्हें अैसा प्रतीत होने लगा कि कांग्रेस पर हमारा अेकाधिपत्य समाप्त हो रहा है । कलकत्ता-अधिवेशनमें बहिष्कारके प्रस्तावपर बड़ा कड़ा और तीखा विवाद हुआ, जिसमें प्रस्तावका समर्थन लोकमान्यने किया और सर फिरोज शाह मेहताने अुसका खण्डन करनेकी भरसक कोशिश की । अन्तमें लोकमान्य तिलककी ही विजय हुअी । अिस अवसरपर सर फिरोज शाहने लोकमान्य तिलकका व्यंग्य भरा अभिनन्दन करते हुअे कहा था कि "श्री तिलक यह बम्बअी नहीं है, अिसलिअे आपने बहुमत प्राप्त कर लिया ।" अुसपर गो. कृ. गोखले जो कि मेहताके पक्ष-पाती थे अेकाअेक बोल अुठे—"श्री मेहता ! आप तिलककी शक्तिकी महिमा नहीं जानते ।" तिलक केवल मुस्कराकर रह गअे । वे यह भी ताड़ गअे कि भविष्यमें अुन्हें नरमदलसे अन्तिम तथा करारा संग्राम करना होगा क्योंकि कोअी भी धनसम्पन्न तथा चिरअधिकारारूढ़ दल अपनी पराजयसे अेकाअेक क्षीण नहीं होता । तत्पश्चात् दोनों दल अपनी-अपनी शक्ति बढ़ानेमें लग गअे । महाकोशलके रायपुर स्थानमें प्रान्तीय परिषद हुअी जिसमें नरमदलवादी नेताओंने अुग्रदलवादियोंको पराजित कर कलकत्ता

काँग्रेसमें पारित प्रस्तावोंमें अपने अनुकूल परिवर्तन करवा लिअे। यही हाल सूरतकी बम्बअी प्रान्तीय परिषद्में हुआ। लोकमान्य तिलकके सम्मिलित न होनेसे सर फिरोज शाह मेहताने वहाँ बहिष्कारका प्रस्ताव पेश ही नहीं होने दिया। अन्य प्रस्तावोंपर भी नरमदलकी नीतिकी पूरी छाप पड़ी। मेहताका अुत्साह दुगुना हुआ। अब अुन्होंने अेक नअी चाल चली। अुन्होंने नागपुरके नरमदलवादियोंको भड़काया और काँग्रेस-अधिवेशनका अुनसे आमन्त्रण दिलवा दिया। आगामी अधिवेशन नागपुरमें होना तय हुआ। महाकोशल तथा नागपुरके नरमदलवादियोंने सर मेहताको पूरा आश्वासन दिया था कि वे वहाँ बाजी मार लेंगे। अुधर लोकमान्य तिलकने भी कमर कसी। काँग्रेसकी स्वागत-समितिके २४०० सदस्य बने जिनमेंसे १५०० तिलकके पक्षपाती थे। नागपुरमें अपूर्व अुत्साह छा गया। लोकमान्य तिलकके काँग्रेसका सभापति होनेकी सम्भावना दिखाअी देने लगी। सर फिरोजशाह मेहता और अुनका नरमदल घबड़ा गया। मेहताने आल अिण्डिया काँग्रेस कमिटीसे काँग्रेसका आगामी अधिवेशन नागपुरके बजाय अपने गढ़ सूरतमें करानेका निश्चय करवा लिया। लोकमान्य तिलकने विरोध किया किन्तु व्यर्थ।

कौन सभापति होगा ?

सर फिरोज शाह मेहताके नरमदलने सभापतिके पदके लिअे अपने कट्टर अनुयाअी डा. रासबिहारी घोषका नाम प्रस्तावित किया और अवैधानिक ढंगसे अुसे स्वीकृत भी करवा लिया। लोकमान्य तिलकने अिस अवैधानिक कारवाअीका स्पष्टतया विरोध किया क्योंकि काँग्रेसका सभापति चुननेका अेकमात्र अधिकार काँग्रेसके प्रतिनिधियोंको ही था। संयोगसे अिसी समय मण्डाले जेलसे पंजाबसिंह लाला लाजपतरायकी रिहाअी हुअी, जहाँ वे चार महीनों तक बिना किसी अपराधके कैद थे। लालाजीके प्रति लोकमान्य तिलकका आदरभाव था अिसलिअे अुन्होंने लालाजीका नाम सभापति-पदके लिअे प्रस्तावित किया। वे किसी तपे हुअे देशभक्तको काँग्रेसका सभापति बनाना चाहते थे। लालाजी अेक ओर सरकारके

कोपभाजन थे तो दूसरी ओर जनताके प्रेम अेवं आदरके पात्र। तिलकको अैसे ही प्रखर देशभक्तकी आवश्यकता थी न कि सुखजीवी अुच्च न्यायालयके न्यायाधीशों और डाक्टरोंकी। कांग्रेसके केन्द्रीय कार्यालयने तिलकका प्रस्ताव स्वीकार नहीं किया। तिलकने 'केसरी' तथा 'मराठा' में 'महान् देशभक्त लाला लाजपतरायको सभापति बनाओ' शीर्षक लेखमाला लिखी। अुसमें लालाजीकी बुद्धिमत्ता, वाग्मिता, निरपेक्ष सेवावृत्ति, धैर्य और अुग्रदेशभक्ति अित्यादि गुणोंकी सराहना की गअी। आपने कांग्रेस-प्रतिनिधियों तथा अधिकारियोंसे बार-बार प्रार्थना की कि वे लालाजीको सभापति बनाकर अंग्रेज सरकारको मुँहतोड़ अुत्तर दें। लालाजीको अध्यक्ष बनाकर वे सरकारी दमन-नीतिकी सक्रिय भर्त्सना भी करना चाहते थे और साथ ही कांग्रेसके प्रजातान्त्रिक स्वरूपकी रक्षा भी, परन्तु नरमदलवादी टससे मस न हुअे। तिलकने सैकड़ों तार डा० रासबिहारी घोषके पास प्रतिनिधियोंसे भेजवाअे और अुनसे प्रार्थना की कि लालाजी जैसे समयानुकूल सभापतिके लिअे आप स्वयं अपना नाम वापिस लेलें, परन्तु व्यर्थ।

लाल-बाल-पालकी लोकप्रिय त्रिमूर्ति

वास्तवमें सन् १९०७ में पंजाबसिंह लालाजी, लोकमान्य तिलक और बंगसिंह विपिनचन्द्र पाल अखिल भारतवर्षके लोकप्रिय नेता थे। अुनके नाम नवयुवकों और सामान्य जनताकी जिह्वापर खेलते थे। देशके कोने-कोनेमें अुनकी 'जयजयकार' की जाती थी। नवोदित अुग्रदलके तीनों लब्धप्रतिष्ठ नेता थे। अतअेव देशकी भलाअीकी दृष्टिसे लालाजीका सभापति होना अुचित था। किन्तु कांग्रेसपर अधिकार जमाअे रखनेकी चिन्तामें नरमदलके नेता मनचाहा अेवं अवैधानिक आचरण करने लगे। लोकमान्य तिलकने घोषित किया कि वे सूरतकी विषय-निर्धारिणी-समिति या खुले अधिवेशनमें सभापतिके लिअे प्रस्ताव अुपस्थित करेंगे और प्रजातान्त्रिक ढंगसे सभापतिका चुनाव कराअेंगे। अुनकी अिस घोषणासे देशभरमें सनसनी फैल गअी। नरमदलके गढ़ोंमें घबराहट पैदा हुअी और अुग्रदलवादियोंमें अुत्साहकी बिजली

दौड़ गअी। अुधर सर फिरोज शाह भी अपनी मूँछोंपर बल देने लगे। चाहे जैसे हो वे लोकमान्य तिलकको पराजित करनेपर तुले थे। दोनों दलोंके प्रतिनिधि दिसम्बरके अन्तिम सप्ताहमें सूरतमें अेकत्र होने लगे। देशकी आँखें सूरतकी ओर लगीं। कांग्रेस भंग होनेकी आशंका दिन-प्रति-दिन प्रबल होने लगी। दोनों दल अन्तिम संग्रामके लिअे सन्नद्ध होगअे।

लोकमान्य तिलकका भव्य स्वागत

दिसम्बरकी २३ तारीखको लोकमान्य तिलक सदलबल सूरत पहुँचे। स्वागत-समितिने अुनके आगमनकी अुपेक्षा की, परन्तु स्टेशन पर दस हजार दर्शकोंने अुनका हार्दिक स्वागत कर बड़ा लम्बा जुलूस निकाला। अुधर मनोनीत सभापति डा० रासबिहारी घोषके स्वागतके लिअे स्टेशनपर डेढ़ सौ से भी अधिक व्यक्ति अुपस्थित नहीं थे। तिलकके स्वागत और जुलूसने कांग्रेसके तथाकथित सभापतिका स्वागत फीका कर दिया। सायंकाल विराट् सभा हुअी जिसमें ५० हजारसे अधिक श्रोता अुपस्थित थे। लोकमान्य तिलकने अिस सभामें अपने कार्यक्रमका विस्तारपूर्वक विवेचन किया। अुन्होंने जनतासे अनुरोध किया कि गत वर्ष कलकत्तेमें जो कार्यक्रम कांग्रेस द्वारा मान्य किया गया था अुसपर अटल रहनेमें ही देशका कल्याण है। अुन्होंने नरमदलकी अवैधानिक नीतिकी तीव्र आलोचना की और नरमदलके नेताओंसे प्रार्थना की कि वे अपनी भूल सुधारकर कांग्रेसकी रक्षा करें। अुन्होंने अपनी सौगन्ध खाकर घोषित किया कि वे कांग्रेसको भंग नहीं करना चाहते वरन् अुसे अधिक प्रबल बनाना चाहते हैं। अुग्रदलकी स्थापना अँग्रेज सरकारसे लोहा लेनेके लिअे हुअी है न कि अपने देश-भाअी नरमदलवादियोंका विरोध करनेके लिअे। अुनकी यह अुत्कट अिच्छा थी कि कांग्रेसका कार्य वैधानिक ढंगसे आगे बढ़े और अिसी कारण अुन्हें विवश होकर संघर्षके लिअे सन्नद्ध होना पड़ा। अुन्होंने सूरतकी जनतासे सहायताके लिअे अनुरोध किया। जनताने अुनकी प्रार्थना स्वीकार की और लोकमान्य तिलककी "जयजयकार" से आकाश

गूंज अुठा। लोकमान्यने नरमदलके नेताओंसे फिर प्रार्थना की कि वे खुले दिलसे चर्चा कर संघर्ष टालनेमें सहयोग दें। डा० पट्टाभि सीतारामय्याने कांग्रेसके अितिहासमें लिखा है कि :--" A frank discussion among the leaders of the two parties ought to have been sufficient to clear the position and the question could have been dealt with on merits. But this could not take place, possibly on account of pique on the part of some moderate leaders." अर्थात्, "यदि श्री तिलककी प्रार्थनाके अनुसार दोनों दलोंके नेता खुले दिलसे चर्चा करते तो सूरतका संघर्ष टल जाता, परन्तु नरमदलके कुछ नेताओंके हठसे अैसा नहीं हो सका।" विवश होकर स्वयं लोकमान्यको कलकत्तेमें स्वीकृत स्वराज्य प्रस्ताव कायम रखने तथा प्रजातान्त्रिक ढंगसे कांग्रेसका कार्य चलानेके लिअे संघर्ष करनेका निश्चय करना पड़ा।

संघर्षका पहला दिन

कांग्रेसका अधिवेशन प्रारम्भ हुआ। लगभग सोलह सौ प्रतिनिधि सम्मिलित हुअे थे जिनमें केवल सौ अुग्रदलवादी थे। स्वागताध्यक्षका भाषण शान्तिपूर्वक सुना गया। प्रचलित परिपाटीके अनुसार सभापतिके-पदके लिअे नाम प्रस्तुत हुआ। प्रस्ताव प्रस्तुत होते ही सभा-मण्डपमें हलचल मच गयी। सुविख्यात वक्ता सुरेन्द्रनाथ बेनर्जीने अपनी अूंची आवाज और प्रभावशाली वाणीमें प्रस्तावका समर्थन करना प्रारम्भ किया। परन्तु मण्डपमें हल्ला-शोरगुल अितना बढ़ गया कि सुरेन्द्रनाथका शंखनाद अुसमें डूब गया। दोनों दलोंके प्रतिनिधियोंमें धक्का-मुक्की होने लगी। अुग्रदलके प्रतिनिधि बुरी तरहसे पीटे गअे क्योंकि वे अल्प संख्यामें थे। कअी प्रतिनिधियोंके शरीरपर जख्म हुअे और अुनके वस्त्रोपर रक्तके छींटे दिखाअी देने लगे। सभाका नियन्त्रण करना असम्भव हो गया। सभा-स्थलको रण-क्षेत्रका स्वरूप प्राप्त हो गया। अधिवेशनकी कारवाअी दूसरे दिनके लिअे स्थगित हो गअी। लोक-मान्य तिलकने अिस अनुचित मुठभेड़ तथा मारपीटकी तीव्र भर्त्सना और

आलोचना की । अुन्होंने पुनः समझौतेका प्रयास किया । लालाजीको शान्ति-दूत बनाकर सर फिरोज शाहके पास भेजा । नरमदलके नेताओंसे अिसे अुनकी दुर्बलताका लक्षण माना । अुन्हें अपने बहुमतपर अभिमान था । अतअेव अुन्होंने तिलकका अनुरोध फिरसे ठुकरा दिया । लालाजी हताश होकर लौटे । लोकमान्य तिलकका धैर्य लेश मात्र भी विचलित नहीं हुआ । अुन्होंने अपने अनुयायियोंको धैर्य धारण करनेका अुपदेश दिया और कहा कि "पाशविक बलसे सत्य कभी नहीं मरता । अन्तमें सत्यकी ही विजय होती है । यह अपनी परीक्षाका अवसर है । अपनी ओरसे किसी भी प्रकारकी असभ्य तथा अनुचित चेष्टा न हो अिसकी पूरी सावधानी रखकर प्रत्येक सदस्यको कलके अधिवेशनमें सम्मिलित होना चाहिअे ।"

चट्टानकी तरह अडिग

दूसरे दिन सभा-मण्डप पूरा भरा था । भयका प्रभाव स्पष्ट दिखाअी दे रहा था । जहाँ-तहाँ गुंडे और मल्लाह हाथमें लठ्ठ लिअे बैठाअे गअे थे । प्रत्येक अुग्रदलवादी प्रतिनिधिके पीछे दो मल्लाह थे । मंडपके प्रवेश-द्वारों और बाहर पुलिसका कड़ा प्रबन्ध था । प्रतिनिधि चिन्ताग्रस्त दिखाअी देते थे । अैसा मालूम होता था कि वहाँ अुग्रदलका अन्त हो जायगा । ख्यातनाम वक्ता सर सुरेन्द्रनाथने कलका अधूरा भाषण प्रारम्भ करके समाप्त किया । अुनकी प्रभावशाली वाणीसे जहाँ-तहाँ शान्ति छा गअी क्योंकि अुन्होंने प्रारम्भमें ही मुठभेड़की तीव्र भर्त्सना कर सबको अपने दिल साफकर मेलजोलसे कार्य करनेका अनुरोध किया । किन्तु नरमदलवादियोंकी कथनी और करनीमें मेल नहीं था । यदि होता तो सूरतमें संघर्ष टल जाता । अनुमोदन होते ही डा० रासबिहारी घोष बड़ी अधीरतासे सभापतिके स्थानपर विराजमान हुअे । लोकमान्य तिलकको संशोधन पेश करनेका अवसर ही नहीं दिया गया । अितनेमें लोकमान्य तिलक जो कुछ दूरीपर बैठे थे खड़े हुअे और तथाकथित सभापतिसे अनुरोध करने लगे कि अुन्हें संशोधन पेश करनेका वैधानिक अधिकार है, क्योंकि अुन्होंने अुसकी सूचना अेक मास पूर्व कांग्रेसके केन्द्रीय

कार्यालयको भेज दी थी। जबतक अुनके संशोधनपर सभा निर्णय नहीं करती तबतक घोष महोदय सभापतिका आसान नहीं ग्रहण कर सकते। नरमदल-वादी प्रतिनिधियोंने अुनका मुँह बंद करनेकी विफल चेष्टा की। स्वयंसेवकोंको आदेश दिया गया और वे तिलककी ओर दौड़े तथा अुन्हें दबानेके लिअे शारीरिक बलका प्रयोग करने लगे। चतुर तिलकने अुनका षड्यन्त्र विफल कर दिया। वे तत्काल बिजलीकी भाँति समाने कूदकर खड़े हो गअे। और डा० रासबिहारी घोषकी टेबलके पास पहुँचकर अुनसे प्रार्थना करने लगे कि वे विधिवत् चुनाव सम्पन्न कराकर ही सभापतिके आसनपर विराजें जिससे वे भी अुनका हार्दिक स्वागत कर सकें। वास्तवमें तिलकका अनुरोध वैधानिक था और वैधानिकतासे काम लिया जाता तो भी नरमदलकी विजय सुनिश्चित थी, परन्तु विनाशकालमें बुद्धिमानोंकी मति भ्रष्ट होती है, यह सिद्धान्त खरा अुतरा। दुर्बुद्धिने नरमदलवादियोंके लिअे गड्ढा खोदा। लोकमान्य तिलक वीरोंके समान निर्भीकतापूर्वक सीनेपर हाथ बाँधे मंचपर खड़े थे। कअी स्वयंसेवक अुन्हें नीचे ढकेलनेकी असभ्य चेष्टा करने लगे। अुन्होंने अुनसे गम्भीर स्वरमें कहा "आप मुझे अुठाकर गेंदके समान फेंक सकते हैं, किन्तु मैं स्वयं तिलमात्र भी नहीं हटूँगा।" अुधर दर्शकोंमें तूफान पैदा हुआ। जनता अपने प्रिय नेताका अपमान सहन नहीं कर सकती थी। मण्डपमें होहल्ला मचा। सभापतिने बार-बार घंटी बजाअी और दर्शकोंसे शान्त रहनेकी प्रार्थना की। दर्शक चिल्लाअे कि "आप सभाके वैधानिक सभापति नहीं हैं।" स्वयंसेवकों, गुंडों, मल्लाहों तथा पुलिसने दर्शकोंके साथ मारपीट करना शुरू किया। मण्डपमें मुठभेड़ हुअी। कुर्सियाँ फेंकी गअीं। बेंचें तोड़ डाली गअीं और अुग्र-रण-संग्रामका स्वरूप दिखाअी देने लगा। आलोड़ित सागरमें चट्टानके समान लोकमान्य तिलक मंचपर अटल खड़े थे। आपकी मुद्रापर स्थितप्रज्ञकी आभा थी। मूर्तिमान सच्चे सत्याग्रही बने थे। सत्यके लिअे अपना बलिदान देने तकको तुले थे। असत्य तथा छलके सम्मुख झुककर जीना नहीं चाहते थे। आत्मसमर्पणकी अपेक्षा वीरगति स्वीकार करनेके लिअे सहर्ष तैयार थे। पण्डित जवाहरलाल नेहरूने अपनी

'आत्म कहानी' में लिखा है कि "महा धैर्यमेरु तिलक आत्मसमर्पणकी अपेक्षा बलिदान होना अधिक पसन्द करते थे।" अिधर तूफान अधिक अुग्र बनता जा रहा था। किसी नरमदलवादी प्रतिनिधिने अपना नया जूता बड़े वेगसे तिलककी ओर फेंका, किन्तु निशाना गलत होनेसे वह गोखलेकी गोदमें गिरा। लोकमान्य निर्विकार चित्तसे शिल्पमूर्तिके समान मंचपर खड़े थे। अुनकी ओर भी कुर्सियाँ फेंकी गअीं। अन्ततोगत्वा काँग्रेस-अधिवेशन भंग हुआ। प्रतिनिधियों तथा दर्शकोंको पुलिस द्वारा मण्डपके बाहर निकलवाया गया। जो घटना नहीं होनी चाहिअे थी और जिसे टालनेके लिअे तिलकने अपमान निगलकर अथक प्रयत्न किया था वह बुरी तरहसे घटी। नरमदलके दुराग्रहसे काँग्रेस भंग हुअी। किन्तु अुल्टा चोर कोतवालको डाँटे की नीतिके अनुसार वे तिलकपर भद्दे आरोप करनेमें नहीं चूके। तिलकने चुनौती स्वीकारकर अुसी दिन शामको होनेवाली अुग्रदलकी 'विधान-परिषद' (कान्स्टीटय़ूशन कनवेंशन) में अुनमें सम्मिलित होनेकी प्रार्थना की।

यह सच्चा पुरुष सिंह है

शामको विधान-परिषद्में लगभग डेढ़ घण्टे लोकमान्यका प्रभावशाली भाषण हुआ। जनताने वह भाषण शान्ति तथा श्रद्धासे सुना। लोकमान्यने अपने वैधानिक ज्ञान तथा राजनीतिक आदर्शोंका निचोड़ जनताके सम्मुख स्पष्ट रूपसे अुपस्थित किया। आपने बताया कि आपका संघर्ष व्यक्तिगत नहीं सैद्धान्तिक है। आपने अनेक देशोंकी राजनीतिक संस्थाओंके अितिहासके आधारपर यह सिद्ध किया कि अिस प्रकारके संघर्ष अस्वाभाविक नहीं है। वामी-युद्धके बाद जर्मन महाकवि गेटेने कहा था कि "मुझे बड़ी प्रसन्नता है कि मैं नअे मनुका अुदय देख रहा हूँ।" अिसी तरह लोकमान्य तिलकने कहा कि "अिस संघर्षने नअे प्रगतिवादी युगको जन्म दिया है। दुख या शर्मकी कोअी बात नहीं।" आपने जनतासे पूछा कि क्या वह काँग्रेसको आराम-तलब लोगोंके विचार-विमर्शका क्लब बनाना चाहती है? जनताने अुत्तर दिया 'नहीं'। अितने अशान्त तथा आशंकित वातावरणमें तिलक

कर्मयोगीकी भाँति निश्चल भाषण दे रहे थे जिसे देखकर अंग्रेजी पत्रकार तथा 'न्यू स्प्रिट अिन अिण्डिया' के ग्रन्थकार मि. नेव्हिनसनने कहा था कि "दैट अिज दि मैन" अर्थात् "वह सच्चा पुरुष-सिंह है।" मि. नेव्हीनसन प्रजातान्त्रिक शासन-प्रणालीके समर्थक थे और आपने कअी देशोंमें भ्रमण किया था। ब्रिटेनमें वे अुग्रदलके चोटीके नेता माने जाते। आपने कअी महान् देशभक्तोंके चरित्र लिखे, किन्तु लोकमान्यकी लोकोत्तर अलौकिकतापर अत्यन्त लट्टू हो गअे थे। आपके मुखसे अुक्त वाक्य सहज ही प्रवाहित हो गया था। आपने अेक अन्य वाक्यमें तिलककी जीवनीका सार भर दिया है। वह वाक्य है "For Mr. Tilak battlefield was paradise" अर्थात् "तिलकके लिअे रणांगण स्वर्गके समान था।" सचमुच ही संघर्ष जितना कठोर या तीव्र होता था तिलक अुतने ही अूँचे अुठते थे।

विजयके पश्चात् विनय

लोकमान्य तिलक व्यक्ति या दलकी अपेक्षा संस्थाको अधिक महत्त्व देते थे अतः अितनी विजय-सम्पादन कर बीतीको बिसार कर आपने पुनः नरमदलवादियोंसे अनुरोध किया कि वे अुनके साथ समझौता करनेके लिअे तत्पर हैं, बशर्ते कि कलकत्ता-काँग्रेसके प्रस्ताव अुसी रूपमें मान्य किअे जाअें। अिसके बदलेमें वे डा. रासबिहारी घोषको सभापति होना भी स्वीकार करनेको अुद्यत थे। वे विरोधियोंको स्पष्टतया बताना चाहते थे कि वे सूरतमें डा. रासबिहारीके व्यक्तिगत विरोधके लिअे नहीं वरन् सिद्धान्तके लिअे लड़े थे। परन्तु नरमदलवादी तो अिस तेजस्वी पुरुषसे किसी प्रकारका सम्पर्क नहीं रखना चाहते थे। अुन्होंने तिलकका अनुरोध फिर ठुकरा दिया। पंजाबसिंह लालाजीने स्वयं लिखा है कि "In 1908 at the request of Lokmanya Tilak I made several attempts to bridge the gulf that had been created between his party and the moderates by the events of Surat but without any success." "अर्थात् लोकमान्यके अनुरोधसे मैंने स्वयं कअी दफे दोनों दलोंमें

मेल करानेका प्रयत्न किया परन्तु वह व्यर्थ हुआ ।" सूरतसे लौटते समय प्रत्येक स्टेशनपर लोकमान्य तिलककी 'जयजयकार' सुनाअी देती थी । लोकमान्य तिलक विजयी सेनापतिकी भाँति पूना लौटे ।

संयुक्त कांग्रेसके हिमायती

नरमदलके दुराग्रहसे विवश होकर लोकमान्य तिलकने अपना अुग्र राष्ट्रीय दल कांग्रेससे पृथक् किया, परन्तु अवसर मिलनेपर वे सदा संयुक्त काँग्रेसका समर्थन करते थे और सदैव सम्मानपूर्ण प्रजातान्त्रिक समझौतेके लिअे अुद्यत रहते थे । अुनका अटल ध्येय था कि काँग्रेस भारतीयोंकी अेक-मात्र प्रतिनिधि संस्था बने और अुसमें अेकाधिक दलोंको अुचित स्थान मिले । सन् १९०८ के दिसम्बर मासमें लोकमान्य तिलकने नागपुरमें अुग्रदलकी पृथक् काँग्रेस करनेकी घोषणा की । अखिल भारतवर्षमें चेतनाकी लहर पैदा हुअी । अुनपर अभिनन्दनके तारों तथा पत्रोंकी वर्षा होने लगी । कोने-कोनेसे समर्थन अेवं आश्वासन मिलने लगा । नअी काँग्रेसकी प्रसूतिकी वेदनाअें प्रारम्भ अी । अिन वेदनाओंने नरमदलको बेचैन किया । अन्ततोगत्वा अँग्रेज सरकारने नरमदलकी प्राण-रक्षा की ।

बारहवाँ प्रकरण

वज्राघातका अन्त

संपदि यस्य न हर्षो विपदि विषादो रणेच धीरत्वम्।
तं भुवनत्रयतिलकं जनयति जननी सुतं विरलम् ।।

लोकमान्य तिलक विजयी सेनापतिकी भाँति सदलबल पूना लौटे। आपके साथ अरविन्द घोष भी थे। सायंकाल विराट् सभामें तिलकने श्री अरविन्दका हार्दिक स्वागत किया क्योंकि बड़ोदा रियासतमें अत्युच्च अमात्य-पदको त्यागकर अरविन्द बंगालके नवयुवकोंके नेता बने थे। प्रभावशाली वक्ता बाबू विपिनचन्द्र पाल तिलकके दाहिने हाथ थे। पूरा बंगाल प्रान्त तिलकका आदर करता था। तिलक स्वयं गम्भीर प्रवृत्तिके आध्यात्मवादी थे। अरविन्द भी अुनके प्रति गहरी आदर-भावना रखते थे। महर्षि अरविन्दकी जीवनीमें तिलकके विषयमें लिखा गया है :—

"Shri Aurobindo's choice of Tilak as the leader of the Nationalists had behind it a deeper understanding of the great soul. In 1918 Shri Aurobindo also wrote, Shri Tilak stands today as one of the two or three leaders of the Indian people who are in their eyes the incarnations of the National endeavour and God given Captains of National aspirations."

महर्षि अरविन्दकी आध्यात्मिक महानता तथा तेजस्वी बुद्धिमत्ताने अुनके प्रति तिलकको आकृष्ट किया था। कर्मयोगी और योगी दोनोंका अनूठा मेल था। अंग्रेज सरकार यह नहीं सह सकी। अिसके अतिरिक्त लोकमान्य तिलकके प्रभावसे चकित नरमदलवादी अुनके विरुद्ध कानाफूसी करने लगे।

भारतमें असन्तोष

अंग्रेज सरकारने बंगभंग कर बंगालमें अुग्र राष्ट्रीय जागृति पैदा की थी। अिस जागृतिका विकास अितना अधिक हुआ कि सन् १९०६ में कांग्रेसने देशकी स्वतन्त्रता प्राप्त करनेके लिअे स्वराज्य, स्वदेशी, बहिष्कार तथा राष्ट्रीय शिक्षाका चतुःसूत्री कार्यक्रम स्वीकार कर लिया। कांग्रेसमें लोकमान्य तिलक तथा बाबू विपिनचन्द्र पालके अुग्र राष्ट्रीय दलकी विजय हुअी। अुक्त कार्यक्रमको कार्यान्वित करनेके लिअे बंगाल तथा महाराष्ट्रमें विशेष रूपसे आन्दोलन आरम्भ हुआ। बंगालमें जहाँ-तहाँ राष्ट्रीय विद्यालयोंकी स्थापना हुअी। अैसे ही अेक राष्ट्रीय कालेजके प्रिन्सिपल महर्षि अरविन्द थे। विदेशी कपड़ोंकी होलियाँ जलने लगीं। विदेशी मालका बहिष्कार होने लगा। सरकार चिढ़ गअी और अुसका दमनचक्र जोरोंसे चला। सैकड़ों देशसेवकोंको जेलमें बन्द किया गया। "वन्देमातरम्" गीतका गाना भी अपराध घोषित किया गया। ज्यों-ज्यों दमनकी हवा चली त्यों-त्यों आन्दोलनकी प्रवृत्ति भी तीव्र होती गअी। निरंकुश गवर्नर जनरल लार्ड कर्जनके समय बंगालके नअे गवर्नर फील्ड फूल्लर थे। अुन्होंने अेक सभामें कहा था "मुसलमान जमात मेरी प्यारी औरत है (फेवरेट वाअिफ) क्योंकि वह राज्यनिष्ठ है और प्रायः राजनीतिक असन्तोषमें योग नहीं देती।" जनतामें अिस वक्तव्यकी तीव्र आलोचना हुअी। अिधर सरकारी दमनचक्र जनताको निष्ठुरतासे पीसनेमें संलग्न था। बारिसालमें बंग प्रान्तीय काँग्रेसका अधिवेशन हो रहा था। सरकारका दिमाग भड़क गया और अुसने वहाँ सैकड़ों गुरखा सैनिक तथा अँग्रेज अफसर अेकाअेक भेज दिअे। अधिवेशन अति कठोरतासे भंग किया गया। जनताने तीव्र प्रतिकार किया अतअेव सैकड़ों देश-सेवक कैद कर लिअे गअे। असन्तोषकी ज्वाला भड़क अुठी। अिधर लोकमान्य तिलकने अपने भाषणों तथा सम्पादकीय लेखों द्वारा सरकारी दमन-नीतिकी तीव्र भर्त्सना की और सरकारको चेतावनी दी कि वह वैधानिक तथा शान्तिप्रिय आन्दोलनोंका मुकाबला सैनिकों द्वारा जनताको पिटवाकर न करे अन्यथा देशकी हालत अधिक बिगड़ जायगी।

वीरनवालीपर बलात्कार

अिसी समय रावलपिंडी स्टेशनपर वीरनवाली नामक हिन्दू कुमारीपर अँग्रेज स्टेशन मास्टर द्वारा बलात्कार करनेका समाचार फैला। बेचारी वीरनवालीके पिताने अुस अँग्रेजके खिलाफ कोर्टमें फरियाद दाखिल की, परन्तु वह निर्दोष ठहराया गया। समस्त भारतमें अिसका घोर विरोध हुआ। लोकमान्य तिलकने अपने सम्पादकीय लेखमें अँग्रेज सरकारकी भेद-युक्त न्यायनीतिकी कठोर आलोचना की और निर्भीकतासे कहा कि अिस अँग्रेजी राज्यमें न्यायकी आशा करना पत्थरसे दूध निकालनेके सदृश है। वीरनवालीपर किअे गअे बलात्कारका समाचार सुनकर लोकमान्य तिलक अितने बेचैन हुअे कि अुस रात वे घण्टेभर भी नहीं सो सके। अपने अेक निकटस्थ मित्रसे अुन्होंने कहा था कि "क्या हम भारतीय लोग अितने गअे-बीते हो गअे हैं कि अपनी माँ-बहिनोंकी अिज्जत भी सुरक्षित नहीं रख सकते? अैसे अपमानित जीवनपर धिक्कार है!" अिससे अुनके हृदयकी कसकका पता चलता है।

पूनामें लोकमान्यका राज्य

अिसी समय पूना जिला-सभाका वार्षिक अधिवेशन सम्पन्न हुआ जिसमें स्वराज्य, स्वदेशी, बहिष्कार तथा राष्ट्रीय शिक्षाके कार्यक्रमको शीघ्रातिशीघ्र कार्यान्वित करनेपर विशेष जोर दिया गया। अिसके अतिरिक्त शराबबंदीके लिअे सरकारी शराबकी दूकानोंपर पिकेटिंग करना भी तय हुआ। पूना तथा महाराष्ट्रमें यह कार्य तत्परतासे किया जाने लगा। सरकारने पिकेटिंग करनेवाले सैकड़ों स्वयंसेवकोंको कैद किया। लोकमान्य तिलक स्वयं अिस आन्दोलनका संचालन कर रहे थे। पिकेटिंग अितनी शान्ति तथा अनुशासित ढंगसे हुअी कि सरकारको भी अचंभेमें पड़ जाना पड़ा। पूनाके आबकारी कमीशनरने अपनी रिपोर्टमें लिखा कि "गत दो सप्ताहसे पूनामें लोकमान्य तिलकका शासन चल रहा है।" क्या यह तिलकके नेतृत्वकी विजय नहीं थी? क्या यह महात्मा गांधीके भावी सत्याग्रहका बाल स्वरूप नहीं था?

अिस आन्दोलनसे अँग्रेजोंके व्यापारको बड़ी गहरी चोट पहुँची। सरकार तिलकपर मन-ही-मन क्रुद्ध हुअी क्योंकि अुसकी दृष्टिमें अुन्होंने शान्ति और सुव्यवस्थामें बाधा अुपस्थित की थी।

लार्ड मोर्लेकी आलोचना

बंगालमें बंग-विच्छेद रद्द करवानेका आन्दोलन चल ही रहा था कि सन् १९०७ की जूनमें भारत-मंत्री लार्ड मोर्लेने अेक वक्तव्य प्रकाशित किया जिसमें अुन्होंने जोर देकर कहा कि "बंग-विच्छेद वज्रलेप है, वह होकर ही रहेगा। मैं दूरतक देख सकनेवाली दूरबीनसे देखता हूं, परन्तु मुझे भारतके स्वराज्यका चाँद नहीं दिखाअी देता। अतअेव मेरा विश्वास है कि भविष्यमें काफी समय तक भारतमें निरंकुश शासन कायम रहेगा। राजनीतिक आन्दोलन तथा असन्तोप अुत्पन्न करनेवाले अँग्रेजी साम्राज्यके शत्रु हैं।" अिस वक्तव्यने धधकती हुअी आगमें घीका काम किया। असन्तोपकी आग और अधिक प्रज्जवलित हुअी। लोकमान्य तिलकने अपने तीन सम्पादकीय लेखोंमें मोर्ले साहबके वक्तव्यकी कटु आलोचना की। आपने लिखा कि मोर्ले साहब दूरबीनसे वास्तविकताको ठीक प्रकारसे कैसे देख सकते हैं, क्योंकि पीलिया रोगसे पीडित व्यक्तिको कोअी भी वस्तु साफ और यथार्थ रूपमें नहीं दिखलाअी देती। अुन्होंने सरकारको गम्भीर चेतावनी दी कि वह समझदारीसे कार्य करे अन्यथा देशकी हालत नियंत्रणके परे हो जायगी। देशके सच्चे कार्यकर्ताओंने तिलकका साथ दिया।

अिधर बंगालमें हालत बहुत ही खराब हो गअी। जनताको पूर्ण निराशा हुअी। अुसका अँग्रेजोंकी न्यायबुद्धिपरसे विश्वास हट गया। बहिष्कारका आन्दोलन तीव्र होने लगा। सरकारी अफसरोंको मोर्ले साहबके वक्तव्यसे प्रोत्साहन मिला। वे अधिक मदोन्मत्त हुअे। दमनचक्र तीव्र गतिसे चल रहा था। जुलूस निकालना, सभा करना सब गैर कानूनी ठहराया गया। अैसी नाजुक स्थितिमें गुरखा सैनिकों और पुलिसके जवानों द्वारा देशसेविकाओंपर किअे गअे अत्याचारोंका समाचार देशके अेक कोनेसे दूसरे

कोने तक हवाके समान फैल गया। बंगालके नवयुवकोंमें असंतोषकी अग्नि प्रज्वलित हो अुठी। वे वैधानिक तथा प्रकट तरीकोंसे सरकारी नीतिका प्रतिकार करनेमें असमर्थ थे क्योंकि सरकारने नागरिकोंके मूल अधिकारोंपर प्रहार किया था। विवश हो बंगालके नवजवानोंने षडयन्त्रका गुप्त मार्ग अपनाया और अवसर प्राप्त होते ही जुल्मी कलेक्टर, कमिश्नर तथा गवर्नरकी हत्याका अुग्र क्रान्तिकारी आन्दोलन प्रारम्भ किया। ढाकाके कलेक्टरकी हत्या हुअी और शहीद खुदीराम बोसने मुजफ्फरपुरके सेशन जजपर बम फेंककर अुसकी हत्या कर डाली। समूचे बंगालमें क्रान्तिकारियोंके षड़यन्त्रका जाल-सा बिछा गया। यह जाल महाराष्ट्रमें भी फैला था। शैतानके समान सरकार भी दमनपर अुतारू थी। अपराध सिद्ध किअे बिना ही सैकड़ों नवयुवकोंको जेलमें बन्द कर दिया गया था।

निर्भीक सम्पादक

लोकमान्य तिलक जैसा सत्यनिष्ठ तथा तेजस्वी सम्पादक भला अैसी विषम परिस्थितियोंमें जलमें कमल जैसा अछूता या निर्विकल्प कैसे रहता? देशके असन्तोषका सरकारसे सच्चा कारण निवेदन करना अुसका धर्म था। वे अपने अिस धर्मका पालन कर रहे थे। अिधर सरकार भी तिलकपर पंजा मारनेकी ताकमें थी। अुसे अवसर प्राप्त हुआ और लोकमान्य तिलककी गिरफ्तारीकी अफवाह फैलने लगी। तिलक अपने देशभक्त सम्पादक मित्र स्व. शि. म. पराजपेकी, जिनके विरुद्ध सरकार राजद्रोहका अभियोग चला रही थी, सहायता करने बम्बअी गअे। किसी हितचिन्तकने अुनसे कहा कि "आप तुरन्त पूना लौट जाअिअे क्योंकि यहाँ आपकी गिरफ्तारीका वारन्ट निकलनेकी अफवाह जोरोंपर है।" लोकमान्यने हँसकर अुत्तर दिया कि "मैं सदा अेक पैर जेलमें रखकर ही कार्य करता हूँ। जहाँ पूरा भारत जेल है, वहाँ छोटा-सा जेल मुझे क्या डरा सकता है? जेलमें जानेका अर्थ बड़े घरसे छोटे घरमें जाना है।" अुत्तर सुनते ही अुनका हितचिंतक मौन हो गया। अल्पावधिमें ही 'यत्र धूमस्तत्र तत्र वन्हि:'

अर्थात् 'जहाँ धुवाँ है, वहाँ अग्निका अस्तित्व होना ही चाहिअे,' न्यायसे वह अफवाह सत्य सिद्ध हुअी और तारीख २२ जून सन् १९०८ को सरकारने लोकमान्य तिलकको बम्बअीमें गिरफ्तार कर लिया। अुधर पूनामें अुनके घर तथा 'केसरी'–कार्यालयकी कड़ी तलाशी ली गअी। सैकड़ों पुलिसवालोंने अुनके घर तथा 'केसरी'–कार्यालयको दस घण्टोंतक घेर रखा। पूनामें सनसनी फैली और दफा १४४ के अनुसार जुलूसों तथा सभाओं अित्यादिपर प्रतिबन्ध लगा दिया गया। आश्चर्यकी बात यह थी कि लोकमान्य तिलकका गर्मीके दिनोंमें रहनेका सिंहगढ़का घर भी पुलिसने अपने अधिकारमें कर लिया। कुछ कागजात जब्त किअे किन्तु कानूनकी दृष्टिसे अुनका कुछ भी महत्व नहीं था। पुलिसकी मेहनत व्यर्थ सिद्ध हुअी।

राजद्रोहका दूसरा गम्भीर अभियोग

लोकमान्य तिलकके 'देशका दुर्भाग्य' और 'ये अुपाय स्थाअी या लाभदायक नहीं हैं' नामक दो लेखोंको लेकर अुनपर दफा १२४ अ और १५३ अ के अन्तर्गत राजद्रोहका आरोप लगाया गया। देशके दुर्भाग्यके अतिरिक्त लोकमान्य तिलकका भी बड़ा दुर्भाग्य था। जिन बैरिस्टर दावरने पहले सन् १८९७ में लोकमान्य तिलककी पैरवी की थी, वे अिस समय सरकारी कृपाके भाजन बनकर सेशन जज हो गअे थे और अुनकी कोर्टमें ही तिलकपर राजद्रोहका अभियोग चल रहा था। न्यायाधीश दावरने अपनी राज्यनिष्ठा व्यक्त करनेकी दृष्टिसे तिलकके प्रति अति कड़ा रुख धारण किया। अुन्होंने अुनको जमानतपर मुक्त करनेसे अिन्कार कर दिया। समय-समयपर छोटी-छोटी बातोंमें अुनका अपमान करनेकी भी चेष्टा करने लगे। अुन्होंने किसी प्रकारकी भी वैधानिक सुविधा नहीं दी। लोकमान्य तिलकने तत्काल ताड़ लिया अतअेव वे स्वयं अपनी पैरवी करनेको सन्नद्ध हुअे। अुन्होंने स्पेशल जूरीकी नियुक्तिका विरोध किया परन्तु व्यर्थ। आश्चर्यकी बात तो यह है कि अिन नौ स्पेशल जूरिओंमें मराठी भाषाकी जानकारी रखनेवाला अेक भी नहीं था। अिसमें सात अंग्रेज और दो पारसी थे। अैसे न्यायालयसे न्यायकी कैसे अपेक्षा की जा सकती थी!

अभियोगकी कारवाओ

तारीख १३ जुलाओीमें अभियोगकी कानूनी कारवाओी प्रारम्भ हुओ। सरकारी अेडवोकेटने दो घण्टे तक भाषण कर पहले दिन कोर्टको लोकमान्य तिलकके मराठी लेखोंका अंग्रेजी भाषामें अनुवाद सुनाया और अदालतसे प्रार्थना की कि तिलकपर दफा १२४ (अ) और १५३ (अ) के अन्तर्गत राजद्रोहका आरोप लगाया जाय। न्यायाधीशने लोकमान्य तिलकसे पूछा कि आपको आरोप मान्य है या नहीं? लोकमान्यने स्थिर चित्तसे दृढ़तापूर्वक अुत्तर दिया कि 'मैं दोषी नहीं हूँ।' सरकारी वकीलने कोर्टके सम्मुख आवश्यक प्रमाण प्रस्तुत किअे। सरकारी ओरियन्टल अनुवादककी गवाही ली गओी। न्यायाधीशने तारीख १४ को तिलकको अपने बचावके लिअे पैरवी करनेको कहा। तिलकने प्रारम्भमें कहा "मुझे बड़ा हर्ष है कि जिस बैरिस्टरने मेरे पहले अभियोगमें मेरी बहुत अच्छी पैरवीकी थी, अुसी बैरिस्टर न्यायाधीशके सम्मुख मैं आज स्वयं अपनी पैरवी कर रहा हूँ। मैं मँजा हुआ वकील नहीं हूँ; तो भी अपनी कानूनी जानकारीके अनुसार मैं अिस गम्भीर आरोपका अेक सप्ताह तक विवेचन करूँगा। मुझे आशा है कि न्यायाधीश तथा जूरी भी शुद्ध न्यायबुद्धिका परिचय देंगे।" आपने कहा कि "पहली बात यह है कि मेरे मराठी लेखोंका अंग्रेजी अनुवाद बहुत गलत और भ्रमोत्पादक हुआ है।" तत्पश्चात् तिलकने कओी वाक्योंका अनुवाद पढ़ा और सिद्ध किया कि व्याकरण, भाषा, शैली और मुहावरोंकी दृष्टिसे वह कितना गलत है। अिस प्रकार पहले दिन लगातार पाँच घण्टे तक अुन्होंने पैरवी की। अुस समय सबको अुनके संस्कृत, मराठी तथा अंग्रेजी भाषाओंके गम्भीर ज्ञानका परिचय मिला। सरकारी अनुवादकसे अुन्होंने अितनी मार्मिक जिरह की कि बेचारेसे अुत्तर देते न बना। अनुवादककी अकल गुम-सी हो गओी।

तीसरे दिन चार घण्टे तक तिलकने राजद्रोहकी सविस्तर व्याख्या की। ब्रिटेनके सन् १७८२ के लायबेल अेक्टके अनुसार 'राजद्रोह' की व्याख्या कैसे परिवर्तित हुओी और प्रकाण्ड वक्ता अेवं मनीषी वर्क तथा फाक्सने अिसकी कैसी व्याख्या की, आयरलैण्डमें राजद्रोहका स्वरूप क्या माना जाता है,

अित्यादि कानूनी तथ्योंके आधार पर अुन्होंने यह सिद्ध किया कि वे राजद्रोही नहीं हैं।

चौथे दिन अुन्होंने चार घण्टे तक स्टेट (राज्य) और गवर्नमेन्ट (सरकार) की व्याख्या की। कअी राजनीतिज्ञोंके ग्रन्थोंके प्रमाण प्रस्तुत किअे। तिलककी सर्वतोभिमुखी विद्वत्ताकी प्रशंसा होने लगी। पाँचवे दिन पाँच घण्टे तक पैरवी कर आपने कहा कि "मैं सरकारमें परिवर्तन कराना चाहता हूँ न कि राज्यका ध्वंस। सरकार लोकाभिमुख बनकर लोकहितका कार्य करे तथा लोगोंके चुने हुअे प्रतिनिधियोंका अुसपर अधिकार हो। अिसके लिअे ही मैं लोक-जागृति पैदा कर रहा हूँ। लोक-जागृति कर सरकारमें अनुकूल परिवर्तन करानेकी वैधानिक नीतिके अनुसार ही मैंने लेख लिखे हैं, अतअेव मैं राजद्रोहका दोषी नहीं हो सकता।" छठे दिन आपने न्यायशास्त्रके अनुसार हेतु, प्रयत्न और परिणाम अित्यादिकी व्याख्या की और अनेक प्रमाण देकर सिद्ध किया कि मेरे लेखोंका पाठकोंपर अनिष्ट असर नहीं पड़ा है। अुन्होंने बताया कि जनताके प्रति समाचार-पत्र सम्पादकोंका क्या कर्तव्य होता है तथा अुसका अुन्हें किस प्रकार पालन करना चाहिअे। अुन्होंने कहा कि "मैं जनताकी यथाशक्ति सेवा करना चाहता हूँ न कि राज्य ध्वंस करना।" सातवें दिन चार घण्टे तक पैरवी कर अुन्होंने प्रयाग, लाहौर तथा कलकत्ताके अुच्च न्यायालयोंमें चलाअे गअे राजद्रोह-अभियोगोंके फैसले अुपस्थित किअे। सब लोग आपकी अिस कानूनी जानकारीकी प्रशंसा करने लगे। अन्तमें आपने अनेक प्रमाण प्रस्तुत कर दृढ़तासे कहा कि "मैं हिंसात्मक दलका समर्थक नहीं हूँ यद्यपि क्रान्तिकारियोंकी ज्वलन्त देशभक्तिके प्रति मुझमें आदरकी भावना है।"

अन्तिम चाह

अन्तिम अर्थात् आठवें दिन आपने केवल अेक ही घण्टे पैरवी की जिसमें जूरियोंसे प्रार्थना करते हुअे आपने कहा कि "मैं वकील नहीं हूँ। अपनी क्षुद्र बुद्धिके अनुसार मैंने पैरवी की है। हो सकता है कि मेरी

भाषण-शैली सरल तथा नम्र न हो, किन्तु मुझे सन्तोष है कि मुझे जो कुछ भी कहना था वह मैंने यथा-विधि प्रस्तुत किया। मेरी यह प्रार्थना है कि अिंग्लैण्डमें सम्पादकोंको जो स्वतन्त्रता दी जाती है वह स्वतन्त्रता आप यहाँ भी सम्पादकोंको दें। अँग्रेजोंको अपनी सर्वतोभिमुखी स्वतन्त्रतापर गर्व है और अुनका यह कथन है कि भारतवर्षकी भलाअीके लिअे ही वे यहाँ पधारे हैं। अैसी स्थितिमें मैं आशा करता हूँ कि आप स्वतन्त्रताकी परम्परा स्थापित करनेका श्रीगणेश करेंगे। मैं अपने लिअे कुछ नहीं चाहता, क्योंकि मैं अब बावन वर्षका वृद्ध हूँ। मैं अपने देशके लिअे लेखन-स्वातंत्र्य तथा भाषण स्वातंत्र्यकी माँग प्रस्तुत करता हूँ। चन्द वर्षों बाद मैं मरूँगा और आप भी। परन्तु यदि आप भारतका अुपकार करेंगे तो भविष्यकी कअी पीढ़ियाँ आपके प्रति कृतज्ञ रहेंगी। व्यक्ति मरता है, परन्तु देश अमर है। अतः आप जो अुचित समझें वही करें।"

अिसके पश्चात् सरकारी अेडवोकेट-जनरलका लम्बा-चौड़ा भाषण हुआ। लोकमान्य तिलकने लेखों द्वारा राजनीतिक असन्तोष जागृतकर राजद्रोह कैसे पैदा किया अिसका अुन्होंने विवेचन किया। न्यायाधीशोंने जूरियोंको संक्षेपमें अभियोगोंका कानूनी स्वरूप बतलाया और परस्पर परामर्शकर अेक घण्टेके भीतर अपनी राय प्रकट करनेका आदेश दिया। जूरी लोग अेक घण्टे तक अलग बन्द कमरेमें विचार-विमर्शकर अपने-अपने नियत स्थानपर विराजमान हुअे। न्यायाधीशने अुनसे पूछा कि 'आप आपसमें सहमत हुअे या नहीं।' अुत्तर मिला 'नहीं'। न्यायाधीशने पूछा, 'आप लोगोंके मतोंकी स्थिति क्या है?' अुत्तर मिला, 'सात मतोंसे दोषी और दो मतोंसे निर्दोषी।' न्यायाधीशने अुनसे फिर अनुरोध किया कि 'वे अेक घण्टे तक फिरसे चर्चा कर सहमत होनेकी चेष्टा कर सकते हैं।' अुत्तर मिला, 'सबके सहमत होनेकी बिलकुल सम्भावना नहीं है।' अतः न्यायाधीशने कहा कि "मैं जूरियोंके बहुमतसे सहमत हूँ अर्थात् तिलक महोदयको राजद्रोही ठहराता हूँ।" यह वाक्य सुनते ही अुच्च न्यायालयके हालमें सन्नाटा छा गया।

कर्मयोगीकी अमर वाणी

हाअीकोर्टका हॉल जनताकी भीड़से ठसाठस भरा था। चींटी भी अिधर-अुधर नहीं जा सकती थी। दर्शनेच्छुक हजारोंकी संख्यामें बाहर खड़े थे। सबके मुखोंपर चिन्ता व्याप्त थी। शोक-निहित सन्नाटा चारों ओर छाया था। प्रत्येकको मन-ही-मन चिन्ता हो रही थी कि वृद्ध लोकमान्यको न जाने कौन-सी और कितनी लम्बी सजा दी जाय। अुनपर क्रान्तिकारियोंको प्रोत्साहन देनेका भी आरोप लगाया गया था। अैसे नाजुक समय जख्मपर नमक छिड़कनेके लिअे सरकारी वकील फिर खड़े हुअे और अुन्होंने न्यायाधीशको तिलकके पहले राजद्रोहके अभियोगकी याद दिलाअी तथा निवेदन किया कि अुस समयकी शेष छह मासकी सजा तिलकको अब भुगतनी चाहिअे। न्यायाधीशने 'हाँ' कहा। अुधर जनताका हृदय अधिक व्याकुल होने लगा। आघात-पर-आघात हो रहे थे। सामान्य जनताका कोमल हृदय कहाँ तक धैर्य रखता? प्रत्येकके मुखपर शोक-छाया था। हरअेककी आँखोंसे आँसू बह रहे थे। न्यायाधीश और जूरी गम्भीर थे। लोकमान्य तिलक स्थितप्रज्ञ जैसे विराजमान थे। तिलकने जनताकी ओर दृष्टि डाली। वे अुद्विग्न हुअे। अितनेमें ही न्यायाधीश दावरने अुनसे पूछा, 'यदि आप कुछ निवेदन करना चाहते हों तो कर सकते हैं।' तिलककी मनचाही बात हुअी। वे भगवानसे मन-ही-मन प्रार्थना कर रहे थे कि अुन्हें कुछ कहनेका समय मिले। लोकमान्यने केवल दो मिनटमें जनताको अमर अध्यात्मवादका सूत्रमय अुपदेश किया। अुनके अन्तिम शब्द सुननेके लिअे सब दर्शक अत्यन्त आतुर थे। अुनके गम्भीर मुखपर आध्यात्मिक आभा चमकने लगी। आपने पहले जनता जनार्दन और बादमें जूरियों तथा न्यायाधीशको प्रणाम किया। अुस प्रणामकी शान तथा गम्भीरता वर्णनके परे थी। अन्ततोगत्वा आकाशवाणी या देववाणी जैसी गम्भीरवाणी लोकमान्यकी मुखगंगोत्रीसे प्रवाहित हुअी—

"Inspite of the Juries' verdict against me, I solemnly declare that I am not guilty. There are higher powers that govern the destinies of man and nation and if it be the wish

of the providence that the cause I stand for should progress by my suffering, I humbly accept it." अर्थात् "यद्यपि ज्यूरियोंने मेरे विरुद्ध राय प्रकट की है तो भी मेरी अन्तरात्मा कहती है कि मैं निर्दोष हूँ। मानवी शक्तिसे परे दैवी शक्ति मनुष्य तथा राष्ट्रकी भाग्य-विधात्री है। यदि अीश्वरकी अिच्छा है कि मेरे स्वतन्त्र रहनेकी अपेक्षा कारागृहमें रहने और कष्ट भोगनेसे मेरा कार्य आगे बढ़ेगा तो अुसको मैं सहर्ष स्वीकार करता हूँ।" अुन्होंने अिस वक्तव्यसे मदोन्मत्त अँग्रेज सरकारकी व्यंग्यभरी आलोचना की और अिस बातका प्रत्यक्ष अुदाहरण अुपस्थित किया कि भयानकसे भयानक शक्तिशाली मानुषी राजसत्ताके सम्मुख भी आध्यात्मवादी पुरुष अपना सिर कभी नहीं झुकाता। अुन्होंने अिस व्यंग्य द्वारा जनतापर प्रकट किया कि वे परमेश्वरकी अिच्छासे जेल जा रहे हैं न कि अँग्रेज सरकारके पाशविक बलसे और अिसका परिणाम देशके लिअे अच्छा ही होगा। स्वामी विवेकानन्दने कहा था—"The Lion when struck to the heart gives out his mightiest roar." अर्थात् वज्राघातसे वनराजसिंह कुत्तेकी भाँति रोता नहीं, अपितु अति भयावह गर्जना करता है। तिलकके बारेमें यही कहा जा सकता है। यह संजीवनी वाणी सुनते ही दर्शकोंमें चेतनाकी लहर दौड़ गअी। शोकका अन्त हुआ और आशा तथा अुत्साहका वातावरण फैल गया।

छह वर्षके काले पानीकी कठोर सजा

रातके साढ़े नौ बजे थे। न्यायाधीशने बड़ी गम्भीरतासे तिलककी ओर देखा और फैसलेका निम्नलिखित वाक्य अुन्हें सुनाया "आपको कड़ी सजा सुनाते समय मुझे दुःख होता है। परन्तु मुझे भी अपना कर्तव्य पालन करना है। आप अति बुद्धिमान हैं। आपका जनतापर काफी प्रभाव है। आप भारतके सामर्थ्य-सम्पन्न नेता हैं। परन्तु आपने अपने लेखों द्वारा जनतामें सरकारके प्रति असन्तोष और अप्रीति प्रसारित तथा जाग्रत कर राजद्रोहका गम्भीर अपराध किया है। आपके लेखोंमें जहाँ-तहाँ क्रान्तिकारी दलके प्रति आदरका

भाव दिखाओी देता है। अिससे सिद्ध होता है कि आपके मनमें सरकारके प्रति द्वेष भरा हुआ है। द्वेषभरे लेखोंसे आप देशमें राजद्रोहकी विषाक्त वृत्ति फैलाते हैं। आप जैसा सम्पादक अिस देशके लिओ अभिशाप है। मैं दफा १२४ अ के अनुसार आपको बीस वर्षों तककी काले पानीकी कड़ी सजा दे सकता हूँ, परन्तु आपकी वृद्धावस्थाको ध्यानमें रखकर मैं आपको केवल छह वर्षोके लिओ कालेपानीकी और १०००) जुर्मानेकी सजा देता हूँ।" अितना कहकर न्यायाधीश अपने स्थानसे अुठे और चल दिओ। अदालती कारखाओी समाप्त हुओी। जनता लोकमान्य तिलकके दर्शनके लिओ अुमड़ पड़ी। लोकमान्यने भी स्मित मुद्रासे सबको प्रणाम किया। पुलिसने तुरन्त भीड़को हटाया और तिलकको मोटरमें बिठाकर अेक अज्ञात तथा अपरिचित मार्गसे रेल्वे स्टेशन ले गओी।

स्थितप्रज्ञकी झलक

अुसी रातको ग्यारह बजेके लगभग लोकमान्यको अेक स्पेशल ट्रेनमें बैठा, अगल-बगलमें अँग्रेजी सैनिकोंके डब्बे जोड़कर, अुन्हें अहमदाबाद ले जाया गया। अचरजकी बात यह थी कि अितनी वृद्धावस्थामें अितनी लम्बी और कड़ी सजा मिलनेपर भी लोकमान्य तिलक रंचमात्र चिन्ताग्रस्त नहीं हुओ। अुनका मन सागरकी भाँति शान्त और निर्विकार था। ज्योंही ट्रेन बम्बओीसे चलने लगी त्योंही तिलक महाराज सो गओ और जब ट्रेन अहमदाबाद स्टेशनपर रुकी तब अुन्हें पुलिस-अधिकारियोंने जगाया। अिस प्रकार लगभग दस घण्टे तक सोये। तिलकका कहना था कि वह मेरी सबसे अधिक लम्बी और सुखभरी नींद थी। अुनको कुछ दिनों तक साबरमतीके सेन्ट्रल जेलमें रखा गया, फिर गुप्त रूपमें अँग्रेज सैनिकोंके संरक्षणमें ब्रह्मदेशके मंडाले सेन्ट्रल जेल भेज दिया गया। वहीं अुन्होंने अपनी छह वर्षकी सजा काटी।

सजाकी अपूर्व प्रतिक्रिया

लोकमान्य सचमुच बड़े लोकप्रिय नेता थे। अुस समय अुनके समान लोकप्रिय नेता अन्य कोओी नहीं था। अिसलिओ अुनको दी गओी सजाकी

समस्त भारतवर्षमें अपूर्व प्रतिक्रिया हुआी। भारतके कोने-कोनेमें हड़ताल मनाआी गआी। अुनकी फोटोके जुलूस निकाले गअे। सार्वजनिक सभाओंमें सरकारकी घोर भर्त्सना कर लोकमान्यका अभिनन्दन किया गया और अुनके दीर्घ आयु-आरोग्यके लिअे भगवानसे प्रार्थनाअें भी की गआीं। विद्यार्थियोंने जहाँ-तहाँ स्कूल बन्द करवाअे और हड़ताल मनाआी। प्रत्येक शहर या गाँवमें दो अथवा तीन दिनों तक बाजार बिलकुल बन्द रहे। सबसे अधिक महत्वकी घटना थी बम्बआीके मिल मजदूरों द्वारा मनाआी गआी छह दिनोंकी दीर्घ हड़ताल। यह अपूर्व हड़ताल मनाकर मजदूरोंने अंग्रेज सरकारके प्रति अपना तीव्र असन्तोष प्रकट किया। बम्बआीके या भारतके मजदूरोंकी यही पहली राजनीतिक हड़ताल थी। मजदूरोंमें अपूर्व जागृति पैदा हो चुकी थी। अुन्होंने लोकमान्यके फोटोका विशाल जुलूस भी निकाला। पुलिसने जुलूस रोका। मजदूर अुत्तेजित हुअे। पुलिस चिढ़ गआी और अुसने निहत्थे मजदूरोंपर लाठी चार्ज किया। परिणाम यह हुआ कि मजदूरोंने भी कुछ पत्थर और आींटें पुलिसकी ओर फेंकीं और अंग्रेज सैनिकोंने मजदूरोंपर गोलियाँ चलाआीं जिसमें लगभग ७५ मजदूरोंकी निर्मम तथा निर्दय हत्या हुआी। लंदनके 'टाअिम्स' पत्रने अिस घटनापर अुस समय निम्नलिखित मत व्यक्त किया था:—

"Among large sections of people Mr. Tilak enjoys a popularity and wields an influence that no other public man in India can claim to equal."

अर्थात् "लोकमान्यकी लोकप्रियताकी बराबरी भारतमें दूसरा कोआी भी नेता नहीं कर सकता।" यह सर्वसामान्य सिद्धान्त है कि अपना शत्रु ही अपनी योग्यता अथवा शक्तिका यथार्थ अनुमान लगा सकता है। क्या यह सिद्धान्त लोकमान्यके सम्बन्धमें खरा नहीं अुतरता?

तेरहवाँ प्रकरण

कर्मयोगीका कारागृह-वास

यस्मान्नोद्विजते लोको लोकान्नोद्विजते च यः ।
हर्षामर्षभयोद्वेगैर्मुक्तो यः स च मे प्रियः ।।

लोकमान्य तिलक मंडालेके कारागारमें लगभग छह वर्षों तक राजबंदी रहे। वे जैसे बाहर लोकप्रिय थे वैसे ही अन्दर भी। गुलाबका फूल कहीं भी खिले अुसकी सुगन्ध बनी ही रहती है। भ्रमर अुसपर लट्टू होते ही हैं। अनेक कार्योंमें व्यग्र रहनेके कारण तिलककी दिनचर्या अव्यवस्थित थी। बाहर वे प्रायः सूर्योदयके पश्चात् जगते थे। किन्तु जेलमें ब्राह्म मुहूर्त अर्थात् सुबह साढ़े चार बजे जगने लगे। जगते ही संस्कृत स्तोत्रोंका पाठ करते। प्रातःस्मरणके पश्चात् शौचादिसे निवृत्त होते और शुचिर्भूत होकर लगभग डेढ़ घण्टेकी समाधि लगाते। जेलके वार्डर्स तथा पहरेदार ध्यानस्थ तिलकके दर्शन करनेके लिअे अिकट्ठा होते थे। अेक समय जब आपकी समाधि भंग होनेको ही थी अेक पहरेदारने आपके चरण छुअे तब अुन्होंने अुसके हाथ पकड़े और अुसको अपने जैसे क्षुद्र मानवके नहीं, परमेश्वरके चरण छूनेका अुपदेश दिया। वे सदा कहते थे कि हम सब विश्वनियंताके बच्चे हैं, अतः हममें भ्रातृभाव होना चाहिअे। अुनकी आत्मौपम्य दृष्टि और अति पवित्र आचरणका प्रभाव अन्य कैदियों तथा जेलके अधिकारियोंपर भी पड़ता था। अिसीलिअे वे तिलकको अवधूत, ऋषि, महात्मा अित्यादि विशेषणोंसे संबोधित करते थे। समाधिके पश्चात् चाय पीकर वे अध्ययन या लेखन-कार्यमें जुट जाते थे। दस बजे स्नान करनेके पश्चात् संध्या तथा मानस पूजामें संलग्न होते थे। बाहरके जीवनमें अुन्हें सन्ध्या या पूजा करते किसीने शायद ही देखा होगा। तब तो बड़ी मुश्किलसे भोजनके लिअे समय निकाल

पाते थे और भोज्य-पदार्थोंकी बिना जानकारी प्राप्त किये तथा बिना स्वाद जाने भोजन समाप्त कर अुठ जाते थे। परन्तु जेलमें शान्त चित्तसे भोजन करने लगे। वे मधुमेहके रोगी थे। अुनका भोजन सत्तूकी तीन या चार रोटियाँ, हरी साक-भाजी और फलोंका रस होता था। हाँ, भोजनके पश्चात् सुपाड़ी चबाना वे कभी नहीं भूलते थे। सुपाड़ी चबाना अुनका अेकमेव व्यसन था। यह व्यसन अुनके विद्यार्थी जीवनमें प्रारम्भ होकर कालान्तरमें बराबर बढ़ता गया। अुनके कमरे तथा आलोंमें सुपाड़ी और अुसे काटनेके लिअे सरौता पड़ा ही रहता था। अेक घण्टे बाद पुनः लिखने और पढ़नेमें जुट जाते थे। लगभग साढ़े तीन बजे शरबत या दूध पीकर कैदी रसोअियों, पहरेदारों और वार्डरसे दिल खोलकर बातचीत करते। अुनके प्रश्नोंके अुत्तर देते और संशय या भ्रम दूर करते। वे अुन्हें रामायण और महाभारतके किस्से सुनाते; अेवं अपना तथा अपने साथियोंका चित्त प्रसन्न कर पुनः अध्ययनमें जुट जाते। दो-ढाअी घण्टोंके मानसिक परिश्रमके बाद नीचे अुतरकर घूमनेका व्यायाम करते। दूसरी मञ्जिलपर तीन कमरोंकी बैरकमें अुनका निवास था और नीचे १३० फीट लम्बा और ५० फीट चौड़ा अहाता था। अुसकी चहारदीवारी अूँची थी। आधे घण्टेतक चहारदीवारीके अन्दर ही घूमते थे। पश्चात् भोजन या फलहार करते थे। रातमें लालटेन न होनेसे, क्योंकि जेलके नियमोंके अनुसार कैदीको लालटेन नहीं दी जाती, वे पढ़ या लिख नहीं सकते थे। अतअेव तीन घण्टे तक चिन्तन या मननमें मग्न रहते थे। शय्यापर लेटनेके पूर्व पुनः ध्यानस्थ होते और तत्पश्चात् नाम-संकीर्तन करते-करते निद्रावश हो जाते। अुनकी समस्त दिनचर्या नियमित तथा परम पवित्र थी।

प्रौढ़ ग्रन्थालय

तिलकका विद्याव्यासंग अुनके सुपाड़ी चबानेके व्यसनसे भी अधिक तीव्र था। जैसे वे प्रतिदिन दो-तीन सुपाड़ी चबा डालते थे, वैसे ही छोटे-मोटे दो-तीन ग्रन्थोंको भी पचा डालते थे। मण्डालेमें पहुँचनेके पश्चात् अपील

करनेपर बम्बअी अुच्च न्यायालयने अुनके सश्रम कारावासको बिना श्रमके कैदमें बदल दिया था। अतअेव जेलके नियमानुसार वे जितने चाहे राजनीतिके ग्रन्थ घरसे मँगवा सकते थे। अुनका गम्भीर ग्रन्थालय विभिन्न गम्भीर शास्त्रीय विषयोंके लगभग पाँच सौ ग्रन्थोंसे परिपूर्ण था। अुसमें वेद, वेदाँग, भाष्य, अुपनिषद्, भगवद्गीता और अुसकी सब टीकाअें, ब्रह्मसूत्र, कअी स्मृतियाँ, अँग्रेजी विश्वकोश, सुकरात, प्लेटो, हीगेल, बेवर, नीत्से, बर्गसाँ, मिल्स, स्पेंसर, बेकन अित्यादि पश्चिमी दार्शनिकों तथा ज्योतिर्गणित, भूस्तर-शास्त्र, व्याकरण अेवं भाषाशास्त्र अित्यादिके ग्रन्थ समाविष्ट थे। वे सचमुच अन्वेषक शास्त्रज्ञ थे। जैसे बालक क्रीडामें रस लेता है, वैसे ही वे शास्त्राध्ययनमें रस लेते थे। वे कोअी अैसा ग्रन्थ लिखनेके लिअे व्याकुल थे जो संसारका बड़ा अुपकार कर सके तथा संसारके श्रेष्ठ अमर ग्रन्थोंमें जिसे सम्मानपूर्वक स्थान प्राप्त हो। चन्द वर्षों बाद अुनके प्रयत्न फूले-फले। अर्थात् अुनके द्वारा 'भगवद्गीता रहस्य' अथवा 'कर्मयोगशास्त्र' की सृष्टि हुअी। यह बड़े संयोगकी बात है कि गीताके अुपदेशक भगवान् श्रीकृष्णका जन्म बंदी-गृहमें हुआ था और गीतापर लिखे गअे आधुनिकतम श्रेष्ठ भाष्य अर्थात् 'कर्मयोगशास्त्र' की रचना भी कारागारमें ही हुअी।

कअी भाषाओंके मर्मज्ञ बने

मंडालेके कारागारमें लोकमान्य तिलकने जर्मन, फ्रेंच और पाली भाषाओंका स्वयं अध्ययन किया। वे संस्कृतके पंडित थे; अतः अुनके लिअे पाली सीखना अत्यन्त सरल था। परन्तु पालीका गहरा अध्ययन अुन्होंने बौद्ध धर्मके मूल ग्रन्थोंका संशोधन करनेकी पैनी दृष्टिसे किया। अिसी प्रकार लोकमान्यने जर्मन भाषाका भी गहन अध्ययन किया। अुन्होंने महान् दार्शनिक बेवर और नित्सेके ग्रंथ पढ़े। फ्रांसीसी तत्वज्ञोंके ग्रन्थोंका भी गहन अध्ययन किया। अितनी वृद्धावस्थामें, तीन अपरिचित भाषाओंका ज्ञान सम्पादन करना कोअी मामूली बात नहीं थी, परन्तु लोकमान्य तिलक कारागृह ही में अनेक भाषाओंके शास्त्रविद् तथा श्रेष्ठ ग्रन्थकार बने।

अेक पत्रमें कर्मयोगीका आत्मचरित्र

विदर्भ अमरावतीके सुविख्यात वकील और नेता श्रीमान दादा साहब खापर्डे तिलकके परम मित्र थे। आप तिलकसे बड़े थे अिसलिअे तिलक आपको दादा साहब कहते थे। दादा साहबका भी तिलकपर अनुज-सा प्रेम था। दादा साहब अपनी कामधेनु जैसी वकालत त्यागकर प्रिवी कौन्सिलमें तिलककी अपील दायर करनेके लिअे लन्दन गअे। वहाँ लगातार दो वर्षों तक रहे। अपीलमें सजा कायम रही। दादा साहबने मित्रकी रिहाअीके लिअे कुछ अुठा न रखा। वे निराश हुअे। अन्ततोगत्वा मित्रकी रोगग्रस्त अवस्था देखकर पसीजे और अुन्होंने तिलकको अैसा पत्र लिखा कि यदि आपकी अिच्छा हो तो मैं कुछ शर्तोंपर आपकी मुक्ति करवा सकता हूँ। यह पत्र लोकमान्य तिलकको मण्डाले केन्द्रीय जेलमें २८ मअीको मिला। आपने दूसरे ही दिन पत्रका स्वाभिमानपूर्ण ओजस्वी अुत्तर दिया जिसमें आपके अलौकिक चरित्रका रहस्य भरा है। आपने लिखा कि :—

मण्डाले सेन्ट्रल जेल,
२९ जून १९०९

मेरे प्रिय दादा साहब,

मैं अपमानकारी शर्तोंको स्वीकार कर कारावाससे मुक्त नहीं होना चाहता। अतअेव मेरा आपसे नम्र निवेदन है कि आप मित्र-प्रेमसे विवश होकर अिस झंझटमें न पड़ें। मेरी राय है कि कारावाससे मुक्त होनेके पश्चात् मैं अन्य स्वतन्त्र नागरिकोंके समान रह सकूँ। अभी मेरी सजाका अेक वर्ष व्यतीत हो चुका है और मुझे पूरी आशा है कि पाँच वर्षोंके बाद आप लोगोंके बीच स्वतन्त्र नागरिकके रूपमें अुपस्थित हूँगा। क्या आपकी यह अिच्छा है कि सरकार द्वारा प्रस्तुत की गअी शर्तोंको स्वीकार कर मैं अपनी सार्वजनिक तथा राजनैतिक आत्महत्या करवा लूं? अब मेरी अवस्था ५३ वर्षकी है और मुझे लगता है कि अधिक-से-अधिक दस वर्ष और जीवित रहूँगा। यदि मैं आपकी अिच्छानुसार शेष जीवनको सरकार द्वारा अुपस्थित

की गअी शर्तों पर मुक्त कराकर पाँच वर्ष तक और सार्वजनिक क्षेत्रमें कार्य कर सकूं तो यह समय मुझे सार्वजनिक या राजनैतिक दृष्टिसे मरे हुअे व्यक्तिके समान बदनामीके साथ व्यतीत करना पड़ेगा । संक्षेपमें कहता हूं कि मैं अैसा अपमानित जीवन बिलकुल पसन्द नहीं करता । यह ठीक है कि मेरा कार्य-क्षेत्र केवल राजनीति तक सीमित नहीं है और मैं कुछ साहित्यिक कार्य कर सकता हूँ । मैंने असपर अच्छी तरहसे विचार किया है और मुझे अपनेको अिस प्रकार मुक्त कराना अुचित नहीं जान पड़ता । अैसा अपमानित जीवन स्वीकार कर मैं अब तकके किये-धरेपर पानी फेर दूंगा । आप अच्छी तरह जानते हैं कि अब तक मैं केवल अपना निजी स्वार्थ या अपने परिवारके कार्यमें ही व्यस्त नहीं रहा, अपितु मैंने लोक-सेवा या देश-सेवा करना अपना परम धर्म माना । यदि मैं अपने व्यक्तिगत सुखके लिअे सरकारकी शर्तें स्वीकार करूँ तो अुसका भारतके सार्वजनिक जीवनपर कितना भयंकर प्रभाव पड़ेगा ?

प्रिय दादा साहब, थिओसफिस्ट होनेके कारण आप परमेश्वरकी अगम्य शक्तिमें विश्वास रखते होंगे और मुझसे अिस बातमें सहमत होंगे कि परमेश्वरकी लीलासे कदाचित अगले पाँच वर्षोंमें अैसी अनपेक्षित परिस्थिति निर्माण हो कि अनायास ही मेरी मुक्ति सम्भव हो जाय । यदि अैसा न हुआ तो भी मैं स्वयं भयंकर-से-भयंकर परिस्थितिका मुकाबला करनेके लिअे सहर्ष कटिबद्ध हूँ । आपने अपने मित्रके प्रति अपना कर्तव्य अच्छी तरहसे निभाया । भगवद्गीताका सिद्धान्त है कि कर्तव्य करना ही मानवका अधिकार है न कि अुसके फलकी प्राप्ति का । अिससे अधिक समुचित तत्व या सिद्धान्तका कथन कर मैं यह पत्र समाप्त नहीं कर सकता । अतीतमें अनेक महापुरुषोंको अपने सिद्धान्तोंके लिअे यातनाअें सहन करनी पड़ी हैं । अतः, यदि मेरा भाग्य भी अुनके समान ही हो तो अुसे कौन टाल सकता है ?

भवदीय,

बालगंगाधर तिलक

लोकमान्य तिलकने यह पत्र अतीव विषम, भयावह अेवं निराशाजनक परिस्थितिमें लिखा था। अिसके द्वारा लोकमान्य तिलकके अुदार मनकी अूँचाअीका पता लगता है। अुत्साहजनक तथा आशापूर्ण परिस्थितिमें अूँचे आदर्शोंके विषयमें लिखना या बोलना सहज है, किन्तु प्रतिकूल परिस्थितिमें अैसा करना अलौकिक ही कहा जायगा।

धर्मपत्नीकी मृत्यु

श्रीमती सत्यभामा बाअी तिलक बड़ी कर्मठ और धर्मपरायणा महिला थीं। पतिके जेल जानेके बाद कुटुम्बका सारा भार अुन्होंने स्वयं सँभाल लिया, परन्तु वे दिन-रात पतिके स्वास्थ्यके लिअे चिन्ताग्रस्त रहती थीं। अुनके स्वास्थ्यपर चिन्ताका बुरा प्रभाव पड़ा और ७-६-१९१२ को अुनकी दुखद मृत्यु हो गअी। अुनकी अस्वस्थताकी जानकारी लोकमान्यको पहलेसे नहीं थी। कारण, व्यवहारनिपुण सत्यभामा बाअीने अुन्हें कभी अपने स्वास्थ्यके सम्बन्धमें कुछ नहीं लिखा क्योंकि अिससे लोकमान्य जेलमें अधिक चिन्ताग्रस्त और दुःखी होते। हिन्दू पतिव्रता अपने प्राणोंकी अपेक्षा पतिके सुखकी अधिक चिन्ता करती है। अुनकी मृत्युका सवाद तिलकको तार द्वारा मिला। तार मिलते ही अुनके मनमें जो शोकयुक्त प्रतिक्रिया हुअी, अुसका वर्णन अुन्होंने स्वयं अपने पुत्रोंको भेजे पत्रमें अिस प्रकार किया है :—

"तार मिला। मेरे मनपर कठोर आघात हुआ। वास्तवमें आपत्तियोंका मुकाबला मैं शान्त चित्तसे करता हूँ, परन्तु अिस दुखद समाचारने मुझे व्याकुल कर दिया। हिन्दू पतिव्रताकी दृष्टिसे यह बहुत अच्छी घटना हुअी, परन्तु मुझे अिस बातका अत्यधिक दुख है कि तुम्हारी माताकी मृत्युके समय मैं लगभग तीन हजार मीलकी दूरीपर जेलमें था। मुझे अिस दुर्घटनाकी भयावह आशंका पहलेसे ही सताती थी। भावी कौन टाल सकता है? मेरी अनुपस्थितिमें माताकी मृत्युने तुम पुत्र-पुत्रिओंको बहुत ही दुखी किया होगा, परन्तु अपने आपको धैर्यसे सँभालना चाहिअे ताकि अध्ययनमें व्यतिक्रम न हो। तुमको यह बात भली-भाँति स्मरण रखना चाहिअे कि जब मेरी

माताकी मृत्यु हुअी थी तब मेरी अवस्था तुमसे भी कम थी। अैसी आपत्तियोंमें मानवको स्वावलम्बनका सहारा लेना चाहिअे। शोक या दुःख मनानेमें व्यर्थ समय नहीं बरबाद करना चाहिअे। जो कुछ होता है वह भगवानकी कृपासे होता है। अुसे धैर्यसे सहना ही पुरुषार्थ है।"

लोकमान्य तिलकने अिस पत्रमें अपने जीवनका तत्व भर दिया था। अुसमें भगवद्गीताके तत्वज्ञानका मर्म भरा था। पत्रका अुनके पुत्रोंपर अपेक्षित प्रभाव भी पड़ा।

मंडाले जेलसे अुन्होंने लगभग पचास पत्र लिखे क्योंकि अुन्हें महीनेमें अेक पत्र भेजनेकी कानूनी सुविधा मिली थी। अिन पत्रोंमें अुनकी अुच्च-न्यायालय तथा प्रिवी कौंसिलमें दायर की गयी अपीलोंके बारेमें भी बहुत-कुछ विवरण था। अिसके अतिरिक्त अुनमें "केसरी" और "मराठा" के संचालन सम्बन्धी सामयिक सुझाव, ताअी महाराजका फौजदारी अभियोग, महाराजा शिवाजी-स्मारक-निधि और पुत्र-पुत्रियोंके अध्ययन सम्बन्धी सुझाव भी समाविष्ट रहते थे। वे राजनैतिक बन्दी थे अिसलिअे राजनैतिक विषयोंपर कुछ नहीं लिख सकते थे, परन्तु अुनके अन्य अैतिहासिक, सांस्कृतिक, सामाजिक तथा साहित्यिक कार्योंका क्षेत्र भी बहुत विशाल था जिनके सम्बन्धमें भी लिखा करते थे। दूरस्थ मंडाले जेलमें भी अुन्हें सामाजिक कार्योंकी चिन्ता लगी रहती थी और बाहरके कार्यकर्ता अुनके पथ-प्रदर्शनकी बुरी तरहसे आवश्यकता अनुभव करते थे। अेक संवाददाताने लिखा था—"Lokmanya Tilak was conspicuous by his absence" अर्थात् "लोकमान्यकी अनुपस्थिति अधिक खटकनेवाली बात थी।"

कअी किताबें लिखनेकी अिच्छा

लोकमान्य तिलककी डायरी पढ़नेसे पता चलता है कि मंडाले-जेलमें 'गीतारहस्य' के अलावा आपका विचार निम्नलिखित अन्य विषयोंपर भी छोटी मोटी पुस्तकें तथा प्रौढ़ निबन्ध लिखनेका था। अिस सूचीमें आपकी सर्वतोभिमुखी प्रतिभाकी झलक दिखाअी देती है :—

(१) हिन्दू धर्मका अितिहास ।
(२) भारतीय राष्ट्रीयता ।
(३) शंकराचार्यका दर्शन ।
(४) भारतके रामायण-कालके पूर्वका अितिहास ।
(५) हिन्दू (ला) कानून विधि ।
(६) म. शिवाजीकी जीवनी ।
(७) खालडीया और भारत ।
(८) Principles of Infinitesimal Calculus.
(गणितशास्त्र विषयक)

राजनीति विषयक

(१) प्रान्तीय शासन ।
(२) हिन्दू राज्य और साम्राज्य ।
(३) मुसलमानोंका भारतमें शासन ।
(४) मराठा साम्राज्य तथा सिख सत्ताका ह्रास ।
(५) ब्रिटेनका भारतपर आक्रमण ।
(६) भारतके राजनीतिक सुधार ।
(७) सभ्यता विषयक गम्भीर चिन्तन । अित्यादि ।

अचानक कारामुक्ति

सरकारने अेका-अेक ८ जून १९१४ का लोकमान्य तिलकको जहाजपर सवार कराकर मद्रास भेज दिया । वे अंग्रेज सैनिकोंके संरक्षणमें अत्यन्त गुप्त रूपसे मद्रासमे पूना पहुँचाअे गअे । रातको दो बजे अँग्रेज सैनिकोंसे घिरे हुअे अपने घरके दरवाजेपर अेका-अेक अुपस्थित हुअे । पुलिस अधिकारियोंने घरके पहरेदारको जगाया और जोर देकर कहा कि तेरे मालिक मि. तिलक आ गअे हैं, अुन्हें अन्दर जाने दे । बेचारा पहरेदार घबड़ा गया । कृश तथा क्षीण तिलकको पहचान नहीं सका । कुछ समय तक तो

सन्न-सा रह गया । अिस प्रकार छह वर्षोंके बाद लोकमान्यने पुन: अपने गृहमें प्रवेश किया । सरकारने यह कारवाओी अत्यधिक गुप्त रूपसे की थी, क्योंकि वह जनताको तिलक महाराजका स्वागत करनेका अवसर नहीं देना चाहती थी । परन्तु मुर्गेको डलियामें बन्द करनेसे सूरजका अुदय नहीं रोका जा सकता । लोकमान्यके आगमनका समाचार वायु-वेगसे फैल गया । तत्काल ही हजारों दर्शक अेकत्र हुअे और अुनके चरण छूने लगे । पूनामें आनन्दकी लहरें प्रवाहित होने लगीं । दूसरे दिन दीपोत्सव मनाया गया और विशाल जुलूस निकालकर अेक विराट् सभामें अुनका हार्दिक स्वागत किया गया ।

चौदहवाँ प्रकरण

आर्ष ग्रन्थकार

जयन्ति ते सुकृतिनो विचक्षणः ग्रन्थकाराः ।
नास्ति येषां यशः काये जरामरणजं भयम् ।।

लोकमान्य सदा कहते थे कि मेरी अिच्छा कालेजमें गणितका प्रोफेसर बनकर शास्त्रीय ग्रन्थोंकी रचना करनेकी है, परन्तु देशकी विषम परिस्थिति और दुर्दशाने मुझे विवश कर राजनीतिके क्षेत्रमें खींच रखा है । सचमुच लोकमान्य तिलकके आनन्दका स्वाभाविक स्रोत विद्याव्यासंग ही था । अनेक बार जब अुनके बरामदेमें राजनीतिक वाद-विवाद तीव्रता तथा अूँचे स्वरमें होते रहते, तब वे अपने कमरेमें अकेले बैठे किसी शास्त्रीय-ग्रन्थके अध्ययनमें मग्न पाअे जाते । जैसे ब्रिटेनके भूतपूर्व प्रधान-मन्त्री और विख्यात राजनीतिज्ञ ग्लैडस्टन अवकाश प्राप्त होते ही ग्रीस अर्थात् यूनान आदिके अति प्राचीन अैतिहासिक ग्रन्थोंके अध्ययनमें डूब जाते थे, वैसे ही तिलक ज्ञान-प्राप्तिके लिअे बेचैन रहते थे । अपनी अिस स्वाभाविक प्रवृत्तिका संवर्द्धन अुन्होंने भली-भाँति किया । विशेषता यह थी कि अपनी नैसर्गिक प्रवृत्तिका विकास करते हुअे भी वे देशके अुपकारमें रत रहा करते थे, समाजका हित करते थे । ग्रन्थकार वे अेकाअेक नहीं बने । कअी वर्षों तक सफल निबन्धकार तथा सम्पादक रहनेके पश्चात ही ग्रन्थकारके रूपमें वे प्रसिद्ध हुअे ।

निबन्ध-लेखक कैसे बने ?

सन् १८८१ की बात है । न्यू अिंग्लिश स्कूलके अध्यापकोंने 'केसरी' तथा 'मराठा' समाचार-पत्रोंका प्रकाशन करना निश्चित किया । श्री विष्णु-शास्त्री चिपलूणकरने श्री तिलक तथा श्री आगरकरके नाम सम्पादक-पदोंके

लिअे प्रस्तावित किअे । परन्तु दोनों ही हिचकिचाने लगे क्योंकि वे लेखन-कार्यसे पूर्णतया अनभिज्ञ थे । चिपलूणकरने अिन लोगोंसे अिसका कारण पूछा । दोनोंने डरते हुअे परन्तु नम्रताके साथ अुत्तर दिया कि "हम नहीं जानते कैसे लिखें और क्या लिखें ?" शास्त्रीजीने आवेशमें आकर अुनसे पूछा "क्या तुम लोगोंके हृदयमें देश-हितके लिअे घुटन है ?" सरल हृदय युवकोंने तुरन्त अुत्तर दिया, "हाँ, देशके लिअे हमारे हृदयमें घुटन है ।" शास्त्रीजीने शान्त चित्तसे कहा, "तब तो तुम अच्छी तरहसे लिख सकोगे । हृदयकी बेचैनी ही शब्दोंको जन्म देती है, शब्द बेचैनीको नहीं पैदा करते । यह बेचैनी ही तुम्हें यशस्वी निबन्ध-लेखक बनायेगी ।" शास्त्रीजीका यह प्रेरक अुपदेश सुनकर तिलकको आत्मविश्वासकी अनुभूति हुआी और अुन्होंने तुरन्त सम्पादक होना स्वीकार कर लिया । आगे चलकर सम्पादकके रूपमें अुन्होंने मराठीका निबन्ध-साहित्य बहुत सम्पन्न तथा प्रौढ़ बनाया । वे मराठीके प्रतिष्ठित प्रौढ़ निबन्ध-लेखक माने जाते हैं । लोक-जागरणकी तीव्र अुत्कंठा, पांडित्य-युक्त शैली, सुभाषितोंका समुचित तथा मार्मिक प्रयोग, स्वपक्षका तर्कयुक्त मंडन, परपक्षका खंडन, ओजस्वी तथा प्रभावशाली किन्तु सरल और अनलंकृत भाषा शैली अित्यादि अुनके निबन्धोंकी विशेषता है । आपने 'केसरी' में सैकड़ों विषयोंपर अुद्बोधक तथा रोचक निबन्ध लिखे, जिनमें राजनीति, चरित्र, काव्य, भाषाशास्त्र, ज्योतिष, गणित, शिक्षा और पुरातत्व अित्यादि विषयोंका यथार्थ समावेश था । आपने ज्ञान-प्रचार तथा लोक-जागरण-पक्षको कला-विकास अेवं लोक-रंजन-पक्षकी अपेक्षा पुष्ट अधिक बनाया । आपके निबन्धोंके शीर्षक बड़े आकर्षक तथा व्यंग्यपूर्ण होते थे । जैसे—'प्रिन्सिपल शिशुपाल या पशुपाल ?', 'जनाब देहली तो बहुत दूर है', 'सबेरा हुआ परन्तु सूरज कहाँ ?', 'नआी गिल्ली नया खेल', 'कैसे ये हमारे गुरु ?', 'और क्या सरकार पगली बनी है ?' अित्यादि । आप शब्द या रचना-सौन्दर्यकी अपेक्षा विचार-सौन्दर्य या भाव-सौन्दर्यकी ओर अधिक ध्यान देते थे । आपके निबन्धोंमें भावों और अनुभूतियोंका अनूठा समन्वय दिखाआी देता है । संक्षेपमें आपकी कथनी तथा करनीमें जो अेकता तथा शुद्धता पाआी जाती

है, वही आपके निबन्ध-साहित्यकी आत्मा है। शैली लेखकके व्यक्तित्वकी दिग्दर्शिका है, (स्टाअिल अिज दी मैन) यह सिद्धान्त लोकमान्यके सम्बन्धमें यथार्थ प्रतीत होता है। गम्भीर तथा प्रौढ़ निबन्धोंकी सृष्टि करनेके पश्चात् लोकमान्य ग्रन्थ-रचनाकी ओर मुड़े।

'ओरायन' या 'वेदकाल निर्णय'

सन् १८९० में लोकमान्य तिलकने प्राच्यविद्याके महापण्डित डा० मैक्समूलरको लिखा था कि सार्वजनिक कार्योंसे अवसर मिलते ही मैं प्राचीन वैदिक वाङ्मयके अध्ययन तथा संशोधनमें जुट जाअूँगा। लोकमान्यके पूज्य पिताने ही अपने पुत्रके मनमें वेदोंके प्रति श्रद्धा अुत्पन्न कर दी थी और वह श्रद्धा बाल्यावस्थासे बराबर बढ़ती ही गअी। सन् १८९१ में आपने "वेदकाल-निर्णय" पर तीन खोजपूर्ण भाषण दिअे। अुनमेंसे अेक भाषण डेक्कन कालेजके वार्षिक-सम्मेलनमें दिया गया था। तिलकका आत्मविश्वास बढ़ा और अुत्साह दूना हुआ, क्योंकि आपके विद्वान् प्राध्यापकोंने आपकी अन्वेषण-क्षमताकी बहुत प्रशंसा की। सन् १८९३ में अधिक गहरा अन्वेषण कर आपने "ओरायन" याने "वेदकाल निर्णय" नामके ग्रन्थकी रचना समाप्त की और ग्रन्थ अँग्रेजीमें प्रकाशित हुआ। अिसी वर्ष "ओरायन" ग्रन्थका सारांश ओरियन्टल कांग्रेस लन्दन अधिवेशनकी रिपोर्टमें प्रकाशित हुआ।

अिससे अिस ग्रन्थका महत्व शीघ्र बढ़ गया। ग्रन्थकी भाषा अँग्रेजी होनेके कारण पश्चिमी जगत्में अुसका तुरन्त आदर हुआ और वह पश्चिमी प्रकाण्ड पण्डितोंकी, जिनमें डा० मैक्समूलर भी थे, प्रशंसाका भाजन बना। लोकमान्यने अिस ग्रन्थमें वेदोंके समय पर अभिनव प्रकाश डाला। कअी पश्चिमी प्रकाण्ड अन्वेषक अिस तेजस्वी प्रकाशसे चकित हो गअे, क्योंकि अुससे अुनके अब तकके निर्णय निरर्थक और पूर्णतया भ्रमोत्पादक सिद्ध हुअे। लोकमान्य तिलक अेक प्रज्ञ तथा अन्वेषक ग्रन्थकारके रूपमें संसारके सम्मुख आअे। भारतवर्षके आधुनिक विद्वानोंने आपकी अन्वेषक-बुद्धिका अभिनन्दन किया। ज्योतिर्गणितज्ञोंने आपपर फूलोंकी वर्षा की और आपके ज्योतिर्गणित

सम्बन्धी अन्वेषणोंपर गर्व करने लगे। वे भारतीय संस्कृतिके अभिमानी फूले नहीं समाये, क्योंकि अपनी अनूठी अन्वेषणा-क्षमतासे लोकमान्यने वेदोंकी अुत्पत्ति संसारमें प्राचीनतम सिद्ध कर दी।

पश्चिमी विद्वानोंने, जिनमें डा० मैक्समूलर तथा डा० हो प्रमुख थे, वेदोंके कालनिर्णयके सम्बन्धमे दो साधनोंका व्यवहार किया था। अेक साधन ज्योतिषका था और दूसरा भाषाका। अुन्होंने भाषाके साधनको ही ज्योतिषकी अपेक्षा बहुत अधिक महत्व दिया था। अुनकी धारणा थी कि ज्योतिषका साधन अनिश्चित है और वेदोंके कालमें 'मास', 'अयन' अित्यादि ज्योतिषशास्त्रकी पारिभाषिक संज्ञाओंकी यथार्थ जानकारी भारतीयों-को होना स्वाभाविक नहीं। अुनकी रायमें अितने प्राचीनकालमें भारतमें ज्योतिष-शास्त्रका विकास नहीं हुआ था। वे समझते थे कि अिस शास्त्रमें भारत पिछड़ा हुआ था। अतः, भाषाके विकासके अनुसार डा० मैक्समूलरने वेदोंका रचना-काल चार खण्डोंमें विभाजित किया। जैसे छन्दकाल, मन्त्र-काल, ब्राह्मण-काल और सूत्र-काल। अुन्होंने प्रत्येक कालकी अवधि दो सौ वर्षोंकी निश्चित की। अुन्होंने बताया कि महात्मा बुद्धके ८०० वर्ष पूर्व वेदोंकी सृष्टि हुअी थी। डा० हो ने प्रत्येक काल-खण्ड ५०० वर्षोंका मानकर वेदोंकी सृष्टि अीसा २४०० वर्ष पूर्व बतलाअी। हाँ, जैकोबीकी यह धारणा अवश्य थी कि अीसासे लगभग ५००० वर्ष पूर्व वेदोंकी रचना हुअी होगी। परन्तु साधन या प्रमाणोंके अभावमे वे अपना यह निर्णय सिद्ध नहीं कर पाअे थे। जैकोबी पश्चिमी विद्वानोंमें अपवाद थे। लोकमान्य तिलकको अुपरि-निर्दिष्ट विद्वानोंका निर्णय खटका क्योंकि अुस निर्णयमे भारतीय संस्कृति या सभ्यता यूनानी, अिजिप्सियन और आल्डियन सभ्यताओंकी अपेक्षा अर्वाचीन ठहरती थी। लोकमान्यने पश्चिमी विद्वानोंकी चुनौती स्वीकार की और ज्योतिर्गणित-शास्त्र तथा ऋग्वेदकी ऋचाओंसे अैसे-अैसे प्रमाण प्रस्तुत किअे कि आपके निर्णयको भ्रामक सिद्ध करना पश्चिमी विद्वानोंके लिअे असम्भव हो गया। वेदांग ज्योतिषके आधारपर आपने वेदोंका काल अीसाके ४००० वर्ष पूर्व सिद्ध किया। आपने ग्रीक 'ओरायन' संज्ञाका स्रोत वैदिक 'आग्रायण'

संज्ञा बताओ अेवं प्रमाणों द्वारा सिद्ध किया कि भारतमें वैदिककालमें ज्योतिष-सम्बन्धी ज्ञानका कितना और कैसा विकास हुआ था। ऋग्वेदकी अनेक ऋचाओं तथा सूक्तियोंका गूढ़ अर्थ कर आपने अपने निर्णयका प्रबल मण्डन किया। ऋग्वेदमें वसन्त संपात मृगशीर्ष (आग्रहायणी) अथवा ग्रीक औरायन नक्षत्रका अुल्लेख बता कर कालसूचक सारिणी अिस प्रकार बनाओ :—

अदितिकाल	अीसापूर्व ६००० से ४०००	पुनर्वसु वसंत संपात मृगशीर्षमें जानेतक।
मृगशीर्षकाल	अीसापूर्व ४००० से २५००	वसन्त सम्पात मृगशीर्षमें कृतिकामें आनेतक।
कृतिकाकाल	अीसापूर्व २५०० से १४००	वसन्त सम्पात कृतिकासे भरणी नक्षत्र समीप आनेतक वेदांग ज्योतिष तक।

लोकमान्यकी अभिनव खोजसे पश्चिमी विद्वानोंमें सनसनी फैल गओ। प्रो. मैक्समूलर, प्रो. ब्लूम फील्ड (अमेरिका), प्रो. वेबर (जर्मनी), प्रो. व्हिटने तथा प्रो. ओ. ह्यूम अित्यादि विद्वानोंने मतभेद होते हुअे भी लोकमान्यका हार्दिक अभिनन्दन किया। डा. मैक्समूलर अिस ग्रन्थके कारण लोकमान्यकी प्रतिभापर अितने लट्टू हुअे कि सन् १८९७ में लोकमान्यको जेल-मुक्त करानेके लिअे आपने ब्रिटिश सरकारपर दबाब डाला और अुनके प्रयत्नोंका फल यह हुआ कि लोकमान्य निर्धारित समयसे छह महीने पूर्व मुक्त कर दिअे गअे। अिस ग्रन्थकी सफलतासे लोकमान्यका अुत्साह भी बढ़ा और वे भौतिक शास्त्रोंके आधारपर भारतीय संस्कृतिकी प्राचीनता तथा श्रेष्ठता सिद्ध करनेके लिअे सचेष्ट हुअे।

आर्योंका मूल-स्थान

वास्तवमें "वेदकाल-निर्णय" और "आर्योंका मूल स्थान" ये दो ग्रन्थ जुड़वां बच्चेके समान हैं। साथ-साथ अुत्पन्न हुअे दो बच्चोंमें जैसी समानता या सादृश्य दिखाओ पड़ता है, वैसा ही अिनमें है। दोनोंके प्रतिपादनका

विषय अेक ही है। केवल साधन और शैलीमें भिन्नता है। पहलेमें वेदोंकी प्राचीनता ज्योतिषशास्त्रके आधारपर सिद्ध की गअी तो दूसरेमें भौतिक-शास्त्र और भूगर्भ-शास्त्रके दृश्य प्रमाणोंके आधारपर आर्योंके मूल-स्थानका निर्णय किया गया है। तिलक गणित और ज्योतिर्गणितशास्त्रके विशेषज्ञ थे। पहले वे भूगर्भशास्त्रमे बिल्कुल अनभिज्ञ थे। परन्तु अुनकी प्रतिभा अद्वितीय थी। जिस नअे विषय अथवा शास्त्रकी पढ़ाअी प्रारम्भ करते अुसमें अल्पकालमें ही निपुणता सम्पादन कर लेते। कवि कुलगुरु कालिदास अपनी सर्वोत्कृष्ट नाटयकृति 'अभिज्ञान शकुन्तल'में कहते हैं—"न खलु धीमतां कश्चिद्‌विषयोनाम" यानी बुद्धिमानोंके लिअे कोअी भी विषय ग्रहण करना कठिन नहीं। अतअेव आपने भूगर्भशास्त्रके पचासों ग्रन्थोंका अध्ययन किया। प्रोफेसरोंसे विचार-विमर्ष किया। तीन वर्ष तक अिस विषयके अध्ययन के लिअे पागल-से जुटे रहे। अन्ततोगत्वा अधिकार प्राप्त कर आत्मविश्वाससे प्रेरित हो आपने वेदोंकी कअी ऋचाओंका भूगर्भशास्त्रानुकूल अर्थ प्रस्थापित कर यह सिद्ध किया कि आर्योंका-मूलस्थान अुत्तर ध्रुवका प्रदेश था। अिस ग्रन्थके प्रथम तीन प्रकरणोंमें आपने भूगर्भ-शास्त्रकी दृष्टिसे वेदोंकी ऋचाओंका अर्थ किया और सप्रमाण सिद्ध किया कि ओीसासे ६००० वर्ष पूर्व आर्य अुत्तरी ध्रुवमें या अुसके निकट रहते थे क्योंकि वेदकी कअी ऋचाओंमें अुत्तरी ध्रुव-प्रदेशकी प्राकृतिक सुन्दरताका यथातथ्य वर्णन है। अिस ग्रन्थमें १३ प्रकरण हैं। चौथे प्रकरणमें विवेचन किया गया है कि ऋग्वेदमें देवका अेक दिन मानवके छह मासका होता है और अेक रात छह मासकी। अितने दीर्घ रात अेवं दिन केवल ध्रुव-प्रदेशमें ही होते हैं। अिसलिअे देवोंका निवास अुत्तर ध्रुवके सन्निकट ही होना चाहिअे। संक्षेपमें आपने अनेक प्रमाणोंसे सिद्ध किया कि आर्योंका मूल निवास ओीसासे ५००० वर्ष पूर्व अुत्तरी ध्रुव-प्रदेशमें था।

लोकमान्य तिलक की संस्कृति-निष्ठा तथा देशभक्तिकी भावना अत्यन्त प्रबल थी। अपनी प्राचीन सम्पन्न संस्कृतिपर अुनको अत्यन्त अभिमान था।

अिस अभिमानकी अुत्पत्ति यथार्थ तथा तुलनात्मक अध्ययनसे हुअी थी। अुनका संस्कृति-प्रेम तथा देश-प्रेम ज्ञानाधिष्ठित था।

"गीता-रहस्य अथवा कर्मयोग शास्त्र"

हीरोंमें जैसे कोहिनूरका महत्व है वैसे ही लोकमान्यके ग्रन्थोंमे 'गीता-रहस्य'का महत्व है। यह लोकमान्यके तत्वचिन्तनका आलोक है। यह गीताके भाष्योंमें सिरमौर और मराठी भाषामें तत्वज्ञानके ग्रन्थोंका सिरताज है। हम अिसे आर्षग्रन्थ मानते हैं। 'गीतारहस्य'की प्रस्तावनामें आप लिखते हैं "जब मैं १६ वर्षकी अवस्थाका था (सन् १८७२) तब मेरे मरणोन्मुख पूज्य पिताने मुझे गीताका पाठ करनेको कहा। गीतासे यही मेरा पहला परिचय था। मैंने गीताके संस्कृत श्लोक तथा अुनकी टीका पिताजीको सुनाअी। मैं अुस समय गीताका भावार्थ नहीं समझ सका। तो भी कुमारावस्थामें हुअे संस्कार प्रायः चिरकालीन होते हैं, अिसलिअे मुझमें गीताके प्रति जो पूज्य भाव अंकुरित हुअे थे, वे बढ़ते ही गअे। तत्पश्चात् मैंने गीताके संस्कृत भाष्यों, मराठी टीकाओं अेवं अँग्रेजीमें लिखे आलोचनात्मक ग्रन्थोंका बहुत अध्ययन किया। गीता सम्बन्धी जितने भी ग्रंन्थ अुपलब्ध थे, अुतने ग्रन्थोंका मैंने अध्ययन किया, परन्तु मेरे मनमें गीताके अुपदेशके प्रयोजन, प्रतिपादन तथा फलके विषयमें जो आशंका अुत्पन्न हुअी थी; अुसका समाधान न हुआ। मेरी शंका थी कि क्या गीतामें ब्रह्मज्ञान अथवा भक्तिसे मोक्षप्राप्तिके मार्गका ही प्रतिपादन है? क्या लड़नेके लिअे आअे संशयग्रस्त वीर अर्जुनका समाधान केवल मोक्षधर्मके अुपदेशसे ही हुआ होगा? क्या सव्यसाची वीर अर्जुन मोक्षप्राप्तिके लिअे लड़ना छोड़कर सन्यासी बननेको प्रवृत्त हुअे होंगे? ज्यों-ज्यों मैं संप्रदायनिष्ठ भाष्यों तथा टीकाओंका अध्ययन करता गया त्यों-त्यों मेरी शंकाअें बढ़ती गअीं और अुलझनोंमें पड़ गया। क्योंकि अिन सम्प्रदायनिष्ट आचार्योंने गीताका अर्थ अपने मतके अनुकूल प्रतिपादित किया था। श्रीमद् आद्य शंकराचार्यने अपने 'गीता-भाष्य'में सिद्धान्त तथा सन्यासपर विशेष जोर दिया, रामानुजाचार्यने दिशिष्टाद्वैत तथा भक्तिका विवेचन किया,

मध्वाचार्यने द्वैतमूलक भक्तिपर अत्यधिक जोर दिया और वल्लभाचार्य तथा निम्बार्काचार्यने भी अिसीका प्रतिपादन किया। सन्त ज्ञानेश्वरने अपनी "भावार्थ-दीपिका" में पातंजलि योग, भक्ति और कर्मका समन्वय किया तो दूसरी और प्रकांड पंडित वामनने अपनी "यथार्थ-दीपिका" में सब भार ज्ञानयुक्त सगुण भक्तिपर ही डाल दिया। अिस प्रकार सम्प्रदाय-निरपेक्ष कोअी भाष्य अुपलब्ध नहीं था। अतअेव गीताका सम्प्रदाय-निरपेक्ष अध्ययन कर अुसका सरल तथा स्पष्ट अर्थ प्रतिपादन करनेकी अुमंग मेरे मनमें सन् १८७८ में अुद्भूत हुअी और मैंने मौलिक दृष्टिसे गीताका अर्थ लगानेकी चेष्टा प्रारम्भ की। गीता अुपनिषदोंका निचोड़ है। मैंने अुपनिषदोंका गहरा अध्ययन किया। गीता महाभारतमें समाविष्ट है, अतः मैंने महाभारतका सम्यक् अध्ययन किया। यह अध्ययन कअी वर्षोंतक जारी रहा। तत्वज्ञानका विवेचन करनेवाले सैकड़ों ग्रन्थोंका परिशीलन किया। पश्चिमी दार्शनिकोंके प्रायः सब ग्रन्थ पढ़े। प्राच्य तथा पश्चिमी धर्मशास्त्र और नीतिशास्त्रका तुलनात्मक अध्ययन किया। अिस विषयका चिन्तन लगभग ४० वर्षोंतक होता रहा। अितने दीर्घकालीन विचार-मन्थनके पश्चात् मैंने जो सिद्धान्तरूपी नवनीत पाया अुसे "गीता-रहस्य अथवा कर्मयोग शास्त्र" में भर दिया। यह ग्रन्थ मेरे ४० वर्षके निरन्तर अध्ययन, मनन, चिन्तन, अन्वेषण तथा विचार विमर्शकी मूर्ति है। मेरे मानव जीवन विषयक तत्वज्ञान तथा नीतिशास्त्रका निचोड़ है।"

"कर्मयोग-शास्त्र"के विषय प्रवेश नामक प्रकरणमें लोकमान्यने लिखा है कि गीताके तात्पर्य-कथनकी सम्प्रदायनिष्ठ दृष्टि सदोष है। मीमांसकोंने किसी भी ग्रन्थका तात्पर्य निकालनेकी शास्त्रीय पद्धति निम्नलिखित श्लोकमें प्रतिपादित की है :—

अुपक्रमोपसंहारो अभ्यासो पूर्वता फलम्।
अर्थवादोपपत्ती च लिङ्ग तात्पर्य निर्णयम्॥

ग्रन्थके आरम्भ और अन्त कैसे होते हैं, अुनमें जहाँ-तहाँ क्या अुपदेश हैं, अुनकी अपूर्वता क्या है, अुनका प्रभाव या फल क्या हुआ, अित्यादिका

सुसंगत अध्ययन कर ही ग्रन्थके महत्वका निर्णय करना चाहिअे। अिस दृष्टिसे गीताके आरम्भ और अन्तका निरीक्षण कीजिअे। महाभारतका युद्धारम्भ होनेके पूर्व रणांगणमें अपने गुरु भीष्म पितामह तथा कुलबन्धुओंको सम्मुख खड़ा देखकर सव्यसाची वीर अर्जुनको मोह अुत्पन्न हुआ और अपने धर्मके अनुकूल युद्ध करनेके महान कर्तव्यसे विचलित होने लगा। किंकर्तव्य विमूढ़ होकर वह भगवान श्रीकृष्णकी शरणमें गया और अुनसे नम्रतापूर्वक निवेदन करने लगा कि मैं नहीं लड़ना चाहता। मैं अिन सुजनोंका लड़ाओमें वधकर राज्य सम्पादन करनेको अपेक्षा सन्यास लेना अधिक पसन्द करता हूँ। भगवान श्रीकृष्णने संशयग्रस्त, किंकर्तव्य विमूढ़ तथा धर्मसंमूढ़ अर्जुनको लड़नेको अुद्यत करनेके हेतु गीताका अुपदेश दिया। यही गीता आरम्भ है। श्रीकृष्णने वीर अर्जुनकी सभी शंकाओंका समाधान कर अन्तमें अुससे प्रश्न किया ?

कच्चिदेतच्छ्रुतं पार्थ त्वयैकाग्रेण चेतसा।
कच्चिदज्ञानसंमोहः प्रनष्टस्ते धनंजय॥ ७२–१८

अर्थात् "हे पार्थ, क्या तुमने मेरा अुपदेश अपने अेकाग्रचित्तसे सुना ? क्या तुम्हारा अज्ञानजन्य मोह नष्ट हुआ ?"

वीर अर्जुनने प्रसन्नतासे अुत्तर दिया :—

नष्टो मोहः स्मृतिर्लब्धा त्वत्प्रसादान्मयाऽच्युत।
स्थितोऽस्मिगतसन्देहः करिष्ये वचनं तव॥ ७३–१८

"हे भगवान श्रीकृष्ण, आपकी परम कृपासे मेरा मोह नष्ट हुआ और मेरी कर्तव्यधर्म-स्मृति पुनः जागृत हुअी। मैं अब सन्देहरहित हूँ। अतः, आपके अुपदेशके अनुसार लड़नेके लिअे सन्नद्ध हूँ।" वीर अर्जुन शूरतासे लड़ा और अुसने युद्धमें जय प्राप्त की। यही भगवद्गीताका अुपसंहार है। संक्षेपमें गीताके अुपक्रम और अुपसंहार कर्मण्यताके द्योतक हैं।

अब अभ्यासकी ओर मुड़िअे। गीतामें जहाँ-तहाँ भगवानने वीर अर्जुनको लड़नेकी ओर प्रोत्साहित किया। अुसकी प्रत्येक आशंकाका समाधान कर अुसे कर्तव्यकी ओर सचेत किया। "तस्मात्" और "अिसलिअे" अिस पदका बार-बार अुपयोग कर अुसे लड़नेके लिअे कहा। अुदाहरणके लिअे "तस्माद्युद्धस्व भारत", "अिसलिअे हे अर्जुन, तू लड़", "तस्मादुत्तिष्ठ कौन्तेय युद्धाय कृत निश्चयः", "अिसलिअे हे कौन्तेय, तू लड़नेका निश्चय कर", "तस्मादसक्तः सततं कार्यं कर्म समाचर", "अिसलिअे तू आसक्ति त्याग कर कार्य कर (लड़)", "कुरु कर्मैव तस्मात्त्वं", "अिसलिअे तू लड़नेका कर्म कर", "मामनुस्मर युद्ध च", "अिसलिअे तू मेरा स्मरण कर लड़", "तस्मात्त्वमुत्तिष्ठ यशो लभस्व जित्वा शत्रून्भुङ्क्ष्व राज्यं समृद्धम्, मयैवैते निहतः पूर्वमेव, निमित्तमात्रं भव सव्यसाचिन्", "हे पार्थ, मैंने पहले ही अिन कौरवोंको नष्ट कर रखा है, अतः तू निमित्त मात्र बनकर लड़ और जय प्राप्त कर। समृद्ध राज्यका अुपभोग कर।"

तस्माच्छास्त्रं प्रमाणं ते कार्याकार्यव्यवस्थितौ।
ज्ञात्वा शास्त्रविधानोक्तं कर्म कर्तुमिहार्हसि ॥२४-१६

"हे पार्थ, कर्तव्याकर्तव्यका निर्णय शास्त्रोंके अनुसार करना चाहिअे। शास्त्रोंको प्रमाण मानकर तुझे लड़नेका कर्तव्य निभाना चाहिअे।" अिस प्रकार श्रीकृष्णने बार-बार अर्जुनको लड़नेका अुपदेश दिया। अिसके अतिरिक्त अुपसंहारमें "कर्तव्यानीतिमे पार्थ निश्चितमतमुत्तमम्" (६-१८) "हे पार्थ, मेरी निश्चित राय है कि ये कर्म तुझे करने ही चाहिअे।" अैसा मत प्रकट कर भगवान श्रीकृष्णने अर्जुनसे पूछा कि "तुम्हारा सन्देह नष्ट हुआ या नहीं?" अतः "अभ्यास" की तीसरी कसौटी भी यह सिद्ध करती है कि गीताके अुपदेशोंमें कर्मण्यशीलता ओतप्रोत है।

अब चौथी कसौटी "अपूर्वता" की है। गीताकी अपूर्वता "कर्मयोग" में निहित है। अिसका प्रतिपादन भगवद्गीताके दूसरे अध्यायमें अिस प्रकार किया गया है :—

कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन ।
मा कर्मफलहेतुर्भूर्मा ते संगोऽस्त्वकर्मणि ।। ४७
योगस्थः कुरु कर्माणि संगं त्यक्त्वा धनंजय ।
सिद्धसिद्धयोः समो भूत्वा समत्वं योग अुच्यते ।। ४८
दूरेण ह्यवरं कर्म बुद्धियोगाद्धनंजय ।
बुद्धौ शरणमन्विच्छ कृपणः फलहेतवः ।। ४९
बुद्धियुक्तो जहातीह अुभे सुकृतदुष्कृते ।
तस्माद्योगाय युज्यस्व योगः कर्मसु कौशलम् ।। ५०

तेरा अधिकार कर्म करनेका है । कर्मके फलपर तेरा वश नहीं । अतः फल प्राप्तिके लिअे ही कार्य मत कर । दूसरी ओर कर्म न करनेका ही हठ तू मत कर । हे अर्जुन, कार्यसिद्धि हो अथवा न हो आसक्ति छोड़ कर हृदयमें समताकी भावना रखकर कार्य कर । अिस समताकी भावनाको कर्मयोग कहते हैं । क्योंकि बुद्धिकी समताकी अपेक्षा बाह्य कर्म बहुत ही हीन या निकृष्ट है । अतः समत्वबुद्धिकी शरण जाना चाहिअे । कर्मफलकी अिच्छा रखनेवाले कृपण याने हीन होते हैं । जो साम्य बुद्धिसे युक्त होता है वह पाप तथा पुण्यसे मुक्त या अलिप्त रहता है । अतः तू कर्मयोगका आश्रय ले । पाप तथा पुण्यसे अलिप्त रहकर कर्म करनेका कौशल ही कर्मयोग है । आसक्ति रहित कर्म करनेकी युक्तिको ही कर्मयोग कहते हैं न कि पातंजलियोग अथवा सन्यासको । अिस कर्मयोगका विस्तृत प्रतिपादन करनेके लिअे मैं अिस कर्मयोग-शास्त्रकी रचना कर रहा हूँ । यदि भगवान श्रीकृष्णकी अिच्छा होती कि सव्यसाची अर्जुन सन्यासी बने या भक्तिमें मग्न होकर रहे तो गीताका अुपदेश देनेकी आवश्यकता न थी । क्योंकि अर्जुन स्वयं सन्यासी बननेके लिअे व्याकुल थे । भगवान् तत्काल कहते—"अर्जुन, तेरी शंका सही है । मेरी भी राय यही है । आ हम दोनों ही सन्यास ग्रहण कर अपनी आत्माओंका कल्याण करें ।" परन्तु

अर्जुनकी शंकाके अनुकूल अुत्तर न देकर "क्लैब्यं मास्म गमः पार्थ नैतत्वय्युपपद्यते । क्षुद्रं हृदयदौर्बल्यं त्यक्त्वोत्तिष्ठ परन्तप ।। ३–२ कहा । अिस प्रकार वीर अर्जुनकी तीव्र भर्त्सना कर अुसे कृष्णने "नियतं कुरु कर्मत्वं" कर्म करनेका प्रेरक अुपदेश दिया । अिससे सिद्ध होता है कि गीताका तात्पर्य प्रवृत्तिवादी कर्मप्रवर है । भक्ति, ज्ञान या सन्यासमें लीन होकर अपने नियत कर्मोंका त्याग करना गीताका अुद्देश्य नहीं । कर्मयोग ही गीताका सच्चा मर्म है । अेवं विशुद्ध शास्त्रीय दृष्टि अपनाकर, सम्प्रदायनिष्ठ संकीर्णताका त्याग कर लोकमान्य तिलकने कर्मयोग-शास्त्रका मौलिक तथा तर्कयुक्त विवेचन किया । अिस महाग्रन्थके तत्वज्ञानका आवश्यक अंग है—"नीतिका विवेचन करना ।" अिसलिअे लोकमान्य गीताको नीतिशास्त्र कहते थे ।

मराठीका महान अुपकार

मराठीका प्राचीन तथा अर्वाचीन साहित्य भगवद्गीताके भाष्यों और टीकाओंसे सम्पन्न और भरापूरा है । सन् १२९० में सन्त ज्ञानेश्वरने "भावार्थ-दीपिका" या ज्ञानेश्वरी पद्य-टीका रची । यह टीका तत्व-विवेचनकी अपेक्षा काव्य-सौष्ठव तथा काव्य-गुणके लिअे ही अधिक प्रसिद्ध और लोक-प्रिय है । निस्सन्देह यह मराठीका अपूर्व और सर्वोत्कृष्ट काव्य-ग्रन्थ है । सन् १६८० के लगभग प्रकांड पंडित वामनने "यथार्थ-दीपिका" नामक पद्य टीका रची । यह टीका ज्ञानेश्वरीसे ढाअी गुनी बड़ी है । आपने सन्त ज्ञानेश्वरके मतका खण्डन कर ज्ञानयुक्त सगुण भक्तिका पांडित्यपूर्ण विवेचन किया । प्रायः अिसी समय या अिसके कुछ वर्ष पूर्व कविश्रेष्ठ दासोपन्त देशपांडेने "गीतार्णव" पद्य टीकाकी रचना की । अिस ग्रन्थमें १ लाख अुवियां (दो चरणका छन्द) हैं । अिसमें भक्तिका प्रतिपादन किया गया है । भगवद्गीतापर अन्य कअी पद्य टीकाअें हैं । परन्तु गीतापर बृहत् तथा युगान्तरकारी गद्य-भाष्य लिखनेका श्रेय लोकमान्य तिलकको ही प्राप्त हुआ । अैसा प्रतीत होता है कि तिलकने अिसी कार्यको करनेके लिअे जन्म लिया था । आपके पूर्व अितना विशाल तथा सांगोपांग अूहापोह करनेवाला गीताका

गद्य-भाष्य नहीं लिखा गया। आपने मौलिक तथा सम्प्रदाय-निरपेक्ष दृष्टिसे गीताके अध्ययनको प्रोत्साहन दिया। अिसका प्रभाव यह हुआ कि 'कर्मयोग-शास्त्र' प्रकाशनके पश्चात् मराठीमें लगभग १२ विशाल तथा सूक्ष्म तत्व-विवेचन करनेवाले गद्य-भाष्योंकी सृष्टि हुअी। दो या तीन भाष्यकारोंने लोकमान्यके कर्मयोगका खण्डन कर भक्ति या सन्यासका भी समर्थन किया, किन्तु सभीने लोकमान्यकी बहुश्रुतता तथा तर्कयुक्त विवेचन-शक्तिके सम्मुख अपना सिर झुकाया। केवल मतभेद होनेसे किसी ग्रन्थ या व्यक्तिका महत्व नहीं घटता। "कर्मयोगशास्त्र" आधुनिक गद्य-भाष्योंका स्रोत है। अिसकी रचनासे मराठी गद्यकी शैली सम्पन्न तथा प्रौढ़ हुअी, गोस्वामी तुलसीके सम्बन्धमें कहते हैं—"कविता करके तुलसी न लसे, कविता लसी पा तुलसीकी कला।" अुसी प्रकार लोकमान्य तिलकके सम्बन्धमें कहा जा सकता है कि अुनकी रचनासे मराठी साहित्य गौरवान्वित हुआ। अिस महाग्रन्थमें लोक-मान्यने अपनी प्रतिभासे भारतीय तत्वज्ञानका समन्वय कर भारतीयता तथा संसारका बड़ा अुपकार किया।

भारतीय दर्शन-शास्त्रके आधुनिक ग्रन्थोंमें 'गीता-रहस्य' अपना विशेष स्थान रखता है। तत्वज्ञानको चिन्तन या बुद्धिका विलास माना गया है। कुछ लोगोंका ख्याल है कि तत्वचिन्तन निष्क्रियता बढ़ाता है। किन्तु अिन आरोपोंका अुत्तर देनेवाला 'कर्मयोगशास्त्र' अद्वितीय ग्रन्थ है। यह लोक-मान्यका आध्यात्मिक या वैचारिक आत्मचरित्र है। लोकमान्यने देश-कार्य तथा राष्ट्रीय आन्दोलनोंमें लगे रहनेपर भी अितनी अूंची आध्यात्मिक जानकारी तथा बहुश्रुतता प्राप्त की, यह सचमुच आश्चर्यकी बात है!

पन्द्रहवाँ प्रकरण

स्वराज्य संघकी स्थापना

In 1915 Lokmanya Tilak should have been the uncrowned king not only of Maharastra but of the whole of India except for an unfortunate combination of forces to keep him out of what would legitimately have been his. After his release strenuous efforts were made by him to start Home Rule Agitation and by well meaning friends to bring the two wings of the Congress together. Lokmanya Tilak himself wanted sedulously to avoid offending the susceptibilities of the moderates but they did not respond to his approaches. Tilak's three fold programme was (1) The Congress compromise (2) The reorganization of the Nationalist party and (3) The setting on foot of a strong agitation for Home Rule.

—The History of Indian National Congress.

लोकमान्य तिलकसे विचार-विमर्श करनेके लिअे सब प्रान्तोंसे राष्ट्रीय दलके सैकड़ों कार्यकर्ता पूना पहुँचे। ता. २० जूनको सार्वजनिक सभाके मैदानमें महती सभामें अुनका हार्दिक स्वागत किया गया। जनताके स्वागतको नम्रतापूर्वक स्वीकारकर लोकमान्यने अेक सारगर्भित भाषण देते हुअे कहा कि सुख और दुःखमें बड़ा अन्तर है। दुःखमें साथी मिलनेसे वह बहुत कम हो जाता है, किन्तु सुखमें हिस्सा बटानेवाला मिलनेसे सुख दुगना होता है। आप लोगोंके दर्शनसे प्राप्त मेरा सुख वर्णनसे परे है। मैं आज ६ वर्षोंके पश्चात् लौटा हूँ। मेरी मानसिक स्थिति 'रिपवान विंकल' के समान है? जैसे अुसे

कअी वर्षोंकी दीर्घ निद्राके पश्चात् जगनेपर सृष्टि नअी मालूम होने लगी थी, वैसे ही मुझे भारतवर्षकी राजनीतिक दशा नअी प्रतीत होती है। आप मुझसे यह अपेक्षा रखते होंगे कि मैं भावी कार्य या नीतिके सम्बन्धमें कुछ विचार प्रकट करूँ, किन्तु परिस्थितिका सम्यक् आकलन तथा गम्भीर विचार-विमर्श किअे बिना यह करना अुचित न होगा। "सहसा विदधीत न क्रियाम्। अविवेकः परेपदमापदाम्" सूक्तिके अनुसार ही कार्य होना चाहिअे। किन्तु अति संक्षेपमें मैं आपसे निवेदन करता हूँ कि आपसे मेरा जैसा सम्बन्ध ६ वर्ष पूर्व था वैसा ही भविष्यमें भी रहेगा। भेद केवल समयानुकूल साधनोंका रहेगा। आपसे मेरी नम्र प्रार्थना है कि आप मेरे प्रति पूर्ववत प्रेम रखें और पहलेकी भाँति ही मुझे स्वीकार करें।" सरकारने तिलककी लोकप्रियताकी मशाल बुझानेके लिअे ज्यों-ज्यों चेष्टाअें कीं, त्यों-त्यों अुसकी शिखाअें अधिक प्रकाशमय होकर अूपरकी ओर बढ़ती गअीं।

नजरबन्दीका जाल

अिधर जनता अपने प्रिय नेताका हार्दिक स्वागत करनेमें रत थी, अुधर जाल फैलाकर सरकार लोकमान्यकी हलचलोंको सीमित करनेके लिअे व्यग्र थी। पूनाके जिला-मैजिस्ट्रेटने अुनके घरके दोनों ओर पुलिस बिठलाअी और अुनसे मिलनेवालोंके नाम, पते, मिलनेका कारण आदि लिखा जाने लगा। गणेश-अुत्सव तथा अन्य राजनीतिक अेवं सामाजिक समारोहोंमें अेक सालके लिअे लोकमान्यके भाषणोंपर कानूनी प्रतिबन्ध लगाया गया। अिसके अतिरिक्त पूनाके गणेशोत्सवमें गणपतिके सिवा अन्य किसीकी "जयजयकार" करनेपर भी कानूनी रोक लगी। लोकमान्य तिलकके फोटोका प्रदर्शन रोका गया। स्वयं तिलकके बदले "शिष्यापराधे गुरोर्दण्ड:" न्यायसे सरकार पूनाकी जनतापर अपना रोष प्रकट करने लगी। लोकमान्यका निवासस्थान मंडाले जेलका-सा बन गया। अन्तर अितना ही था कि यहाँ वे अपने घरमें बाल-बच्चोंके साथ दिन काट रहे थे। महाराष्ट्र तथा समस्त भारतमें अिस सरकारी नीतिकी तीव्र भर्त्सना की गअी, परन्तु सरकारपर

अिसका कुछ भी असर नहीं हुआ। संयोगसे यूरोपमें पहला महायुद्ध प्रारम्भ हुआ। ब्रिटेनकी साम्राज्यवादी सरकारने आक्रमक जर्मनीके विरुद्ध लोहा लिया। अब युद्ध-कार्यमें भारतवर्षके सहयोगकी सरकारको अुत्कट आवश्यकता प्रतीत हुअी। अुसने सूचित किया कि क्रान्तिकारी अेवं अत्याचारी दलोंकी नीतिके प्रति विरोध व्यक्त करने तथा अिस आपत्ति-कालमें सहानुभूति प्रकट करनेपर तिलककी नजरबन्दी रद्द कर दी जायगी। तिलकने समयकी गतिविधि देखकर तत्काल अेक पत्र प्रकाशित किया जिसका आशय यह था कि "मैं स्पष्टतया निवेदन करना चाहता हूँ कि सशस्त्र क्रान्तिकारी या हिंसात्मक कार्योंसे देशका लाभ होनेके बजाय हानि अधिक होती है अतअेव मैं अैसे कार्योंकी भर्त्सना करता हूँ। मुझे पूरी आशा है कि वैधानिक आन्दोलनों और आयर्लेंड के होमरूल दलकी नीति स्वीकार कर हम भारतमें पर्याप्त राजनीतिक सुधार प्राप्त कर लेंगे। मैं राज्यशासनमें लोकहितकारी परिवर्तन चाहता हूँ न कि राज्यका ध्वंस। ब्रिटेनकी साम्राज्य सरकारने आक्रमक जर्मनीके विरुद्ध जो युद्ध छेड़ा है, अुसके लिअे मैं अुसको हार्दिक धन्यवाद देता हूँ और अिस महायुद्धमें अुसके न्यायपक्षकी विजयके लिअे मैं यथाशक्ति अुसके साथ सहयोग करनेका आश्वासन देता हूँ।" लोकमान्यका यह पत्र प्रकाशित होते ही भारत सरकारने अपनी प्रसन्नता प्रदर्शित की और अुनकी नजरबन्दी तत्काल रद्द कर दी गअी। अिस पत्रसे अति अुग्रदलवादी असंतुष्ट हुअे, परन्तु अनेक राष्ट्रीय कार्यकर्ताओंने तिलककी समयानुकूल नीतिकी बड़ी प्रशंसा की।

भारतवर्ष १९०८ से १९१४ तक

सन् १९०७ दिसम्बरमें कांग्रेसमें संघर्ष हुआ और अुग्रदल या राष्ट्रीय दलने कांग्रेससे सम्बन्ध विच्छेद किया। लोकमान्य तिलकके अनुरोधके विरुद्ध नरमदलके नेताओंने अुनसे समझौता करना महा पाप समझा। विवश होकर लोकमान्य तिलक राष्ट्रीय दलकी पृथक् कांग्रेस स्थापित करनेके लिअे प्रयत्नशील हुअे। बीचमें सरकारने अुनपर राजद्रोहका अभियोग चलाकर

अुनपर ६ वर्षोंके लिअे राजनीतिक आन्दोलनोंमें भाग लेनेके लिअे प्रतिबन्ध लगा दिया। वास्तवमें वे अभी राष्ट्रीय दलका संगठन नहीं कर पाअे थे। भारत सरकारने बंगाल, महाराष्ट्र, पंजाब और मद्रास अर्थात् जिन प्रान्तोंमें राष्ट्रीय दलके अड्डे थे, वहाँ कठोर दमन कर प्रमुख नेताओंको बड़ी सजाअें दीं। सन् १९०८ के दिसम्बरमें नागपुरमें राष्ट्रीय दलकी कांग्रेस होनेवाली थी, परन्तु सरकारने अुसपर कानूनी प्रतिबन्ध लगा दिया। राष्ट्रीय दलके अनुयायी जहाँ-तहाँ बिखरे हुअे थे। बंगालमें भयंकर दमन तथा बाबू विपिनचन्द्र पाल अेवं महर्षि अरविंद घोषके गिरफ्तार होनेसे सन्नाटा छागया। यत्र-तत्र कभी-कभी पिस्तौल अुठाअे जाते थे या बम फेंके जाते थे, जिसकी प्रतिक्रिया भयावह होती थी और सामान्य जनता अधिक निष्क्रिय अेवं भयभीत होती जाती थी। मद्रासमें राष्ट्रीय दलके नेता श्री चिद्म्बरम् पिल्लैको ६ वर्षकी कड़ी सजा दी गअी और अुनके कअी अनुयायी दमनके शिकार हुअे। अुधर पंजाबमें भी दमननीतिका प्रभाव दिखाअी देने लगा। जिन पंजाबसिंह लाला लाजपतरायके प्रति लोकमान्यका आदर-भाव था और जिनको कांग्रेसका सभापति बनानेके लिअे अुन्होंने सूरतमें संघर्ष किया, अधिवेशन समाप्त होनेपर गोखलेसे अुन लालाजीकी मित्रता अधिक घनिष्ठ होने लगी और वे राष्ट्रीय दलकी ओर अुपेक्षापूर्ण व्यवहार करने लगे। पंजाबमें वे सरकारी अकृपाके शिकारतो नहीं बने, परन्तु जब अिग्लैण्ड गअे तब अुनपर भारत न लौटनेका कानूनी प्रतिबन्ध लगा दिया गया। अिसलिअे वे लगभग ६ वर्ष-तक अमेरिकामें रहे और पंजाबमें राष्ट्रीय दल नहीं पनपने पाया। महर्षि अरविन्द जैसे अति अुग्रवादी नेताने राजनीतिसे सन्यास लेकर पाण्डेचरीकी ओर प्रस्थान किया जिससे बंगालके राष्ट्रीय दलमें निराशाकी लहर फैल गअी।

सन् १९११ के दिसम्बरमें दिल्लीमें बड़ा वैभवशाली दरबार हुआ, जिसमें सम्राट् पंचम जार्जका राज्याभिषेक किया गया। सम्राट्ने भारतीयोंकी राज्यनिष्ठापर सन्तुष्ट होनेका स्वांग रचकर बंग-विच्छेद रद्द करनेकी घोषणा की और भारतकी राजधानी दिल्ली बनाअी गअी। बंगालमें जहाँ-तहाँ अिस शुभ घोषणाका स्वागत होने लगा। बंगाली फूले नहीं समाअे। बंगालमें

आनन्दोत्सव मनाअे गअे। लोकमान्य तिलकके दाहिने हाथ, बंगालमें अुग्रदलके जनक, बाबू विपिनचन्द्र पाल अितने सन्तुष्ट हुअे कि अुनकी अुग्र देश भक्तिका रूपान्तर अेकाअेक राज्यनिष्ठामें हो गया। अिसी समय गवर्नर जनरल लार्ड मिन्टोने साम्राज्य-सरकारकी ओरसे अिस आशयकी घोषणा करवाअी कि चन्द वर्षोंमें सरकार भारतमें प्रान्तीय स्वशासन (प्राविन्शियल अटानामीकी) स्थापना करना चाहती है और अिस कार्यमें भारतीय राजनीतिक दलोंका सहयोग अपेक्षित है। बाबू विपिनचन्द्र पालने अिस घोषणाका स्वागत करते हुअे लोगोंको राजनीतिक सुधार कार्यान्वित करनेकी पात्रता सम्पादन करनेकी सलाह दी। भविष्यमें पाल बाबूने लोकमान्यका फिर साथ दिया, परन्तु लोकमान्यकी मृत्युके पश्चात् वे राज्यनिष्ठ ही बन गअे। संक्षेपमें लोकमान्य तिलकका दाहिना तथा बाँया हाथ, लाला लाजपतराय अेवं बाबू विपिनचन्द्र पाल अलग हो गअे और कअी नेता जेलमें बन्द किअे गअे जिससे राष्ट्रीय दलका पौधा हराभरा नहीं हो सका।

कॉंग्रेसकी हालत बड़ी नाजुक हो रही थी। अुसमें केवल नरमदल-वादियोंके रहनेसे वार्षिक अधिवेशन बहुत ही सीमित बनने लगा। सन् १९१३ के बांकीपुर अधिवेशनमें केवल २५० प्रतिनिधि अुपस्थित थे जब कि १९०७ के कलकत्ता अधिवेशनमें १५०० और सूरतमें १६०० थे। भीषण ग्रीष्म कालमें जैसे नदीका प्रवाह सूखता है, वही हाल कॉंग्रेसका हुआ। पण्डित जवाहरलालने अपनी आत्मकथामें सन् १९१३ में हुअे कॉंग्रेस-अधिवेशनकी हँसी अुडाअी है। भारतकी दृष्टिसे यह अेक महान् हानि थी। सचमुच वह राष्ट्रीय आपत्तिका समय था। अँग्रेज सरकार असे नाजुक समयमें भेद तथा छल-कपट द्वारा मुसलमानोंको अुकसा रही थी।

मुस्लिम लीगकी स्थापना

निरंकुश साम्राज्यवादी लार्ड कर्जनने जागृत बंगालका विच्छेदकर पूर्व बंगालके रूपमें अेक अैसे प्रान्तका निर्माण करनेकी योजना की थी जिसमें मुसलमानोंका बहुमत हो। वे मुसलमानोंको राजद्रोही हिन्दुओंसे अलग

करना चाहते थे। बंगविच्छेद ब्रिटिश सरकारकी परस्पर फूट डालकर राज्य करनेकी छल-युक्त नीतिका फल था। सन् १८८४ में सर सैयद अहमद खाँ द्वारा स्थापित "मुस्लिम शिक्षा-सम्मेलन" राजनीतिक दृष्टिसे सरकारसे सहयोग कर रहा था, फिर भी कअी अूंचे और लब्धप्रतिष्ठ मुस्लिम नेता कांग्रेसमें सम्मिलित हो गअे और अुनकी संख्या प्रतिवर्ष बढ़ती ही जाती थी। सन् १९०५ में ब्रूम फील्ड फुल्लर बंगालके गवर्नर हुअे। वे मुसलमानोंके बड़े पक्षपाती थे। अुन्होंने ढाकाके नवाबको अुकसाया और कहा कि "मुसलमानोंके राजनीतिक अधिकारोंकी रक्षा करनेके लिअे अेक पृथक् संस्थाकी आवश्यकता है। सरकार अैसी संस्थाको अधिकृत मान्यता प्रदान करेगी।" नवाबने सरकारका हेतु ताड़ लिया और लगभग पचास तथाकथित मुस्लिम प्रतिनिधियोंका प्रतिनिधि-मण्डल तत्कालीन गवर्नर जनरल लार्ड मिन्टोके पास पहुँचा। मिन्टोने अुन्हें प्रोत्साहन दिया और आश्वासन दिया कि सरकार समय-समयपर मुस्लिम लीगकी सलाह लेती रहेगी। अिसके अतिरिक्त सरकारकी निगाहमें मुसलमानोंके सियासी हकोंके सम्बन्धमें अुनकी संस्थाकी सलाह अनिवार्य मानी जायगी। प्रतिनिधि-मण्डलके सदस्योंका अुत्साह दुगना हुआ और चन्द दिनोंमें ही मुस्लिम लीगकी विधि-वत स्थापना हो गअी। ब्रिटेनके भूतपूर्व प्रधान-मन्त्री तथा अुदार दलके नेता मि० रेम्जे मेकडानल्डने अपनी "अवेकनिंग अिन अिन्डिया" नामक पुस्तकमें यह स्वीकार किया है कि मुस्लिम लीगकी स्थापना अुच्च अँग्रेज अधिकारिओंके अिशारे तथा प्रोत्साहनसे हुअी। प्रारम्भमें मुस्लिम लीगके अुद्देश्य थे—(१) भारतीय मुसलमानोंमें ब्रिटिश सरकारके प्रति राज्यनिष्ठा बढ़ाना और (२) भारतीय मुसलमानोंके सियासी हकोंकी माँग करना तथा प्राप्त हकोंकी रक्षा करना। अिस समय बंगालमें अभूतपूर्व जागृति हुअी और राष्ट्रीय आन्दोलनका तूफान अुमड़ पड़ा जिससे चार-पाँच वर्षोंतक बंगालकी राज-नीतिपर मुस्लिम लीगका कुछ भी प्रभाव नहीं पड़ा। सैकड़ों मुसलमानोंने हिन्दुओंके साथ आन्दोलनमें सक्रिय भाग लिया। किन्तु धीरे-धीरे मुस्लिम लीगकी विष-बेल पनप रही थी। सन् १९११ तक मुस्लिम लीग राज्य-

निष्ठ राजनीतिक संस्था होते हुअे भी प्रधानतया धार्मिक तथा सामाजिक संस्थाकी भाँति काम करती थी, किन्तु सन् १९१२ में बंग-विच्छेदके रद्द किअे जाने तथा तुर्की और फारसके राष्ट्रीय आन्दोलनोंके प्रभावसे मुस्लिम जनतामें नव जागृति अुत्पन्न हुअी। अँग्रेज सरकारके प्रति अुसकी जो दृढ़ राज्यनिष्ठा थी अुसमें दरार पैदा हुअी क्योंकि सरकारने बंग-विच्छेद रद्द कर लीगको धोखा दिया था। अुसे अँग्रेज सरकारकी दुविधापूर्ण नीतिपर आशंका होने लगी। अुसकी धारणा थी कि सरकार कुछ दाने फेंककर मुर्गियोंको लड़ाना चाहती है। फलस्वरूप नव-जागृत मुसलमानोंके कारण सन् १९१३ में मुस्लिम लीगके अुद्देश्योंमें अिस प्रकार संशोधन किअे गअे—(१) मुसलमानोंके राजनीतिक तथा अन्य अधिकारोंकी रक्षा करना। (२) भारतकी अन्य जातियों और सियासी संस्थाओंमें मेल-जोल अेवं मित्रता स्थापित करना तथा (३) वैध आन्दोलन द्वारा शासन-सुधार प्राप्त करना और राष्ट्रीय अेकताका परिवर्धन कर सांप्रदायिक सहयोगसे भारतके लिअे अुपयुक्त स्वराज्य प्राप्त करना। संक्षेपमें मुस्लिम लीग पहलेकी अपेक्षा अधिक राष्ट्रीय अेवम् राजनीतिक संस्था बनी और अुसका वार्षिक अधिवेशन कांग्रेसके साथ ही होने लगा। सन् १९१५ में कांग्रेस तथा मुस्लिम लीगके अधिवेशन अेक साथ सम्पन्न हुअे और मुस्लिम लीगने सर्व-सम्मतिसे कांग्रेसके साथ राजनीतिक समझौता करनेका प्रस्ताव स्वीकृत किया।

लोकमान्यका चतुर्मुखी कार्यक्रम

सन् १९१४ के जूनमें भारतकी अवस्था बहुत विषम और निराशामयी थी। यूरोपमें प्रथम महायुद्ध प्रारम्भ होने और साम्राज्य-सरकारके साथ भारत सरकार द्वारा मित्र राष्ट्रोंका पक्ष लेनेसे हालत अत्यन्त नाजुक बन गअी थी। लोकमान्य तिलकने सन् १९०८ तक जिस राष्ट्रीय जागृति-गढ़का निर्माण किया था वह प्रायः ढह चुका था। सरकारी दमन और धूर्तताने राष्ट्रीय दलमें दरार पैदा की। देश निराशाके अन्धकारमें डूबने लगा।

परन्तु अिस हृदय-विदारक दशामें भी लोकमान्यको कार्य आगे बढ़ाना था। प्रतिकूल परिस्थितियोंपर विजय सम्पादन करनेमें महान् पुरुषोंकी विशेषता निहित होती है। अतअेव प्रतिबन्धसे मुक्तिके पश्चात कुछ समयके लिअे लोकमान्य तिलकका चिन्ताग्रस्त होना स्वाभाविक था। अुन्होंने तीन-चार मास तक सामयिक परिस्थितिका गम्भीर अध्ययन किया। अनुयाअियोंके साथ खुले दिलसे विचार-विमर्श किया। अुनका हेतु था देशका बल तौलकर भावी कार्यक्रम निर्धारित करना। वे सदा कहते थे कि अनुयाअियोंका बल अेकाअेक जादुअी प्रयोगसे नहीं बढ़ता और यदि तूफानके समान अेकाअेक बढ़ता भी है तो तूफानकी तरह गिरता भी है। वे अपने प्राणोंका बलिदान करनेके लिअे सदा सन्नद्ध रहते थे, परन्तु फल क्या हो सकता था? अुन्होंने दो-तीन बार कहा था "यदि लोगोंमें सशस्त्र विद्रोह करनेकी कुछ भी क्षमता हो तो शेषका अुत्तरदायित्व मैं स्वयं स्वीकार कर क्रान्तिकी घोषणा कर दूं, किन्तु जब जनता ही अुसके लिअे तैयार नहीं तब क्रान्तिकी बात करना निरी मूर्खता है।" संक्षेपमें वे प्रचलित परिस्थितिसे अधिकाधिक लाभ अुठाकर ही देशको अग्रसर करना चाहते थे। अिंग्लैंडके विख्यात मनीषी तथा वक्ता बर्कने अपने "माअी रिफ्लेक्शन्स ऑन फ्रेन्च रेवोल्यूशन" में सच्चे राजनीतिज्ञकी व्याख्या करते हुअे लिखा है "A true leader is he who makes the best of the present situation. All other definitions of a leader are either vulgar in conception or dangerous in execution."

अर्थात् "सच्चा नेता वही है जो परिस्थितिका ठीक-ठीक लाभ अुठाता है। नेताकी अन्य परिभाषाअें या तो भद्दी कल्पनाअें हैं, अथवा कार्य रूपमें परिणत करनेके लिअे खतरनाक है। अिस व्याख्याकी कसौटीपर ही लोकमान्यका नेतृत्व परखना चाहिअे। वे सचमुच समयानुकूल नीति अपनानेवाले नेता थे। अुन्होंने (१) नरमदलके साथ समझौता कर कांग्रेसमें सम्मिलित होने, (२) राष्ट्रीय दलका पुनः संघटन करने, (३) स्वराज्य संघकी स्थापना

करने और (४) युद्धकालीन परिस्थितिसे यथाशक्ति लाभ अुठानेका चतुर्विध कार्यक्रम निर्धारित किया।

बन्धन-मुक्तिके पश्चात् तुरन्त लोकमान्यने स्वयम् नरमदलसे पत्र-व्यवहार शुरू किया और दोनों दलोंमें समझौता करानेकी राष्ट्रीय आवश्यकता प्रतिपादित की। "हम देशके लिअे लड़ें न कि अपने-अपने दलके लिअे" अुस समयकी यही अुनकी नीति थी। लोकमान्य तिलकके निवेदनपर डा. अेनी बेसन्ट जैसी विदुषीने दोनोंमें मेल करानेकी भरसक चेष्टा की, परन्तु नरम-दलके हठके कारण अुन्हें विफल होना पड़ा। नरमदलके अेक नेताने तिलकपर मनमाने आरोप किअे। लोकमान्यने अुन्हें अुत्तर देकर निरुत्तर कर दिया, परन्तु निरुत्तर होनेपर भी वे टससे मस नहीं हुअे।

लोकमान्य तिलककी भारत-सेवक गो. कृ. गोखलेसे भेंट

देशके लिअे नम्र बनकर लोकमान्य स्वयम् गोखलेजीसे भेंट करने अुनके घर गअे। गोखलेने अुनके विचारोंका परिवर्तन जानना चाहा, परन्तु लोकमान्य गम्भीर थे, अतः अुनकी थाह कैसे लगती। गोखलेने अुन्हें कांग्रेसमें सम्मिलित न होनेकी सलाह दी। लोकमान्यने तत्काल अुत्तर दिया कि "मैं देशको जगाकर बहुमतके बलपर कांग्रेसमें प्रवेश करूँगा और अपना कार्यक्रम कांग्रेससे कार्यान्वित कराअूँगा, क्योंकि मैं कांग्रेसको भारतकी प्रतिनिधि संस्था मानता हूँ न कि दल विशेषकी बपौती।" गोखले यह अुत्तर सुनकर चकित हो गअे। जब लोकमान्यके निकट मित्रोंको यह मालूम हुआ तब वे अुनकी अिस असामयिक स्पष्टताकी निन्दा करने लगे। अुनको अदूरदर्शी कहने लगे। लोकमान्यने हँसकर अुत्तर दिया "मैं छल या कपटनीतिमें विश्वास नहीं करता। अपने देशवासियोंके साथ छलका व्यवहार क्यों किया जाय? वे भी अपनी शक्तिके अनुसार देश-सेवा करते हैं। अिधर हम भी अपनी धुनके पक्के हैं। अतअेव भविष्यमें जो बहुमत प्राप्त करेगा वही कांग्रेसपर अधिकार जमाअेगा।" लोकमान्य आपसी व्यवहार और राजनीतिमें प्रायः साधनोंकी शुद्धिपर जोर देते थे। अुन्होंने गंदे, तथा छलयुक्त साधनोंको कभी नहीं अपनाया।

राष्ट्रीय दलका पुनः संगठन

लोकमान्य तिलक निराश नहीं हुअे । अुन्होंने अपना मोर्चा "राष्ट्रीय दल" को दृढ़ करनेकी ओर मोड़ा । वे शक्तिके अुपासक थे । शक्तिमें अुनका अटूट विश्वास था । शक्तिके अनेक रूप हैं—जैसे आध्यात्मिक, नैतिक, सैनिक, सांघिक तथा पक्ष या दलकी शक्ति । संसारमें कहीं-कहीं अैसा भी देखा गया कि सत्पक्षकी शक्ति बढ़नेसे देशकी शक्ति बढ़ी और देशका अुपकार हुआ । अिसके अतिरिक्त विरोधी दलपर अपने दलके बलका प्रभाव डालकर अुसे समझौतेके लिअे विवशकर कॉंग्रेसमें शानसे सम्मिलित होना लोकमान्यका ध्येय था । यह अुनकी खुली नीति थी और आशासे अधिक सफल हुअी । सन् १९१५ के मअी में पूनामें राष्ट्रीय दलका पहला प्रान्तीय अधिवेशन सम्पन्न हुआ । प्रान्तमें दलकी लोकप्रियता तथा प्रभाव देखकर लोकमान्य अुसे तुरन्त ही अखिल भारतीय रूप देना चाहते थे । वे पक्की और गहरी नींव डालकर अुसपर अूँचा और विशाल मंदिर खड़ा करना चाहते थे । अिस अधिवेशनमें प्रान्तके कोने-कोनेसे अेक हजार प्रतिनिधि सम्मिलित हुअे । अिसकी तुलनामें कॉंग्रेसका वार्षिक अधिवेशन भी फीका था । लोकमान्यने अपने भावी कार्य-क्रमकी रूप-रेखा प्रस्तुत की । पहला प्रस्ताव था मित्र राष्ट्रोंके अभिनन्दन तथा अुनकी सफलताकी प्रार्थनाका । स्वयम् लोकमान्यने यह प्रस्ताव अुपस्थित किया और अुसपर प्रभावशाली भाषण दिया । अुन्होंने कहा "बेलजियम जैसे छोटे और स्वतन्त्र राष्ट्रपर आक्रमण कर अत्याचारी जर्मन राष्ट्रने अेकाअेक महायुद्ध प्रारम्भ किया है । हम भारतीय अपनी तथा अन्य राष्ट्रोंकी स्वत-न्त्रताका आदर करते हैं । जैसे हम स्वतन्त्र होना चाहते हैं, वैसे ही अन्य राष्ट्रोंको स्वतन्त्र देखना चाहते हैं । अतः मैं जर्मन राष्ट्रकी तीव्र भर्त्सना करता हूँ तथा ब्रिटेनकी साम्राज्य सरकार और मित्र राष्ट्रोंका हार्दिक अभि-नन्दन करता हूँ, क्योंकि अुन्होंने न्यायका पक्ष लेकर आक्रमक जर्मनीके विरुद्ध जंग छेड़ा है । मित्र राष्ट्रोंका पक्ष न्यायका है । फिर भी मेरे प्रिय भारतके स्वराज्यका प्रश्न मेरी दृष्टिसे ओझल नहीं है । भारतके स्वराज्यको ध्यानमें रखकर मैं अुनकी सफलताकी कामना करता हूँ, क्योंकि हमें ब्रिटेनकी

साम्राज्य-सरकारसे स्वराज्य प्राप्त करना है न कि आक्रमक जर्मनीसे।" अिस भाषणमें लोकमान्यकी अुदार तथा स्वतंत्रताप्रिय परराष्ट्र नीतिका यथार्थ दर्शन हुआ। दूसरे प्रस्तावमें अखिल भारतीय कांग्रेससे अनुरोध किया गया कि वह अपने संविधानमें प्रजातांत्रिक ढंगके अनुकूल परिवर्तन करवाकर कांग्रेसका द्वार अन्य दलोंके लिअे भी खोले। लोकमान्यने अिस प्रस्तावका भी समर्थन किया और कहा कि संयुक्त कांग्रेसको भारतवर्षकी अेकमेव प्रतिनिधि संस्था बनाकर हम अुसके द्वारा स्वराज्य-प्राप्तिके लिअे वैधानिक आन्दोलन चलाना चाहते हैं। सम्मेलनके सभापति, बै० बाप्टिस्टाने लोकमान्यकी सूचनानुसार निवेदन किया कि आवश्यकता होनेपर हम आयर्लैंड जैसी "होमरूल लीग" की स्थापना कर स्वराज्यके लिअे ठोस वैधानिक कदम अुठावेंगे। हर्ष-ध्वनिसे अिस घोषणाका स्वागत किया गया। तिलकने अपने प्रान्तमें राष्ट्रीय दलको पुनः सगठित किया; अिसकी अपेक्षित प्रतिक्रिया नरमदलपर भी पड़ी। नरमदलके नेताओंने अपना बल तौलनेके लिअे पूनामें प्रान्तीय अधिवेशन सम्पन्न किया। परन्तु दुर्भाग्यसे अुसमें सौ प्रतिनिधि भी सम्मिलित नहीं हुअे। अुसका अुद्घाटन करनेके लिअे बम्बअीके गवर्नर सपत्नीक पधारे, परन्तु मण्डप खाली था। अिसका अुचित प्रभाव नरमदलके नेताओंपर पड़ा। अुन्होंने भली भाँति जान लिया कि वे अब जनताके प्रतिनिधि नहीं रहे। परन्तु कोअी भी राजनीतिक दल किसी भी संस्थापर अपना अधिकार सरलतासे नहीं छोड़ता। नरमदल अिस सिद्धान्तका अपवाद कैसे हो सकता था? विवेककी अपेक्षा विवशता ही राजनीतिमें अधिक महत्वपूर्ण होती है। अल्पावधिमें अन्य प्रान्तोंमें भी राष्ट्रीय दलकी शाखाअें फैलीं। लोकमान्यके अलौकिक व्यक्तित्वसे सैकड़ों तेजस्वी कार्यकर्ता अुनके प्रति आकृष्ट हुअे। वे पुनः अखिल भारतीय, लब्धप्रतिष्ठ और भारत-भाग्य-विधाता नेता बने। नरमदलके नेता भी परिस्थितिसे विविश हुअे। अुन्होंने लोकमान्य तिलकसे सन् १९१५ के दिसम्बरमें बम्बअीमें होनेवाली कांग्रेसमें सम्मिलित होनेका अनुरोध किया और पन्द्रह दर्शक भेजनेका अधिकार प्रदान किया। लोकमान्यने नरमदलकी परिवर्तित नीतिपर संतोष व्यक्त किया,

परन्तु अुन्होंने कांग्रेस-विधानके प्रजातान्त्रिक नियमोंके अनुसार सुधार किअे बिना कांग्रेसमें सम्मिलित होनेमें अपनी असमर्थता प्रकट की। लोकमान्यके अुपयुक्त अुत्तरका कांग्रेसपर अनुकूल प्रभाव पड़ा और बम्बअी-अधिवेशनमें लोकमान्य तिलककी अिच्छानुसार कांग्रेसके विधानमें संशोधन किअे गअे। अिस प्रकार सम्मिलित न होकर भी अुन्होंने अिच्छानुसार कांग्रेससे अपना कार्य करवाया। कांग्रेसके साथ-साथ मुस्लिम लीगका अधिवेशन भी हुआ और अुसने भी अिसी प्रकारके प्रस्ताव स्वीकार किअे।

स्वराज्य-संघकी स्थापना

बम्बअी-अधिवेशनमें कांग्रेसने अपने विधानमें संशोधन किया, किन्तु अुसकी कारवाअी अगले अधिवेशन तक स्थगित रही। लोकमान्यने अिसका हार्दिक स्वागत कर सदलबल कांग्रेसमें सम्मिलित होनेका निश्चय प्रकट किया, परन्तु बीचमें अेक सालकी अवधि थी। अतअेव सन् १९१६ के अप्रैलमें राष्ट्रीय दलका दूसरा अधिवेशन बेलगांवमें किया गया। अिस अवसरपर स्वराज्य संघ (होमरूल लीग) की स्थापना की गयी। यह संघ डा० अेनीबेसेंटकी 'ऑल अिन्डिया होमरूल लीग' (अखिल भारतीय स्वराज्य संघ) की स्थापनाके छह मास पूर्व स्थापित हुआ था। जैसे आयर्लैंडमें "आयरिश होमरूल लीग" ने स्वराज्य प्राप्त करनेके लिअे वैधानिक आन्दोलन किअे और ब्रिटेनकी पार्लमेन्टमें लिबरल दलके नेता मि. ग्लेडस्टन द्वारा आयर्लैंडको स्वशासनका अधिकार प्रदान करनेवाला विधेयक अुपस्थित करवाया, स्वराज्य संघ भी वैसा ही करना चाहता था।

स्वराज्यकी व्याख्या

लोकमान्य तिलक स्वराज्य, होमरूल अर्थात् स्वशासन और सेल्फ गवर्नमेन्ट अर्थात् आत्मशासन तीनोंका प्रायः समान अर्थमें व्यवहार करते थे। आपने स्वराज्यकी व्याख्या की थी "अपने घरका कारोबार स्वयं सम्भालना।" स्वराज्यका अर्थ है, व्यवस्थापिका सभामें लोकपक्षके सभासदोंका प्राधान्य

और कार्यकारिणीपर व्यवस्थापिका सभाका पूरा अधिकार होना। संक्षेपमें शासनकी चोटी जनताके हाथमें रहे यही स्वराज्य है। "अब होमरूल क्या है ?" "होमरूलका अथवा स्वशासनका अर्थ है प्रतिनिधि सत्तात्मक राज्य।" "अर्थात् वह सरकार जिसपर लोगोंका अधिकार हो। असका अुद्देश्य भारत और अिंग्लैण्डका सम्बन्ध तोड़ना नहीं था।" आत्मशासन (सेल्फ गवर्नमेन्ट) की परिभाषा है, "प्रतिनिधि सत्तात्मक शासन जिसमें लोकमतकी कदरकी जाती हो और जिसमें थोड़ेसे नौकरोंके लाभके लिअे लोकमतकी अुपेक्षा न होती हो।" तिलक अिन तीनोंका व्यवहार अेक ही अुद्देश्यको समझानेके लिअे करते थे। व्याख्या या परिभाषाकी अपेक्षा असके अुद्देश्यसे ही आपका अधिक सम्बन्ध था। परन्तु आत्मशासन और सुशासनमें आप स्पष्ट भेद मानते थे। आपका दृढ़ विश्वास था कि सुशासन स्वशासनकी बराबरी नहीं कर सकता बल्कि आपकी दृष्टिसे कुशासन भी पर-सुशासनसे बहुत अधिक अच्छा था। संक्षेपमें तिलक निरपेक्ष स्वराज्यवादी थे। असके विपरीत नरमदलवादी सुशासनवादी थे। दोनोंकी धारणाओंमें यह स्पष्ट अन्तर था। लोकमान्य तिलक जिसे स्वराज्य कहते थे अुसे ही सन् १९२८ में कांग्रेसने नेहरू रिपोर्टके आधारपर औपनिवेशिक स्वराज्य कहा। सन् १९३२ की दूसरी राअुंड टेबुल कान्फरेन्समें राष्ट्रपिता महात्मा गांधीने "स्वतन्त्रताका सार" कहकर अुसकी ही मांग की थी। लोकमान्य तिलकने अपने दलके विधायक कार्यके लिअे पूर्वोक्त शुद्ध राजनीतिक संस्था स्थापित की। अिस संघके तत्वा-वधानमें ही वे आन्दोलन या प्रचार करना चाहते थे और भविष्यमें अुन्होंने वैसा किया भी। दूसरे प्रस्ताव द्वारा राष्ट्रीय दलको कांग्रेसमें सम्मिलित होनेका आदेश दिया गया। अिस प्रकार आठ वर्षकी दीर्घ अवधिके पश्चात् राष्ट्रीय दल और कांग्रेसमें सम्मानपूर्ण समझौता हो सका। सम्मेलन समाप्त होते ही लोकमान्य तिलकने स्वराज्य-संघके प्रचारार्थ दौरा प्रारम्भ किया। वे जहां-जहां जाते वहां-वहां हजारों नागरिक अुनका भव्य स्वागत करते और विराट् सभाओंमें अुनके प्रभावशाली भाषण दत्तचित्त होकर सुनते। सन् १९१६ की मअीमें डा. अेनीबेसेन्ट पूना पहुँची और लोकमान्य तिलककी

अध्यक्षतामें अुनका वाग्मितापूर्ण भाषण हुआ। अुन्होंने भी स्वराज्य-संघकी आवश्यकतापर जोर दिया और जनतासे लोकमान्यको सहयोग देनेका अनुरोध किया। लोकमान्यकी नरम लोहेपर ही प्रहार करो याने "प्राप्त अवसरसे लाभ अुठाओ" नीतिकी अुन्होंने बड़ी प्रशंसा की। अिस प्रकार दो महान् नेताओंका मेल हुआ।

ब्रिटेनका संकट भारतका सुयोग

महायुद्धके समय लोकमान्य तिलकने मनमें यह बात ठान ली कि ब्रिटेनका संकट भारतके लिअे सुयोग है। वे चाहते थे कि जितना बन सके भारतीयोंको अुससे अुतना लाभ प्राप्त हो। सार्वजनिक सभाओंमें वे नवयुवकोंको सेनामें शरीक होनेका अुपदेश देते थे और कहते थे कि यही अवसर है जब अँग्रेज सरकार आपको सम्मानके साथ सेनामें बुला रही है। आपको प्रगतिशील तथा अनुशासनप्रिय अँग्रेज अधिकारियोंसे सेना-संचालन तथा युद्ध-कौशलका ज्ञान प्राप्त करना चाहिअे जिससे भविष्यमें आप भारतवर्षकी रक्षा करनेमें समर्थ हों। अँग्रेज सरकार साधारण समयमें भारतीयोंको शस्त्र-विद्याकी शिक्षा नहीं देना चाहती थी, परन्तु जब अुसके संकटका समय आया है, तब हम हाथमें आअे हुअे अवसरका अपने राष्ट्रके लिअे क्यों न अुपयोग करें? राष्ट्रपिता महात्मा गान्धी भी अिस समय अवैतनिक रिक्रूटिंग आफिसरका कार्य कर रहे थे।

अपूर्व हीरक जयन्ती-समारोह

सन् १९१६ के जुलाअी मासमें लोकमान्य तिलककी आयुके साठ वर्ष पूरे हुअे। जनताने अुनकी हीरक जयन्ती मनानेका आयोजन किया। अभी तक महाराष्ट्र या भारतके अन्य प्रान्तोंमें किसी लोकनेताकी हीरक जयन्ती मनानेकी प्रथा प्रचलित नहीं हुअी थी। हाँ, भगवान रामचंद्र और कृष्णचन्द्र जैसे अवतारी महामानवों तथा सन्त तुलसीदास, चैतन्य महाप्रभु, सन्त ज्ञानेश्वर, सन्त तुकाराम, समर्थ रामदास जैसे भक्तोंकी जयन्तियाँ

हँसते हुअे कहा "आज प्रात:कालसे मैं मीठा-ही-मीठा खा रहा हूँ अिसमें मेरे मुँहका जायका बिगड़ गया था और जी अूब गया था। भगवानने बड़ी कृपा की कि मुझे अिस नोटिसके रूपमें नमकीन भेजा, अिससे मेरे मुँहका जायका ठीक होगा।" यह अुद्‌गार सुनकर जिला मेजिस्ट्रेट दंग रह गअे। कर्मयोगी तिलककी मुद्रापर हर्ष चमकने लगा। कुटुम्बी-जन तथा मित्रगण अिस अप्रत्याशित घटनासे दु:खी हुअे। लोकमान्यने विनोदमें कहा "यह रातका समय है। आप प्रकाशकी अपेक्षा कैसे करते हैं ?" लोकमान्य आपत्तिमें भी विनोद करनेवाले अलौकिक व्यक्ति थे। अुनका जीवन-वस्त्र सुख और दु:खके तानेबानेसे बुना हुआ था।

स्वराज्यका प्रचार कानूनी अधिकार माना गया

दूसरे ही दिन लोकमान्यने अिस नोटिसके खिलाफ बम्बअी-हाअीकोर्टमें अपील दायर की। बैरिस्टर जिन्नाने अुनकी वकालत की और बड़ा अुत्साह प्रदर्शित किया। विचारपतिने निर्णय दिया कि "तिलकके स्वराज्य संघके प्रचार सम्बन्धी भाषणोंमें, राजद्रोहका मसाला नहीं, अत: वे निर्दोष हैं।" लोकमान्यने हाअीकोर्टमें अिस आशयका बयान दिया था कि "यदि स्वराज्यका प्रचार करना कानूनी अपराध है तो मैं दोषी हूं और भविष्यमें भी रहूँगा। सरकार मुझे चाहे जो दंड दे।" परन्तु अँग्रेज विचारपतिने अपने फैसलेमें लिखा कि— "Independence is an ideal with which no true Englishman would quarrel." अर्थात् "स्वतन्त्रता अैसा पवित्र ध्येय है कि अिसके प्रति किसी भी सच्चे अँग्रेजको आपत्ति नहीं हो सकती।" तिलकको निर्दोषी ठहरानेके साथ ही अिस फैसलेके अनुसार स्वराज्य माँगना और अुसका प्रचार करना कानूनी अधिकार बन गया।

संकटको साधन बनानेका कौशल

लोकमान्य तिलकने अिस अभियोगके सम्बन्धमें अेक मार्मिक लेख "केसरी" में प्रकाशित किया जिसका शीर्षक था "तिलक निर्दोषी ठहरे, आगे क्या ?" अुसमें लिखा था "मेरा अभिनन्दन करनेसे कुछ लाभ नहीं होगा। अब मैं चन्द वर्षोंका साथी हूँ, जनतामेंसे सैकड़ों कार्यकर्ता आगे आने चाहिअे।

स्वराज्य-प्राप्तिके लिअे योजनाअें बनानी हैं, द्रव्य तथा मानव-बलका अुपयोग करना है, ब्रिटेनके पार्लियामेन्टमें भारतके स्वराज्यका मसविदा प्रस्तुत कराना है। आपको स्वराज्यकी साधनाके लिअे कमर कसना चाहिअे। अनुकूल अवसर प्राप्त हो गया है, परन्तु दृढ़ तथा निर्भीक प्रयत्नोंके बिना अुससे अुचित लाभ अुठाना असम्भव है। "नहि सुप्तस्य सिंहस्य प्रविशन्ति मुखे मृगाः।" अर्थात् "सोअे हुअे सिंहके मुखमें मृग स्वयं प्रवेश नहीं करते", आजका प्रश्न मेरे जैसे क्षुद्र पुरुषकी मुक्तिका नहीं अपितु भारतकी मुक्तिका है। व्यक्ति मरणाधीन है, परन्तु राष्ट्र अमर है। आप अैसा अुज्जवल कार्य कीजिअेगा जिसमें भविष्यकी पीढ़ी आपके प्रति कृतज्ञ रहे। मुझे अैसा लगता है कि हम भारतीयोंपर परमेश्वरकी असीम कृपा है और अुसका प्रमाण मेरा अुच्च-न्यायालयसे निर्दोषी ठहरना है।" तिलक अपने व्यक्तिगत संकटको जनतामें जागृति-निर्माणका साधन मानते थे। आत्मविस्मृति अर्थात् खुदको भूलना अुनके सार्वजनिक जीवनका आधार था। अुनके निजी सुख-दुख आम जनताके सुख-दुखमें दूधमें चीनी जैसे घुल गअे थे।

राजद्रोहके तीसरे अभियोगमें लोकमान्यके निर्दोषी ठहरनेके पश्चात् लोकमान्यने तुरन्त ही कन्नड़ प्रान्त तथा महाराष्ट्रमें व्यापक दौरा किया। अुनके दर्शन तथा भाषण सुननेके लिअे हजारों लोग अेकत्र होते थे। बेलगाँव, अहमदनगर और बम्बअीमें अुनका भव्य स्वागत हुआ। बम्बअी प्रान्तीय कॉंग्रेस कमेटीने अुनको आल अिन्डिया कॉंग्रेसका प्रतिनिधि चुना। नरमदलके जो सदस्य अुनके कट्टर शत्रु थे, अुन्होंने ही अुनका नाम सुझाया और अुसका समर्थन किया। अिस प्रकार तिलकके विरोधी भी अुनके पुजारी बने। अुधर कलकत्तामें कॉंग्रेस तथा मुस्लिम लीगकी कार्यसमितियाँ आपसी समझौता सम्पन्न करनेमें व्यस्त थीं। मेलमें थोड़ी झिझक या अड़ंगा डाला जा रहा था। भारतवर्ष भरमें अुत्साह तथा आशाकी लहरोंका प्रादुर्भाव हुआ था। ज्यों-ज्यों कॉंग्रेस-अधिवेशनका समय समीप आने लगा त्यों-त्यों सर्व दलके अनुयायियोंमें अपूर्व चैतन्य तथा हलचल दिखाअी देने लगी। समस्त राष्ट्रकी आँखें अेकटक लखनअूकी ओर देखने लगीं।

सोलहवाँ प्रकरण

दूरदर्शी राजनीतिज्ञकी विजय

'Lokmanya Tilak's part was always notable for liberality and large mindedness towards the Muslims. It may be asserted without any doubt that his generous gesture was a great factor in winning over the Mussalmans and inducing them to accept the proposals which formed the Lucknow pact. The introductory portion of his speech, when proposing the resolution embodying the pact in the open session of the Congress—"It has been said by some that we Hindus have yielded too much to our Mohameden brethren. I am sure I represent the sense of the Hindu community all over India, when I say that we could not have yielded too much"—breathes the only spirit in which a majority can win the complete confidence of a minority. His idea was that of United India—marching towards freedom.

Dr. M. A. Ansari
ex—President of I. N. Congress.

अपूर्व स्वागत

लोकमान्य तिलक आठ वर्षकी दीर्घ अवधिके पश्चात् कांग्रेसके अधिवेशनमें सम्मिलित होनेके लिये ता. २३ दिसम्बरको सदल-बल बम्बईसे

लखनअू रवाना हुअे। आपकी यात्रा स्पेशल ट्रेनसे हुअी। यह सौभाग्य तिलकका ही था। वैसे देखा जाय तो अिसके पूर्व दो बार अँग्रेजी सरकारने आपका प्रवास स्पेशल ट्रेनसे करवाया था, किन्तु राजद्रोही कैदीके रूपमें, न कि लोकप्रिय नेताके रूपमें। आपके साथ राष्ट्रीय दलके लगभग ५०० सदस्य थे जो प्रतिनिधि बनकर कांग्रेसमें सम्मिलित होने जा रहे थे। लोकमान्यकी ओर देखते ही अैसा प्रतीत होता था मानो कोअी विजयी सेनापति अपने बहादुर सैनिकोंके साथ राजधानीमें प्रवेश करने जा रहा हो। अुस अवसरपर अुनका सम्मान तथा स्वागत प्रत्येक बड़ी स्टेशनपर किया गया। भोपाल स्टेशनपर हजारों मुसलमानोंने आपपर फूलोंकी वर्षा की और गलेमें मोटे-मोटे गुलाबके फूलोंके हार पहनाअे। वहाँ तिलकने हिन्दू-मुसलमानोंकी अेकतापर समयोचित संक्षिप्त भाषण दिया। बीच-बीचमें स्वागत आयोजन होनेसे ट्रेन पांच घन्टे लेट हुअी। लखनअूमें ज्यों ही ट्रेनने धीरे-धीरे प्रवेश किया त्यों ही 'लोकमान्य तिलक महाराजकी जय' का गगनभेदी जयघोष प्रतिध्वनित होकर अैसा गूंजने लगा मानों कानोंके पर्दे फाड़कर अुन्हें बधिर बनाना चाहता हो। वहाँ तिलकके स्वागतके लिअे जन-सागर अुमड़ पड़ा। अुनपर फूलोंकी वर्षा हुअी। अुनके लिअे फूल मालाओंसे सजी मोटरकी सवारी लाअी गअी। लोकमान्य अुसमें सवार हुअे और खड़े होकर दर्शकोंके प्रणाम स्वीकारकर नम्रतासे जनता-जनार्दनका अभिवादन करने लगे। जनताकी अभिलाषा थी कि अुनका जलूस धीरे-धीरे आगे बढ़े, परन्तु प्रबन्धक वृद्ध तथा दुर्बल लोकमान्यको, जिन्हें लम्बी सफरके कष्ट अुठाने पड़े थे, नियोजित विश्राम-स्थलपर शीघ्र पहुँचाना चाहते थे। जनताकी अिच्छा प्रबन्धकोंकी अिच्छासे अधिक स्वाभाविक अेवं प्रभावकारी सिद्ध हुअी। बीचमें ही किसी बुद्धिमानने चाकूसे मोटरका टायर काट दिया और तिलककी शीघ्रगामी सवारी बेकाबू हो गअी। अब लोकमान्यको धीरे चलनेवाली सवारीपर बैठना पड़ा। वे बग्घीपर सवार हुअे, परन्तु जनताका प्रेम अितना अुमड़ा कि दर्शकोंने घोड़ोंको अलगकर स्वयं लोकमान्यकी बग्घी खींचना प्रारम्भ कर दिया। सैकड़ों दर्शकोंने

लोकमान्यके चरण छुअे। चारबागमें महामना मालवीयजीने अुनका स्वागत किया। तिलकने मालवीयजीको अपनी दाहिनी ओर बैठा लिया। चार घण्टोंतक यह विशाल जलूस नगरमें घूमता रहा। दर्शकोंमें हिन्दू-मुसलमान-पारसी आदि विभिन्न धर्मोंके अनुयाअी थे। राष्ट्र-नेताका यह सच्चा राष्ट्रीय स्वागत था। लगभग तीन बजे जलूस अमीनाबादमें छेदीलालकी धर्मशालाके पास पहुँचा, जहाँ अुनके निवासकी व्यवस्था की गअी थी। दर्शकोंकी भीड़ सागरके समान फैली थी, अतअेव लोकमान्य धर्मशालाकी छतपर खड़े हुअे। भरे हुअे कण्ठसे अुन्होंने जनताके प्रति अपनी कृतज्ञता प्रकटकर सबको धर्म, जाति अेवं पन्थका भेद भुलाकर स्वराज्य प्रातिके लिअे प्रयत्नशील होनेका अुपदेश दिया। लखनअू शब्दकी श्रेष्ठात्मक व्याख्या कर अुन्होंने कहा—"मुझे प्रबल आशा है कि कल आपके भाग्यवान (Luck-Now) शहरमें स्वराज्यका झण्डा फहरायेगा।" जिस धर्मशालामें अुनका निवास था अुसके सामने पाँच दिनतक दर्शकोंका मेला-सा लगा रहा। अुन्हें बीच-बीचमें छतपर खड़े होकर दर्शन देना पड़ता था।

भारतके भाग्योदयकी योजना

बम्बअीमें काँग्रेस और मुस्लिम लीगके अधिवेशन साथ-साथ सम्पन्न हुअे थे और अुनमें अगले अधिवेशनमें मेल-मिलापकी योजना प्रस्तुत करनेका निर्णय किया गया था। बीचमें दो बार दोनों संस्थाओंके प्रतिनिधि-मण्डलोंमें मेलके सम्बन्धमें अिलाहाबाद तथा कलकत्तेमें काफी विचार-विमर्ष हुआ। विचार-विमर्षका झुकाव मतभेदकी अपेक्षा मेलकी ओर अधिक था। कलकत्तामें मेल-मिलापकी अेक योजना तैयार की गअी, परन्तु पंजाब और बंगाल जैसे मुसलिम-बाहुल्य प्रान्तोंका सवाल खटाअीमें पड़ गया। दोनों संस्थाओंमें मेल न होनेकी आशंका राष्ट्रको भयभीत करने लगी। फिर भी दोनों संस्थाओंके नेता मेलके लिअे अिच्छुक थे और यही समयकी माँग थी। विषय-निर्वाचिनी-समितिमें जब अिसपर विचार होने लगा तब सबने लोकमान्यके सुझावोंका हार्दिक समर्थन किया।

फलतः कांग्रेस और मुसलिम लीगमें मेल हो गया। खुले अधिवेशनमें कांग्रेसके पूर्व सभापति तथा विख्यात वक्ता सुरेन्द्रनाथ बैनर्जीने बड़ा प्रभावशाली भाषण कर समझोतेकी योजना प्रस्तुत की। अुसका समर्थन लोकमान्य तिलकने किया। कहनेकी आवश्यकता नहीं कि महामना मदनमोहन मालवीय जैसे सुयोग्य वक्ताके विरोधी होनेपर भी योजना स्वीकृत हो गअी, जो संक्षेपमें अिस प्रकार थी —

(१) यह कांग्रेस ब्रिटिश सरकारसे निवेदन करती है कि वह तुरन्त भारतको स्वशासन (होमरूल) के पूर्ण अधिकार प्रदान करनेकी घोषणा करे।

(अ) ब्रिटिश साम्राज्यका पुनर्गठन करते समय भारतको स्वशासनके पूर्ण अधिकार प्रदान कर अुसका राजनीतिक दर्जा कनाडा, आस्ट्रेलिया तथा दक्षिण-अफ्रिका जैसा करके अुसे साम्राज्यमें बराबरीका स्थान दिया जाय।

(२) कांग्रेस और मुसलिम लीगके आपसी समझौतेके अनुसार निम्न-लिखित सुझाव कार्यान्वित किअे जायँ——

(अ) प्रान्तीय विधान सभामें ४।५ लोक निर्वाचित सदस्य हों और १।५ सरकार नियुक्त।

(ब) प्रान्तीय विधान-सभाके प्रतिनिधि समान और व्यापक मता-धिकारसे चुने जायँ।

(स) मुसलमानोंके लिअे साम्प्रदायिक प्रतिनिधित्वका सिद्धान्त स्वीकार कर भिन्न-भिन्न प्रान्तोंमें अुनका प्रतिशत प्रतिनिधित्व अिस प्रकार हो—

पंजाब ५०, संयुक्तप्रान्त ३०, बंगाल ४०, बिहार २५, मध्यप्रान्त १५, मद्रास १५ और बम्बअी ३३।

समझौतेकी प्रमुख धाराअें यही थीं। अुस समय कांग्रेसने अपने चिर-संस्थापित संयुक्त प्रतिनिधित्वके सिद्धान्तका बलिदान शायद अिस आशासे किया कि स्वराज्य प्राप्त करनेके पश्चात् दोनों संस्थाओंका परस्पर सन्देह और अविश्वास दूर हो जाअेगा, और हिन्दू तथा मुसलमान अेक राष्ट्रके सदस्य होकर भारतको महान राष्ट्र बनानेमें सहायक होंगे। किन्तु यह आशा व्यर्थ सिद्ध हुअी।

चुनौतीका अुत्तर

लोकमान्य तिलक की दृष्टि शुद्ध स्वराज्यवादी और भारतीय राष्ट्रीयतासे ओतप्रोत थी। अुन्होंने खुले अधिवेशनमें डंकेकी चोटपर कहा कि "आठ वर्ष पूर्व जिस बहिष्कारके प्रस्तावके लिअे में कॉंग्रेसमें लड़ा था अुससे यह मेलका प्रस्ताव कअी गुना अधिक महत्वपूर्ण है। आज अिस नगरने अपना लखनअू (Luck-now) नाम सार्थक किया। क्योंकि यहाँ हिन्दू-मुसलमान, अुग्रदलवादी तथा नरमदलवादी अिकट्ठा हुअे हैं और अुन्होंने आपसमें मेल स्थापित कर अँग्रेज सरकारको स्वराज्य प्राप्तिकी सर्वसम्मत योजना भेजनेकी प्रतिज्ञा की है। हमारे कअी भाअियोंका यह आक्षेप है कि अिसमें मुसलमानोंकी विजय और हिन्दुओंकी पराजय है। यह तो हिन्दुओंके मुसलमानोंकी शरणमें जानेके समान है। परन्तु मैं स्पष्ट निवेदन करना चाहता हूँ कि यदि सरकार केवल मुसलमानोंको ही स्वराज्यके अधिकार प्रदान करती तो भी मुझे अुसमें कोअी खटकनेवाली या आपत्ति-जनक बात नहीं प्रतीत होती। मेरा विश्वास है कि मैं यहाँ समस्त हिन्दुओंकी वास्तविक भावनाको प्रकट कर रहा हूँ। यदि स्वराज्यके अधिकार केवल राज-पूतोंको ही दे दिअे जाअें तो भी मुझे आनन्द ही होगा। ये अधिकार हमारे पिछड़े हुअे हरिजन भाअियोंको भी दिअे जाअें तो भी मुझे हर्ष ही होगा, क्योंकि स्वराज्य-प्राप्तिके बाद झगड़ेका स्वरूप घरेलू बन जाअेगा। अँग्रेजोंका तीसरा पक्ष समाप्त हो जाअेगा।" अँग्रेज सरकार स्वशासनका अधिकार देनेका स्वाँग रचकर बार-बार कहती है कि क्या करें, भारतकी समस्या आपसी मतभेदके कारण अुलझी हुअी है? भारतीय नेताओंके लिअे यह अुलझी परिस्थिति चुनौती थी। लोकमान्यने अुस चुनौतीको स्वीकार किया और कॉंग्रेस तथा मुसलिम-लीगमें मेल करा दिया। अुस समय राष्ट्रीयताका सवाल ही मुख्य था। अिसलिअे लोकमान्यने साम्प्रदायिक प्रतिनिधित्व स्वीकार कर अुस अुलझनको सुलझाया। अुनकी राष्ट्रीयभावना स्वर्ण जैसी शुद्ध थी। अुसे प्रान्तीयता, धार्मिकता तथा वर्गवादिताकी संकीर्णता छू तक नहीं सकती थी। कट्टर हिन्दू धर्माभिमानी तथा संस्कृतिनिष्ठ विद्वान् ब्राह्मण होते हुअे

भी वे शुद्ध राष्ट्रवादी भारतीय थे। अिस शुद्ध तथा निर्भीक राष्ट्रीयताके बलपर ही वे कांग्रेसके सर्वश्रेष्ठ नेता और भारतके सिरताज बने।

लोकमान्य तिलकने बंगाल और पंजाबके मुसलमानोंका जो प्रतिशत प्रतिनिधित्व मंजूर करवाया अुसकी छानबीन बुद्धिपूर्वक और शान्तचित्तसे की जानी चाहिअे। वास्तवमें बंगालमें मुसलमानोंकी प्रतिशत जन-संख्या ५२ थी और पंजाबमें ५७ के अूपर। अर्थात् ये बहुसंख्यक मुसलिम प्रान्त थे। अुन्हें बंगालमें ४० तथा पंजाबमें ५० प्रतिशत प्रतिनिधित्व दिया गया था। अिसका परिणाम यह था कि अिन दोनों प्रान्तोंमें मुसलमानोंका प्रान्तीय शासनपर बहुमतके बलपर मनमाना अधिकार न चलता था। मेलकी यह योजना मॉंटफोर्ड सुधारोंमें समाविष्ट की गअी। सन् १९३५ के अनुसार मुसलमानोंको बंगाल तथा पंजाबमें अुनकी जनसंख्याके अनुपातमें प्रतिनिधित्व मिला। अत. अुन बहुसंख्यक मुसलिम प्रान्तमें प्रतिक्रियावादी तथा संकीर्णतावादी मुसलिम-लीगकी सरकारें कायम हुअीं, जो लखनअू-समझौतेके अनुसार कभी नहीं हो सकतीं थीं। मुसलिम-लीगके अेक कट्टर तथा बुद्धिमान नेताने मुझसे कहा था—"समझमें नहीं आता कि जिन्ना जैसा बुद्धिमान नेता लखनअूमें लोकमान्यके जालमें कैसे फँसा? यदि लखनअू-समझौता कायम रहता तो पाकिस्तानकी स्थापना नहीं होती।" सन् १९४०के मुसलिम-लीगके अधिवेशनमें जिन्नाने कहा था कि "बंगाल, पंजाब तथा सिन्धमें हमारी अथवा हमारी अनुकूल सरकारें कायम हुअीं, अतः यह सिद्ध हुआ कि हिन्दुस्तानके अेक भागपर हम अक्षुण्ण राज्य कर सकते हैं। अेतअेव हम अब हिन्दुस्तानसे विच्छेदकी मांग करते हैं।" राजनीतिमें सिद्धान्तकी अपेक्षा तत्कालीन अथवा सामयिक आवश्यकताओंको अधिक महत्व दिया जाता है। परन्तु लोकमान्य जैसे दूरदृष्टा और मनीषी राजनीतिज्ञके विचारोंमें अतीतका अनुभव और भविष्यकी दृष्टि पाअी जाती है। बंग-विच्छेदकी जो चाल सन् १९०६ में अंग्रेज सरकारने चली, अुससे प्रोत्साहन प्राप्त कर संकीर्णतावादी मुसलमानोंने मुसलिम-लीगकी स्थापना की। अिन घटनाओंपर लोकमान्य तिलकने सम्यक् रूपसे विचार किया था। वे भली-भाँति

जानते थे कि कूटनीतिज्ञ अंग्रेज किसी समय मुसलमानोंको अधिक अधिकार देकर हिन्दुओंसे पृथक् कर भारतकी अेकतापर विच्छेदकी कुल्हाड़ीसे घाव कर सकते ह। भविष्यमें किसी अेक प्रान्तमें संकीर्णतावादी मुसलमानोंकी सरकार न बन पाअे यही अुनकी दूरदृष्टिका परिणाम था। अिस दूरदर्शितासे ही अुन्होंने साम्प्रदायिक प्रतिनिधित्वकी व्याख्या स्वीकार की थी। बंगाल तथा पंजाबमें मुसलमानोंको अल्पमत या समान मतमें लानेमें ही अुनकी विजय थी। अन्य प्रान्तोंमें जैसे मद्रास, मध्यप्रान्त, बम्बअीमें अधिक मत देनेका सिद्धान्त स्वीकार कर मुसलमानोंको अुनकी जनसंख्याके अनुपातकी अपेक्षा अधिक प्रतिनिधित्व दिया गया था जो पंजाब तथा बंगालके बदलेमें स्वाभाविक था। अिन अत्यधिक हिन्दू-जनसंख्यावाले प्रान्तोंमें मुसलमानोंको ५–१० अधिक प्रतिनिधि देनेसे अुनका बल नहीं बढ़ सकता था। भारतका दुर्भाग्य था कि सन् १९३३ के साम्प्रदायिक (कम्युनल अवार्ड) ने लखनअू-समझौतेकी समाप्ति कर पुनः मुसलिम प्रान्तोंके निर्माणका मार्ग प्रशस्त कर देशमें विभाजनका बीज बो दिया।

अखिल भारतीय स्वराज्य-संघ-परिषदमें

अिसी समय ता. ३० दिसम्बरको लखनअूमें ही विदुषी डा. अेनी बेसेन्टके सभापतित्वमें अखिल भारतीय स्वराज्य-संघकी विराट् परिषद हुअी, जिसमें लगभग १५०० प्रतिनिधि सम्मिलित हुअे। लोकमान्य भी सदलबल पहुँचे। वास्तवमें तिलकने महाराष्ट्रमें स्वराज्य-संघकी स्थापना तथा प्रचारका कार्य सात माह पूर्व ही शुरू कर दिया था। अिस दृष्टिसे वे भारतीय स्वराज्य-संघके जनक थे, परन्तु डा. अेनी बेसेन्टने जब अखिल भारतीय स्वराज्य संघकी स्थापनाकर अुनका सहयोग चाहा तब अुन्होंने बिना हिचकिचाहटके अुसमें सहयोग दिया और लोगोंको बताया कि दोनों स्वराज्य संघोंके ध्येय तथा कार्यप्रणालियाँ समान हैं। वे अपने व्यक्तिगत अधिकार या नेतृत्वके लिअे संस्थाअें नहीं स्थापित करते थे। संस्थाओंके द्वारा देश-सेवा करना अुनका अेक मात्र ध्येय था। सभापतिके अनुरोध पर अुन्होंने

सारगर्भित भाषण दिया। अुन्होंने कहा—"लखनअूमें दो महत्वपूर्ण घटनाअें घटित हुअीं। अेक तो स्वराज्यका ध्येय निश्चित कर अँग्रेज सरकारसे अुसकी माँग की गअी, दूसरे हिन्दू और मुसलमानोंमें राजनीतिक मेल हुआ। जैसे मुकदमा जीतनेके लिअे फरियादी होशियार वकीलको अपने जामिनका कुछ अधिक अंश देता है, वैसे ही सही हो या गलत हमने मुसलमान भाअियोंको कुछ अधिक देना स्वीकार किया है। यह बात सत्य है कि मुसलमानोंकी सहायताके बिना स्वराज्यका आन्दोलन प्रभावशाली तथा प्रतिनिधित्वपूर्ण नहीं हो सकता। जब तीन पक्षोंमें युद्ध होता है तब दो पक्षोंमें मेल किअे बिना युद्धकी समाप्ति हो ही नहीं सकती। अँग्रेज सरकार चाहती है कि स्वराज्यकी लड़ाअी मुसलमान और हिन्दुओंमें लड़ी जाय, अतअेव हमारी नीति यह होनी चाहिअे कि हम दोनों मिलकर अँग्रेजोंके खिलाफ लड़ें। स्वराज्यका अर्थ है अपने घरमें अपना राज्य। अतअेव अिसके लिअे प्रत्येक व्यक्तिको कमर कसना चाहिअे।" स्वराज्य-सम्पादनका आन्दोलन तीव्र करनेके लिअे वे सदा तत्पर रहते थे। डा० अेनीबेसेन्ट ने अुनके प्रति हार्दिक आभार प्रकट किया और अुनकी अुदार दृष्टि तथा आत्म-निरपेक्षताकी बहुत प्रशंसा की।

अिसी समय वहाँ अेक-दूसरे स्थानपर हिन्दू-महासभाका अधिवेशन हो रहा था। अुसके संचालकोंने तिलकको अुसमें अुपस्थित होनेके लिअे आग्रह-पूर्वक आमन्त्रण दिया। लोकमान्यका स्वभाव सरल था। वे अुसमें भी सम्मिलित हुअे। अुस अधिवेशनमें कांग्रेस-मुसलिम लीग मेलकी कड़ी आलोचना की गअी। लोकमान्यने अुसे शान्त-चित्तसे सुना। हिन्दू-सभा अुनपर बहुत रुष्ट हुअी, परन्तु वे टस-से-मस न हुअे।

तिलक लखनअूसे कानपुर गअे। वहाँ अुनका अपूर्व जुलूस निकाला गया। कअी स्थलोंपर आरती अुतारी गअी, अनपर फूलोंकी वर्षा हुअी और हजारों दर्शकोंने अुनके चरण छुअे। परेडके मैदानमें अुनका भाषण हुआ। कांग्रेस-अधिवेशनमें सम्मान तथा विजय प्राप्तकर लोकमान्य कलकत्ता गअे।

वहाँ आपके मित्र बाबू मोतीलाल घोष, जो 'अमृतबाजार पत्रिका'के संस्थापक अेवं सम्पादक थे, आपकी राह देख रहे थे। बाबूजीकी अुत्कट अिच्छा थी कि मृत्युके पूर्व वे लोकमान्यसे अन्तिम बार मिल लें। मरणासन्न घोष बाबूकी अिच्छा पूरी हुअी। यहाँ भी लोकमान्यका भव्य स्वागत हुआ तथा विराट् सभामें भाषण भी। लोकमान्यने अपने पुराने साथी बाबू बिपिनचन्द्र पालको सक्रिय राजनीतिमें खींचा। अिसी समय अुत्साही नवयुवक कार्यकर्ता बैरिस्टर चित्तरंजनदासने भी अुनसे भेंट की और लोकमान्यके अनन्य अनुयायी बने।

सत्रहवाँ प्रकरण

स्वराज्य मन्त्रका अुद्घोष और प्रचार

"Lokmanya Tilak was the uncrowned king of India during the Home Rule days. This position he attained by service and suffering."

—The History of Indian National Congress.

लोकमान्य तिलकके ''केसरी'' ने लखनअू-कांग्रेसकी सफलताकी कामना करते हुअे लिखा कि ''गोमती नदीके किनारे भारतीय स्वतन्त्रताका झण्डा फहराया गया। शुक्रवारको स्वीकृत किया गया कांग्रेस-मुसलिम-मेलका प्रस्ताव भारतकी राजनीतिक आकांक्षाओंका सिरमौर है। अब जनताका परम कर्तव्य है कि वह अिस अूँचे आदर्शकी प्राप्तिके लिअे कटिबद्ध हो।'' भारतीयोंको अिसके लिअे प्रयत्नशील बनाना लोकमान्यके दौरेका अेकमात्र ध्येय था। कलकत्तेमें स्वराज्यका तीव्र प्रचार कर वे नागपुर पहुँचे। विदर्भ लोकमान्यका गढ़ था। यहाँके निवासी अुनके ही अनुयायी थे। लोकमान्य भी विदर्भपर पूरी ममता रखते थे। यहाँके शहरोंमें यवतमाल, कारंजा, दारव्हा और अकोला आदिमें अुनका जो अपूर्व सम्मान हुआ, वह अद्वितीय था। विराट् सभाओंमें वे कहते थे—''जैसे वृक्षका मूल काटनेसे वृक्ष गिरता है न कि पत्तियोंको तोड़नेसे, वैसे ही स्वराज्यकी सक्रिय माँगसे अंग्रेज सरकार काँपती है न कि अधिकारोंकी भिक्षा माँगनेसे। सरकार कहती है कि स्वराज्यकी माँग करो किन्तु नपी-तुली भाषामें। यह अुतनी ही विचित्र बात है जितनी कि किसीको फल देकर कहना कि बिना दाँत लगाअे अिसे खा जाओ। क्या स्वराज्य अंगूरकी तरह है? महा नाटककार शेक्सपियरने अपने 'मर्चेन्ट आफ वेनिश' नाटकमें शायलाकके विलक्षण स्वभावका चित्रण

किया है। हमारी अँग्रेज सरकार भी ठीक अुसी तरह भारतीय रंगमंचपर शायलाकका अभिनय कर रही है। हम सरकारकी कोमल भावनाओंकी चिन्ता क्यों करें, जब वह हमारी भावनाओंकी निर्दयतासे अुपेक्षा करती है ? हम स्वराज्य माँगते हैं अर्थात् अपने घरमें अपना अधिकार माँगते हैं।" वे जगह-जगह अिसी प्रकारके विचारों द्वारा स्वराज्यका व्यापक प्रचार करते थे।

ज्ञानी कौन ?

अिसी समय अकोलामें 'गीता-रहस्य' पर लोकमान्यका मार्मिक प्रवचन हुआ। यह प्रवचन राजनीतिसे अछूते रहनेवाले सरकारी नौकरों और होन-हार विद्यार्थियोंके लिअे था, क्योंकि सरकारने अपने नौकरों तथा विद्यार्थियों-पर लोकमान्यका राजनीतिक भाषण सुननेके लिअे गुप्त रूपसे प्रतिबन्ध लगा दिया था। तिलकने गीताके अनुसार ज्ञानी पुरुषकी कसौटीका विवेचन किया। अुन्होंने गीताका आधार लेकर कहा कि ज्ञानकी कसौटी शुद्ध परोपकारी तथा निर्भीक व्यवहार है। जो ज्ञानी संसारके झंझटोंसे बचकर निष्क्रिय रहता है, अेकान्तवासके लिअे पलायन करता है, केवल ज्ञानान्दमें ही मग्न रहता है, वह समाजके प्रति अपने कर्तव्यसे विमुख होता है। ज्ञानीके लिअे संग्रह करना आवश्यक है। केवल ज्ञानयुक्त वाग्मिता ज्ञानीकी कसौटी नहीं। सबसे अच्छा चाकू वह जो पैसे यानी धातुको काटता है न कि जो मक्खन या पेन्सिल काटता है। जो परोपकारमें रत होता है, लोक-संग्रह करता है, वही श्रेष्ठ ज्ञानी है। अुनके प्रवचनमें जनताको चैतन्य करनेकी क्षमता थी। वे स्वयं चैतन्य-मूर्ति थे। अतः वे जहाँ जाते चेतना जागृत होती।

देशकी रक्षा करना सीखो

अिसी समय भारत सरकारने सैनिक बनकर अपने देशकी रक्षा करनेके लिअे युवकोंका आवाहन किया। तिलक सरकारी आह्वानोंको देश-हितकी कसौटीपर परखकर ही स्वीकार करते थे। वे स्वराज्यकी प्राप्तिके लिअे जन-जागरणका आन्दोलन छेड़ना चाहते थे और भविष्यमें

मिलनेवाले स्वराज्यकी रक्षा करनेकी सक्रिय चिन्ता भी करते थे। पूनाकी सार्वजनिक सभामें अुन्होंने भारतीय युवकोंसे निवेदन किया कि "वे सैनिक बनकर आधुनिक वैज्ञानिक शस्त्र-विद्याका ज्ञान सम्पादन करें। काँग्रेस अपने जन्म अर्थात् सन् १८८५ से सैनिक शिक्षाकी माँग कर रही है, परन्तु संशयग्रस्त अँग्रेजी सरकारने अुसे स्वीकार नहीं किया। अब महायुद्धने सरकारको विवश कर दिया है। अुसने स्वयं जनताका आह्वान किया है।" जब किसीने अुनसे पूछा कि क्या भारतीय युवकोंको सेनामें वही अूंचे अधिकार या पद प्राप्त होंगे जो अँग्रेजोंकी बपौती हैं, तब लोकमान्यने तत्काल अुत्तर दिया कि "जो मिले अुसे स्वीकार कर मैं अधिकके लिअे आन्दोलन करनेकी नीतिका अनुयायी हूँ। आप सेवामें प्रवेश कीजिअे और वहाँ अपनी योग्यता दिखलाअिअे। अपनी योग्यताके बलपर ही आप भविष्यमें अूंचे पदोंकी माँग कर सकेंगे। बाहरसे आपके लिअे हमसे जो बन सकेगा करेंगे। आज अूंचे पद प्राप्त नहीं हैं, अिसलिअे सेनामें शरीक न होना भविष्यमें देशको धोखा देना है—कर्तव्यपराङ्मुखता है। मानवको आकांक्षाओंकी प्राप्ति कभी अेकाअेक नहीं होती। दूसरी तथा अधिक महत्वकी बात यह है कि हम स्वराज्य-प्राप्तिकी लम्बी-चौड़ी बकवास करते हैं, परन्तु भविष्यमें मिलनेवाले स्वराज्यकी रक्षा करनेकी क्षमता-सम्पादन करनेकी अुपेक्षा भी क्या बुद्धिमानी है?" लोकमान्य तिलकके अुपदेशका अपेक्षित प्रभाव पड़ा और लगभग ८०० युवकोंने जिनमें १०० डिग्रीधारी थे, सैनिक बने। अिधर लोकमान्य जनताको सैनिक बननेका अुपदेश देते थे, अुधर सरकार अुनके प्रति अधिक संशययुक्त बनती जाती थी। वह पागलों जैसा व्यवहार करती थी। पंजाब सरकारने तो अुनके दिल्ली तथा पंजाब प्रवेशपर प्रतिबन्ध लगा दिया था। वास्तवमें पंजाबमें जानेका अुनका अिरादा भी नहीं था। परन्तु जैसे कंसको हर जगह कृष्ण दिखाअी देते थे वैसे ही अँग्रेज सरकारको सर्वत्र तिलक-ही-तिलक दिखलाअी देते थे।

निःशुल्क तथा आवश्यक प्राथमिक शिक्षा

सन् १९१७ के अप्रैलमें स्वराज्य-संघके प्रचार-कार्यके लिअे तिलक कन्नड़ प्रान्त गअे। अिसी समय वहाँ बेलगाँव-जिला-मराठा-शिक्षा-परिषद हो रही थी। संचालकोंके आग्रहपर वे अुसमें भी सम्मिलित हुअे। प्राथमिक शिक्षापर विचार प्रकट करते हुअे अुन्होंने कहा--"मैंने अपनी देश-सेवा या समाज-सेवाका श्रीगणेश शिक्षा-संस्थाकी स्थापनासे किया, अतअेव शिक्षाका कार्य मेरी स्वाभाविक रुचिका कार्य है। देशमें सर्वत्र शिक्षाका प्रचार करना सरकारका प्रथम कर्तव्य है, परन्तु यह कर्तव्य स्वदेशी सरकारका है न कि परदेशी। लोगोंके निजी प्रयत्नोंकी सीमा होती है। अँग्रेज सरकार शिक्षासे होनेवाली सम्भावित जागृतिके भयसे शिक्षाका प्रचार नहीं करती, किन्तु हम तो स्पष्ट कहते हैं कि हमारा ध्येय शिक्षित बनकर राजनीतिक अधिकारोंकी माँग करना है। यदि मैं स्वराज्यमें प्रधान-मन्त्री बनूंगा तो सर्व-प्रथम निःशुल्क तथा अनिवार्य प्राथमिक शिक्षाकी व्यवस्था करूँगा। अिधर सरकार शिक्षाका प्रचार नहीं करती और अुधर कहती है कि अज्ञानी होनेके कारण भारतवासी स्वराज्यके योग्य नहीं हैं। हमारे लिअे केवल अेक ही अुपाय है और वह है स्वराज्य प्राप्त करना। तत्पश्चात् सूर्य अुगते ही प्रकाश मिलनेकी भाँति शिक्षाका प्रचार सहज और सुगम हो जाअेगा।" तिलक स्वराज्यको सर्वतोभिमुखी अुन्नतिका मूल स्रोत मानते थे और अुसकी ओर अग्रसर होनेके लिअे सबको प्रेरणा देते थे।

स्वराज्य-संघका पहला जन्मोत्सव

सन् १९१७ की मअीमें पूनामें स्वराज्य-संघका पहला वार्षिक अधिवेशन सम्पन्न हुआ। अध्यक्ष बैरिस्टर बाप्टिस्टाने संघका वार्षिक विवरण पढ़ा। अुन्होंने निवेदन किया कि हमने सर्वप्रथम लोकमान्य तिलकके नेतृत्वमें भारतमें स्वराज्य-संघकी स्थापनाकर स्वराज्यकी माँग तथा प्रचार करना कानूनी अधिकार ठहराया। अेक वर्षमें संघके १६००० सक्रिय सदस्य बने, जिनमें ५३ प्रतिशत अब्राह्मण, ४२ प्रतिशत ब्राह्मण और शेष मुसलमान तथा पारसी

थे। अध्यक्ष बाप्टिस्टा स्वयं पारसी थे। लगभग २५० महिलाअें भी सदस्य बनीं थीं। संक्षेपमें स्वराज्य-संघ भारतीय जनताकी प्रतिनिधि राजनीतिक संस्था थी। अुस समय जब जनता अँग्रेज सरकारकी साधारण पुलिससे भी डरती थी और लोकमान्य तिलकके विरोधी जनताको भड़काते भी थे, तब अेक वर्षमें अितने सदस्य बनना कम सफलताकी बात नहीं थी।

स्वतन्त्र भारतका संविधान

अिसी वार्षिक अधिवेशनमें लोकमान्यने अपनी कल्पनानुसार स्वतन्त्र भारतके संविधानकी निम्नलिखित रूपरेखा प्रस्तुत की :—

"भारतमें संघ सरकार (फेडरल गवर्नमेण्ट) स्थापित होगी। संघ सरकार स्वायत्त प्रान्तोंके लोक-निर्वाचित प्रतिनिधियोंकी बनेगी। यह सरकार भारतकी रक्षा, यातायात, मुद्रा, वैदेशिक नीति अित्यादिके शासकीय विभागोंके संचालनपर अधिक जोर देगी। प्रान्तोंकी सरकारें शासनके अन्य विभागोंका संचालन करेंगी।"

अुनकी कल्पना स्थूल तथा बहुत मोटी थी। परन्तु स्वतन्त्र भारतके विधानका मानचित्र अुनके सम्मुख था और वे प्रजातान्त्रिक शासन-प्रणालीके लिअे सचेष्ट थे। लगभग अिसी प्रकारका संविधान सन् १९४७ के पश्चात् संविधान सभाने बनाया। अिसी समय अुन्होंने स्वराज्य-संघके सदस्योंको कांग्रेसके प्रति अनन्य निष्ठा रखनेकी सूचना दी, क्योंकि संघ कांग्रेसके अन्तर्गत अेक दल था। आपने यह भी सूचित किया था कि निकट भविष्यमें स्वराज्य-संघकी ओरसे अेक प्रतिनिधि-मण्डल अिंगलैण्ड भेजा जायगा और वहाँके मजदूर तथा अुदार-दलकी सहानुभूति सम्पादन कर ब्रिटिश पार्लमेण्टमें भारतीय होमरूलका विधेयक अुपस्थित करवानेकी कोशिश करेगा। अुस वर्ष अुन्होंने स्वराज्य-संघके ५० हजार सदस्य बनानेकी आत्मविश्वासयुक्त घोषणा भी की जिसका स्वागत करतल-ध्वनिसे किया गया। लंदनमें अेक कार्यालय स्थापित कर अध्यक्ष बैरिस्टर बाप्टिस्टा जैसे सुयोग्य नेताको वहाँ भेजनेका प्रस्ताव भी स्वीकृत हुआ। लोकमान्यकी भावी योजना सुनकर सदस्यों तथा दर्शकोंका

अुत्साह दूना हुआ। अुनमें नअी चेतना तथा नअी दृष्टि अुत्पन्न हुअी। स्वराज्य-संघके साथ कांग्रेसका कार्य भी तीव्र गतिसे बढ़ने लगा।

सरकारकी भर्त्सना और सत्याग्रह

विदुषी डा० अेनीबेसेन्टने लोकमान्यको अिस कार्यमें सक्रिय सहयोग दिया। वे स्वराज्य-संघके प्रचारका तूफानी दौरा करने लगीं। जादू-सा प्रभाव डालनेवाली अुनकी वाग्मिताका प्रभाव जनतापर पड़ने लगा। सरकारको यह बात खटकी और अुसने डा० बेसेन्टको अुटकमन्डमें नजर-कैद कर रखा। समस्त देशमें सरकारकी घोर भर्त्सना कर डा० बेसेन्टका प्रकट रूपसे अभिनन्दन किया गया। लोकमान्यने डा० बेसेन्टको तार भेजकर अुनका व्यक्तिगत अभिनन्दन किया और अपने सम्पादकीय लेखमें अुनके धैर्य, देशभक्ति, साहस तथा बुद्धिमत्ताकी प्रशंसा करते हुअे जनतासे निवेदन किया कि सरकारने अुनके प्रति जो अन्याय किया है, अुसका प्रतिकार करना हमारा राष्ट्रीय कर्तव्य है। लोकमान्य केवल मौखिक सहानुभूति दिखानेवाले मुखजीवी राजनीतिज्ञ नहीं थे। अुन्होंने यह प्रश्न बम्बअी प्रान्तीय कांग्रेस कमेटीमें प्रस्तुत किया और सत्याग्रह और आन्दोलन प्रारम्भ करनेकी जो योजना डा० बेसेन्टके तेजस्वी अनुयायी मद्रासमें बना रहे थे, अुन्हें कांग्रेस द्वारा अुत्साहपूर्वक संदेश भेजवाया तथा सत्याग्रहके सम्भावित आन्दोलनको प्रान्तीय कांग्रेस द्वारा मान्यता दिलाअी। अिस कार्यमें महात्मा गांधीने भी लोकमान्यकी सहायता की।

लोकमान्यने कलकत्तामें होनेवाले कांग्रेस-अधिवेशनके सभापति-पदके लिअे डा. अेनी बेसेन्टका नाम प्रस्तावित किया। अिसका समर्थन सर्व-सम्मतिसे बम्बअीकी कांग्रेस कमेटीने किया। अन्य प्रान्तीय कांग्रेस-कमेटियोंने भी अिस सूचनाका अनुमोदन किया और डा० बेसेन्ट सभापति निर्वाचित हुअीं। यहां यह बात ध्यानमें रखने योग्य है कि अिस अधिवेशनकी स्वागत-समितिके अध्यक्ष देशबन्धु चित्तरंजनदास स्वयं चाहते थे कि लोकमान्य तिलक कांग्रेसके सभापति बनें, परन्तु अुन्होंने आत्मविस्मृति कर डा० बेसेन्टका

नाम प्रस्तुत किया। कारण, जो नेता सरकारकी अप्रीतिका भाजन होता था वह तिलकके आदरका पात्र बनता था। यही बात सन् १९०७ में 'पंजाबसिंह लालाजीके सम्बन्धमें हुअी थी। जनतामें विदेशी सरकारके प्रति असन्तोष निर्माण करना वे देशभक्तिकी स्थूल कसौटी समझते थे। बहादुरीकी प्रशंसा करना अुनका धर्म था।

स्वराज्य-संघकी ओरसे बाप्टिस्टाको लन्दन भेजकर अुन्हें वहाँ लखनअू कांग्रेसके प्रस्तावका प्रचार करनेका आदेश दिया गया। वास्तवमें बाप्टिस्टा गअे थे स्वराज्य संघके खर्चसे, परन्तु लोकमान्यकी देश-हित-दृष्टि अितनी अुदार थी कि अुन्होंने अुन्हें कांग्रेसका ही कार्य करनेको कहा। वे समयपर जिस प्रकार आत्मविस्मृतिके अभ्यस्त थे, वैसे ही दलको भी भूल सकते थे।

अिसी समय वे गुजरातके दौरेपर गअे। वहाँ गुजराती जनताने भरूचमें आपका विशाल सभामें स्वागत किया। आपके भाषणका अनुवाद छह वक्ता भिन्न-भिन्न स्थानोंपर खड़े होकर करते थे। अुन्होंने गुजराती जनताके स्नेहपूर्ण व्यवहारकी प्रशंसा की।

भारत-मन्त्री मान्टेग्यूसे स्पष्टोक्ति

सन् १९१७ के दिसम्बरमें मान्टेग्यू दिल्ली पधारे। अुन्होंने विभिन्न दलोंके प्रतिनिधियोंको आमन्त्रितकर मिलनेके लिअे बुलाया। लोकमान्य स्वराज्य-संघके प्रतिनिधि-मण्डलके नेता बनकर अुनसे मिले। अुनसे भारतके भावी राजनीतिक सुधारोंके सम्बन्धमें विचार-विमर्श हुआ, परन्तु मान्टेग्यू साहबको सन्तोष नहीं हुआ। अुन्होंने अुनसे (तिलकसे) व्यक्तिगत भेंट करनेकी अिच्छा प्रकट की। तिलकने तत्काल अुसे स्वीकार कर लिया। दूसरे दिन ही अुनकी लम्बी मुलाकात हुअी। अन्तमें हँसते-हँसते मान्टेग्यूने अुनसे पूछा—"यदि सम्भावित सुधारोंसे आपको सन्तोष न हुआ तो आपकी क्या नीति होगी?" तिलकने तत्क्षण अुत्तर दिया—"जो मिलेगा अुसे स्वीकार कर अधिकके लिअे लड़ूंगा।" कहा जाता है कि

भारत-मन्त्री अिस अुत्तरसे चौंक गअे, परन्तु अिंगलैंड जाकर अपने मित्रोंमें अुन्होंने लोकमान्यके धैर्य, दूरदर्शिता, देशभक्ति, बुद्धिमत्ता तथा व्यवहारिक ज्ञानकी बड़ी प्रशंसा की। अुन्होंने स्पष्ट कहा था कि तिलक अेक अद्‌भुत व्यक्ति हैं।

भाषानुसार प्रान्तोंका पुनर्गठन

सन् १९१७ के दिसम्बरमें कांग्रेसका अधिवेशन कलकत्तामें बड़ी सफलतासे सम्पन्न हुआ। विषय निर्धारिणी-समितिमें आन्ध्रके प्रतिनिधियोंने भाषाके आधारपर प्रान्तोंका पुनर्गठन करानेका प्रस्ताव अुपस्थित किया। अिसपर तीव्र विवाद हुआ। डा० बेसेन्ट स्वयं अिस प्रस्तावके विरुद्ध थीं, परन्तु लोकमान्य तिलकने समर्थन कर प्रस्ताव स्वीकृत कराया। अुन्होंने कहा—"यदि भारतमें प्रजातान्त्रिक राज्य-प्रणाली स्थापितकर अुसे सफल बनाना है तो प्रान्तोंकी भाषाके आधारपर पुनर्रचना करना अनिवार्य है, अन्यथा सरकार और जनतामें सामंजस्य नहीं स्थापित होगा। सरकार जनताकी सच्ची प्रतिनिधि नहीं रहेगी। जनताकी सरकारको जनताकी भाषामें ही शासन करना होगा न कि अँग्रेज सरकारकी भाँति अन्य भाषामें।" अधिवेशन समाप्त होते ही आपने बंगालमें दौरा आरम्भ किया। फिर नागपुर लौटे।

अभूतपूर्व व्यापक दौरा

सन् १९१८ की फरवरीमें आपने विदर्भ तथा मध्यप्रान्तका व्यापक दौरा किया। लगातार २० दिन तक अिस शहरसे अुस शहर और देहातसे देहातमें भ्रमण कर स्वराज्यका तूफानी प्रचार करते रहे। २० दिनमें लगभग ३०० शहर तथा देहातोंमें पहुँचे। लगभग २०० सभाओंमें भाषण दिया और स्वराज्य-संघका कार्य चलानेके लिअे लगभग २ लाख रुपअेका चन्दा अिकठ्ठा किया। आप मधुमेह जैसे असाध्य रोगसे पीड़ित थे। आयु ६३ वर्षकी थी और दिन प्रतिदिन चिन्ता बढ़ रही थी। दाहिने पाँवपर घाव था और प्रतिदिन प्रातःकाल अुसका ड्रेसिंग होता था। रोगी होनेके कारण अुन्हें पथ्यसे

रहना आवश्यक था । अुन दिनों आजकलकी भाँति यातायातके द्रुतगामी साधन नहीं थे । सड़कें खराब थीं और नदियोंपर पुल नहीं थे । अिसलिअे रेल, मोटर अेवं बैलगाड़ीमे यात्रा करनी पड़ी। यह दौरा मध्यप्रान्तके ९ जिलोंमें हुआ । खंडवा जैसे हिन्दी भाषी शहरमें अपनी टूटी-फूटी हिन्दीमें भाषण कर आपने स्वराज्यका प्रचार किया । खामगाँव या आकोटकी विराट् सभामें भाषण करते-करते अुनके मुखसे स्वराज्यका मन्त्र अनायास प्रवाहित हुआ । वह मन्त्र था—"**स्वराज्य हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है और हम अुसे प्राप्त करके ही रहेंगे ।**" यह मन्त्र सुनते ही श्रोताओंमें चेतनाकी लहर दौड़ गअी और स्वराज्य-आन्दोलनके लिअे अेक अुत्साहवर्धक नारा प्राप्त हुआ । लोकमान्यसे पूर्व किसी अन्य नेताने अितना विशाल दौरा कर भारतके गाँवोंमें जन-जागरणके लिअे ठोस कार्य नहीं किया था। जनताकी शक्ति अर्थात् स्वावलम्बनमें लोकमान्य तिलकका पूरा विश्वास था । स्वराज्यका मन्त्र अुन्हें गाँव-गाँवमें प्रचारित करना था जिससे जनता स्वराज्यके लिअे सामुदाअिक आन्दोलन छेड़े । २१ दिनतक लगातार भ्रमण करनेके कारण वृद्ध लोकमान्य थक गअे और आवश्यक विश्रान्ति लेनेके लिअे पूना लौटे । चन्द दिनों तक विश्राम कर वे सोलापुरकी ओर दौरा करने गअे । वहाँसे भी लगभग २५ हजार रुपयेका चन्दा अेकत्र कर पूना लौटे ।

मजदूरोंका अनूठा अपनापन

भारतका दौरा समाप्त कर आवश्यक सामग्री अेकत्र करके भारत मन्त्री मॉंटेग्यू लन्दन रवाना हुअे । वे लोकमान्य पहलेसे ही लन्दन जानेका विचार कर रहे थे । वहाँ वे मजदूर दलका सहयोग प्राप्त कर अुसके द्वारा पार्लियामेन्टमें होमरूल सम्बन्धी विधेयक प्रस्तुत करवाना चाहते थे । समय पूर्णतया अनुकूल था । स्वराज्य-संघके प्रतिनिधि-मण्डलका नेतृत्व स्वीकारकर लन्दन जानेके लिअे वे बम्बअी पधारे । वहाँ अछूत समाजकी परिषद हो रही थी, अुसमें सम्मिलित हुअे और अछूतोंकी सर्वांगीण अुन्नतिके लिअे सहानुभूति प्रकट की । अिसी समय बम्बअीके मजदूरोंने आपके

प्रति अपनेपनकी जो भावना सक्रिय रूपमें प्रकट की वह सचमें अनूठी थी। १६ हजार मजदूरोंने आपसमें प्रत्येकसे १ आना चन्दा वसूल कर अेक हजार रुपयोंकी थैली श्रद्धापूर्वक लोकमान्यके चरणोंमें अर्पित की। अिस थैलीको स्वीकार करते समय तिलकका हृदय भर आया। अुनकी आँखोंमें आँसू चमकने लगे। अुन्होंने मजदूरोंका नम्रतासे अभिवादन किया और कहा कि भारतके लिअे स्वराज्यके हेतु आपने जो सक्रिय सहानुभूति प्रकट की है, अुसके लिअे मैं आपको हार्दिक धन्यवाद देता हूँ।

अिन्हीं दिनों स्वराज्य-संघका दूसरा अधिवेशन हो रहा था। अुसमें लोकमान्यने बड़ा सारगर्भित भाषण दिया। अुन्होंने कहा—"प्रतिनिधि-मण्डल ले जानेकी प्रेरणा मुझे भगवानसे प्राप्त हुअी है और अैसा दिखाअी देता है कि भगवानकी कृपासे हमें यश प्राप्त होगा। मैं और अन्य प्रतिनिधि निमित्त मात्र हैं।" वे सब काम कृष्णार्पणबुद्धिसे करते थे और यही भगवद्गीताकी सही शिक्षा है। प्रतिनिधि-मण्डलमें अुनके परम मित्र दादा साहब खापर्डे, विपिनचन्द्र पाल, विट्ठलभाअी पटेल और साहित्य-सम्राट् न. चि. केलकर अित्यादि नेताओंका समावेश किया गया था। ता. २७ मार्चको बम्बअीके लगभग ५० हजार दर्शकोंने अुनको सामुदायिक बिदाअी दी अेवं सफलताके लिअे भगवानसे प्रार्थना की।

मद्रासमें स्वराज्यका प्रचार

बम्बअीसे स्टीमरमें जानेकी व्यवस्था न होनेसे लोकमान्य सदलबल कोलम्बोकी ओर चल पड़े। रास्तेमें मद्रास प्रान्तके छोटे-बड़े, स्टेशनोंपर अुनका हार्दिक स्वागत हुआ। दर्शक अुनके मुखसे कुछ सुननेके लिअे व्याकुल रहते थे अिसलिअे वे अँग्रेजीमें संक्षिप्त भाषण कर अुनको सन्तुष्ट करते थे। मद्रासमें तो अुनका अपूर्व स्वागत हुआ। कांग्रेसकी अध्यक्षा डा. अेनीबेसेन्ट स्वयं अुनके स्वागतके लिअे अुपस्थित थीं। वे अुन्हें अडयार-स्थित थियोसोफीके केन्द्रीय कार्यालयमें ले गअीं। थियोसोफीके कार्यपर तिलकने सन्तोष व्यक्त किया। शामको अेक विराट् सभामें, जिसमें सब

दलके नेता सम्मिलित थे, लोकमान्यको अभिनन्दन-पत्र अर्पित किया गया। सभाकी अध्यक्षता डा. बेसेंट थीं। अभिनन्दन-पत्रपर नरमदलके नेताओंके भी हस्ताक्षर थे। अुत्तरमें लोकमान्यने समयोचित भाषण किया।

साम्राज्यवादी सरकारकी दुष्ट नीति

कोलम्बोमें भी अुनका विराट् स्वागत हुआ। वहाँ भारतीयोंके अतिरिक्त हजारों लंका-निवासियोंने स्वागत-समारोहमें अुत्साहसे भाग लिया। सीलोनके प्रमुख नेताओंकी अध्यक्षताओंमें स्थान-स्थानपर अुनके तथा पाल बाबूके भाषण हुअे। अिसके अतिरिक्त सीलोनवासियोंने अुनके प्रति अपना सक्रिय आदर पेश करनेके लिअे ७५००) की थैली अर्पित की और कार्यकी सफलताके लिअे शुभकामनाअें प्रकट कीं। स्वागत-समारम्भ, प्रीति-भोज और व्याख्यानोंका सिलसिला तीन दिन तक लगा रहा। चौथे दिन दोपहरके समय वे स्टीमरपर सवार होनेकी तैयारीमें ही थे और अुनका कुछ सामान स्टीमरमें रखा भी जा चुका था कि अेका-अेक साम्राज्यवादी सरकारके अिशारेपर भारत सरकारका तार मिला जिसके अनुसार लोकमान्य तथा प्रतिनिधि-मंडलके अन्य सदस्योंका पासपोर्ट रद्द कर दिया गया था। लोकमान्यने शान्त चित्तसे कहा—"भगवानकी अिच्छा, भारत जाकर हम पुनः अपने स्वराज्य-प्रचारके कार्यमें जुट जाअेंगे।" "मनसा चिन्तितं कार्यं देवमन्यद्वि-चिन्तयेत्।" का अुन्हें पूरा अनुभव हुआ। अुन्होंने ताड़ लिया कि भारत सरकार तथा साम्राज्य-सरकार अुन्हें चिढ़ाना चाहती है। यदि वे आवेशमें सरकारकी आलोचना करते तो पुनः राजद्रोहके जालमें पकड़ लिअे जाते। अिसलिअे वे शान्त रहे। जनता द्वारा सरकारकी अप्रत्याशित नीतिकी भर्त्सना की गअी। सरकारपर भी कुछ प्रभाव पड़ा और अुसने अेक पत्र प्रकाशित किया कि "अभी योरोपमें महायुद्धकी अवस्था चरम सीमापर है। ब्रिटेनकी राज-नैतिक स्थिति बहुत नाजुक है। अतअेव वहाँ बाल गंगाधर तिलककी अुपस्थिति वांछनीय नहीं है। अिसलिअे भारत सरकारने अुनका तथा अन्य प्रति-निधियोंका पासपोर्ट रद्द किया है।" अिस पत्रसे किसीको भी सन्तोष नहीं

हुआ। वास्तवमें मांटेग्यू साहब अभी भारतसे नहीं लौटे थे। वे भारतको निकट भविष्यमें दिअे जानेवाले सुधारोंके कार्यमें व्यस्त थे। अैसे समयमें लोकमान्यका ब्रिटेनमें होना सरकारने खतरनाक समझा। मजदूर दलके नेताओंसे लोकमान्यकी कुछ बातचीत होनेका समाचार पहले ही ब्रिटेनमें प्रचारित हो चुका था। स्वराज्य-संघके अध्यक्ष बैरिस्टर बाप्टिस्टा अेक सालसे अिंग्लैंडमें रहकर अिस दृष्टिसे कुछ प्रयत्न भी कर रहे थे और ब्रिटेनका कांजरवेटिव दल, जिसके हाथमें साम्राज्यकी बागडोर थी, लोकमान्यकी अुपस्थितिसे भयभीत अेवं आशंकाग्रस्त हो रहा था। अिन्हीं कारणोंसे अुनके ब्रिटेन जानेपर प्रतिबन्ध लगाया गया।

स्वराज्य बिना स्वदेश-रक्षा कैसी ?

सन् १९१७ की अप्रैलमें वायसरायने दिल्लीमें युद्ध-परिषद सम्पन्न करवाअी। अिसमें सम्मिलित होनेका आमन्त्रण सब दलोंके नेताओंको भेजा गया, परन्तु खतरनाक तिलक नहो बुलाअे गअे। वायसरायकी अध्यक्षतामें युद्ध-परिषद प्रारम्भ हुअी। अुन्होंने भारतीय नेताओं तथा जनतासे सहायताकी माँगकी और अपने देशकी रक्षाके लिअे अुनका आवाहन किया। परिषद्में महात्मा गान्धी, जो बिना शर्त अँग्रेज सरकारको सहायता देनेके पक्षमें थे, अेवं अवैतनिक रिकरूटिंग आफीसरका कार्य भी कर रहे थे, अेकाअेक खड़े हो गअे और अुन्होंने वायसरायसे निवेदन किया कि जब सरकार युद्ध-परिषदमें लोकमान्य तिलक और डा० अेनीबेसेन्ट जैसे लोकप्रिय नेताओंकी अुपेक्षा कर रही है, तब भारतीय जनतासे युद्ध-कार्यमें सहायता पानेकी आशा अधिक नहीं की जा सकती। अतअेव मुझे यह परिषद व्यर्थ मालूम होती है। अितना कहकर वे परिषदके बाहर चल पड़े। तिलक स्वयं वहाँ नहीं जा सके, परन्तु अुन्होंने अपनी राय अपने परम मित्र दादा साहब खापर्डे द्वारा बड़ी मार्मिकतासे प्रकट करवाअी। दादा साहब खापर्डेने अपनी व्यंग्यभरी विनोद-युक्त वाणीमें कहा—"वायसराय साहब, युद्धमें सहायता करने तथा स्वदेशकी रक्षाके लिअे सब भारत-

वासी तत्पर हैं। अैसा कौन भारतवासी है जो मित्रराष्ट्रोंकी विजय नहीं चाहता और प्रतिदिन अुसके लिअे प्रार्थना नहीं करता ? परन्तु आप ही बताअिअे कि स्वराज्यके बिना स्वदेशकी रक्षा कैसे हो सकती है ? वायसराय साहब अेकाअेक चिढ़ गअे और अुन्होंने दादा साहबको बीचमें ही रोका। दादा साहब भी चतुराअीसे चुप हो गअे क्योंकि अुनका हेतु सिद्ध हो चुका था। अिस प्रकार दिल्लीकी युद्ध-परिषदका अन्त हुआ। महात्मा गान्धीकी भविष्यवाणी खरी सिद्ध हुअी। जनता युद्ध-सहायतामें अुदासीन हो गअी। भारत-सरकार पश्चात्ताप करने लगी। अुसने अपनी गलती सुधारनेकी नअी युक्ति सोची और जून मासमें पुनः युद्ध-परिषद बम्बअीमें करना निश्चित किया। अिस समय बम्बअीके गवर्नर लार्ड विलंगडनने बड़ी सजगतासे लोकमान्य तिलक तथा स्वराज्य-संघके अन्य नेताओंको आमन्त्रण-पत्र भेजे। लोकमान्य तिलकने निमन्त्रण स्वीकार किया, परन्तु गवर्नर साहबसे यह निवेदन किया कि वे युद्ध-परिषदमें भाषण करना चाहेंगे। अपने मित्र द्वारा प्राप्त दिल्ली-परिषद्के अनुभवोंसे तिलक सजग थे। गवर्नर साहबका नकारात्मक अुत्तर न मिलनेपर लोकमान्यने समझा कि अुनकी प्रार्थना स्वीकार कर ली गअी है। अतअेव वे सदलबल युद्ध-परिषदमें सम्मिलित हुअे। परिषदकी कारवाअी गवर्नरकी अध्यक्षतामें प्रारम्भ हुअी। कअी राज्यनिष्ठ वक्ताओंके लम्बे भाषण हुअे, परन्तु लोकमान्यकी अुपेक्षा ही रही। अन्ततोगत्वा किसी भले आदमीकी सिफारिशपर लोकमान्यको कुछ शब्द कहनेकी अनुमति दी गअी। लोकमान्य खड़े हुअे। परिषदमें गम्भीर सन्नाटा छा गया। गवर्नर साहब तथा अुच्च अधिकारियोंने अपनी भौंहें सिकोड़ीं। राजा-महाराजा तथा नबाबोंने भयपूर्ण दृष्टि-निक्षेप करना प्रारम्भ किया। तिलकके प्रति घृणा युक्त नजर डाली। राज्यनिष्ठ नरम दलवाले मनमें आनन्दित हुअे, क्योंकि अुनके खयालसे लोकमान्य राज्यनिष्ठा व्यक्त कर युद्ध-सहायताका आश्वासन देनेके लिअे खड़े हुअे थे। परन्तु स्वराज्य-संघके अिने-गिने आमन्त्रित सदस्य भली भांति जानते थे कि तिलक वहां क्या कहेंगे ? अुनके मुखपर आत्मविश्वास चमकने लगा। लोक-

मान्यने गम्भीर वाणीमें कहा—"गवर्नर साहब ! मैं बड़ी नम्रतासे भारतीय जनताकी सच्ची आकांक्षा आपके सम्मुख निवेदन करता हूँ। मैं भारतकी जनताकी ओरसे आपको आश्वासन देता हूँ कि यदि भविष्यमें भारतके विरुद्ध आक्रमण हुआ तो हम भारतके सुपुत्र अुसकी रक्षाके लिअे बलिदान होनेको कटिबद्ध हैं। किसी भी बाहरी आक्रमणका प्रतिकार करनेमें हम सरकारको सहयोग देनेमें पीछे नहीं हैं, परन्तु स्वराज्य और स्वदेश-रक्षाका अन्योन्याश्रय सम्बन्ध कैसे भंग किया जा सकता है ?" "स्वराज्य" शब्द सुनते ही गवर्नर साहब आग-बबूला हो अुठे। अुन्होंने बड़े अदबसे कहा—"यहाँ राजनीतिक चर्चा अवांछनीय है।" लोकमान्य भी सिद्धहस्त थे। वे "ये यथा मामप्रपद्यन्ते तांस्तथैव भजाम्यहम्" तत्वके अनुयायी थे। अुन्होंने तत्काल अुत्तर दिया—"अैसी अवस्थामें किसी स्वाभिमानी पुरुषका यहाँ अुपस्थित रहना सम्भव नहीं। अिसलिअे मैं परिषदका परित्याग करता हूँ।" अितना कहकर वे वहाँसे चल पड़े। परिषद प्रभाहीन हो गअी।

छह दिनोंके पश्चात् १६ जूनको बम्बअीमें स्वराज्य-दिवसोत्सव मनाया गया। महात्मा गांधीकी अध्यक्षतामें विराट् सभा हुअी। महात्मा गांधीने कहा—"गवर्नर साहब द्वारा लोकमान्यके प्रति किअे गअे बर्तावका मैं घोर विरोध करता हूँ। चूंकि लोकमान्यको युद्ध-परिषदमें भाषण करनेकी पूर्व अनुमति प्राप्त हो चुकी थी अतअेव वे अपना प्रामाणिक मत प्रकट कर रहे थे। अुनका बीचमें रोका जाना असभ्य अेवं भर्त्सनीय है। अुनके अपमानसे साम्राज्यको बड़ी हानि होगी।" तत्पश्चात् बैरिस्टर जिन्नाने कहा—"अैसे व्यवहारसे यह स्पष्ट होता है कि सरकार दिलसे जनताका सहयोग नहीं चाहती।" अन्तमें लोकमान्यका संक्षिप्त भाषण हुआ। अुन्होंने कहा—"अँग्रेज सरकार हमपर अप्रामाणिकताका आक्षेप करती है, परन्तु मेरे पास अुसकी अप्रामाणिकताके काफी प्रमाण हैं। यहाँ अैसा कौन व्यक्ति है जो देशकी पराधीनता बढ़ाने तथा अुसे दृढ़ करनेवाले बन्धनोंका स्वागत करेगा ? यदि सरकार सेनामें अूंचे पदोंपर भारतीयोंकी नियुक्ति करनेका आश्वासन देती है तो चन्द दिनोंमें मैं स्वयं ५ हजार युवकोंको सेनामें प्रवेश करवा सकता

हूँ। यदि मैं यह काम पूरा न कर सकूँ तो पाँच हजारमें जितनी संख्या कम होगी, अुतनीके लिअे प्रत्येकपर मैं १०० रुपयोंका दण्ड देना स्वीकार करूँगा और अिसके लिअे महात्माजीके पास पचास हजार रुपयोंकी निधि अमानत स्वरूप रखनेको तैयार हूँ। हाँ, पहला कदम सरकार अुठाअे।" अिससे स्पष्ट होता है कि वे युद्धजन्य परिस्थितिमे अधिक-से-अधिक लाभ अुठाना चाहते थे, परन्तु सम्मानके साथ।

सबेरा हुआ, परन्तु सूरज कहाँ है ?

जून मासके अन्तमें "मांटफोर्ड-सुधार" की योजना प्रकाशित की गअी। लोकमान्यने बड़ी गम्भीरतासे अुसका अध्ययन किया। अुन्होंने अिस योजनाकी मार्मिक आलोचना 'केसरी' के तीन लेखोंमें की। अुन लेखोंके शीर्षकोंसे ही पता चलता है कि अुनमें कैसे आलोचनात्मक विचार प्रकट किअे गअे होंगे। पहला लेख था, "सबेरा हुआ परन्तु सूरज कहाँ है ?" दूसरा था, "जनाब, दिल्ली बहुत दूर है" और तीसरा था, "कबूल और नाकबूल।" संक्षेपमें सरकार स्वशासनके कुछ अधिकार हमें प्रदान कर स्वराज्य देनेका स्वांग रच रही थी। जो कुछ दिया अुसमें भी विष-बीज वो दिअे गअे। कुछ सुधारोंको हम स्वीकार करते हैं, परन्तु अन्य सुधारोंको हम अस्वीकार कर अुनका निषेध करते हैं। सुधारोंमें क्या और किस प्रकारसे परिवर्तन करना चाहिअे अिसका विवेचन अुन्होंने अपनी दृष्टिके अनुसार किया। अुन्हें "मान्टफोर्ड-सुधार" कुल मिलाकर निराशाजनक तथा अपर्याप्त ही प्रतीत हुअे। फिर भी अुन्होंने कहा कि—"मैं कांग्रेसके निर्णयका पूर्णतया पालन करूँगा। कांग्रेसमें अेकाधिक दल सम्मिलित होनेसे अुसका निर्णय सच्चा होता है, अतः कांग्रेसका निर्णय स्वीकार करनेमें कोअी राष्ट्रीय हानि नहीं। अनेक व्यक्तियों अथवा दलोंकी अपेक्षा कांग्रेसकी प्रतिष्ठा बहुत अधिक माननी चाहिअे।" लोकमान्यके आलोचनात्मक लेख प्रकाशित होते ही बम्बअी-सरकारने अुनके भाषणोंपर कानूनी प्रतिबन्ध लगा दिया। महात्मा गांधीने सरकारी काररवाअीका तत्काल विरोध किया और कहा कि सरकारकी अिस नीतिसे

मेरे रिक्रूटिंग कार्यमें बड़ी बाधा पहुँचती है। सरकारको तिलक परसे प्रतिबन्ध हटाना चाहिअे। सरकारपर कुछ भी असर नहीं पड़ा, परन्तु तिलकको निकट भविष्यमें बम्बअीमें होनेवाले काँग्रेस-अधिवेशनमें भाषण देनेकी अनुमति मिल गअी। सरकार किसी प्रकारसे तिलकको चिढ़ाना चाहती थी, ताकि भावावेशमें आकर वे कुछ कटु बोलें या लिखें, परन्तु तिलकमें सागरोपम शान्ति तथा रुद्रताका स्वर्ण-संगम था। वे अच्छी तरहसे जानते थे कि तेजस्विताका अुपयोग कहाँ और कैसे करना चाहिअे।

बम्बअीमें काँग्रेसका विशेष अधिवेशन

नरमदलवादी संयोगसे अिसी समय काँग्रेससे अलग हुअे थे। अुन्होंने 'लिबरल फेडरेशन'की स्थापना कर अुसके द्वारा "मान्टफोर्ड-योजना" ज्यों-की-त्यों स्वीकार कर ली। अुन्होंने यह भली-भाँति ताड़ लिया कि काँग्रेसका निर्णय लोकमान्य तिलकके अिशारेपर ही होगा, अिसलिअे संघर्ष क्यों मोल लिया जाय? कालकी महिमा विचित्र होती है। जिन नरमदलीय लोगोंने दस वर्ष पूर्व लोकमान्यको काँग्रेससे बाहर निकालनेका षड्यन्त्र रचा था, लोकमान्यके बहुमतसे भयभीत होकर अब अुन्हें ही काँग्रेससे स्वेच्छापूर्वक अलग हो जाना पड़ा। वास्तवमें लोकमान्यने पहले ही यह प्रकट कर दिया था कि वे काँग्रेसका निर्णय ज्यों-का-त्यों स्वीकार करेंगे, परन्तु नरमदलवाले "मान्टेग्यू-सुधार" कार्यान्वित करनेके लिअे अितने आतुर थे कि अुन्हें लोकमान्यका साथ भी असह्य प्रतीत हुआ। काँग्रेसके मुख्य प्रस्तावपर लोकमान्य तिलक, डा० अेनीबेसेन्ट तथा बाबू विपिनचन्द्र पालके भाषण हुअे। काँग्रेसने लखनअूका प्रस्ताव दुहराया और कहा कि भारत स्वराज्यके लिअे योग्य है, अतः अिस दृष्टिसे "मान्टफोर्ड योजना" के सुधार अपर्याप्त, असमाधानकारक तथा निराशापूर्ण हैं। यदि अुन सुधारोंमें अभीष्ट परिवर्तन या संशोधन हो जायें तो काँग्रेस अुनको स्वीकार करेगी और स्वराज्य-प्राप्तिके लिअे अधिक प्रयत्नशील होगी। यह प्रस्ताव सर्व-सम्मतिसे स्वीकृत हुआ। लोकमान्यने तुरन्त भारत-मन्त्री मान्टेग्यू साहबको अपनी मुलाकातके समय अुत्तर दिया था "I shall

accept what will be given but agitate further for more." यही कथन कांग्रेसकी निर्धारित नीति बना। वे सचमुच कांग्रेसके कर्णधार बने। अिसी अधिवेशनमें दूसरे प्रस्ताव द्वारा निश्चित हुआ कि कांग्रेसकी ओरसे अेक प्रतिनिधि-मण्डल लन्दन भेजा जाय। यह प्रतिनिधि-मण्डल, मान्टफोर्ड-सुधारके सम्बन्धमें कांग्रेसके संशोधनोंसे पार्लमेण्ट तथा भारत-मन्त्रीको परिचित करावे। अिस प्रतिनिधि-मण्डलमें लोकमान्य तिलकको सम्मिलित किया गया और अुनकी अिच्छानुसार ही अन्य सदस्य चुने गअे जिसमें लोकमान्यके परम मित्र दादा साहेब खापर्डे, बाबू विपिनचन्द्र पाल, न. चिं. केलकर और श्री विट्ठल भाअी पटेल अित्यादि प्रमुख थे। यह प्रतिनिधि-मण्डल लन्दन गया और अुसने अपेक्षित कार्य किया।

मूक अध्यक्ष

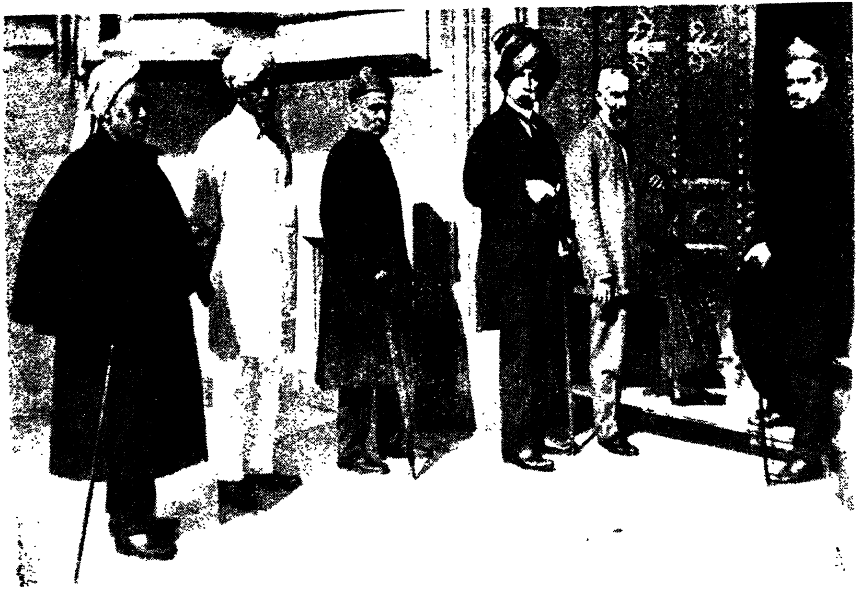
अधिवेशन समाप्त होते ही लोकमान्य पूना लौटे। अुनके साथ बंगालके प्रमुख नेता बाबू विपिनचन्द्र पाल, देशबन्धु चित्तरंजनदास, अमृतबाजार पत्रिकाके तपे सम्पादक बाबू मोतीलाल घोष और मद्रासके नेता चिदम्बरम् पिल्ले आदि भी थे। अिन नेताओंसे तिलकका बड़ा प्रेम था। पूनामें देशबन्धुदास तथा पाल बाबूके भाषण हुअे। अध्यक्ष लोकमान्य तिलक थे, परन्तु कानूनी प्रतिबन्धके कारण भाषण नहीं दे सकते थे और कानून भंग कर अुस समय जेल भी नहीं जाना चाहते थे, क्योंकि अुनके सामने अन्य अधिक महत्वपूर्ण कार्य थे। अतअेव मूक अध्यक्ष बनकर अुन्होंने सरकारको निरुत्तर कर सामयिक कार्यमें हाथ बँटाया। बाबू विपिनचन्द्र पालने भाषणके प्रारम्भमें अुन्हें "दैवीगुण सम्पन्न अध्यक्ष" कहकर प्रणाम किया।

लन्दनकी ओर प्रस्थान

अिसी समय लोकमान्य तिलकने लन्दनकी प्रीवी कौंसिलमें अँग्रेजी लेखक सर वेलंटाअिन चिरोलके विरुद्ध मानहानिका अभियोग चलाया। अुक्त लेखकने अपनी "अनरेस्ट अिन अिन्डिया" नामक पुस्तकमें तिलकको "दी फादर आफ अिन्डियन अनरेस्ट" अर्थात "भारतीय अशान्तिका जनक" कहा

था । वास्तवमें तिलक अिस सम्बोधनपर आपत्ति नहीं कर सकते थे, क्योंकि प्रचलित राज्यशासनके विरुद्ध जनतामें असन्तोष जागृत करना वे अपना धर्म मानते थे । अिस संबोधनका व्यंग्य-भरा अुपयोग कर अुक्त लेखकने अुनका सम्बन्ध सामयिक अत्याचारों तथा क्रान्तिकारियोंसे जोड़कर अुनके विरुद्ध जो असत्य अेवं विषाक्त प्रचार किया, अुसे वे बरदाश्त नहीं कर सके । अभियोगकी तारीख निकट थी । भारत-सरकारने बड़ी अुदारतासे अुनका पासपोर्ट मंजूर किया, परन्तु अुसमें भी अेक टाँग अड़ाअी कि वे अिंग्लैंड जा सकते हैं, बशर्ते कि वहाँ राजनीतिक भाषण न दें । अुन्होंने अिस शर्तका विष भी निगल लिया । अुन्हें विश्वास था कि जैसा पहले दो बार हो चुका है, चन्द दिनोंमें ही भारत सरकार अपनी गलती सुधारेगी और अुन्हें वहाँ अुचित स्वतन्त्रता दी जावेगी । वे अेकाअेक लन्दनके लिअे स्टीमरमें चल पड़े । असंख्य मित्र तथा अनुयायियोंने अुन्हें समारोहके साथ विदाअी देनेकी बात सोची थी, काफी व्यवस्था भी की थी, परन्तु लोकमान्यने अुसे अस्वीकार कर दिया ।

पार्लियामेन्ट हाउुस, लन्दनके समक्ष होमरूल प्रतिनिधि-मण्डल



बाओं ओरसे—श्री विपिनचन्द्र पाल, डा. पी. जी. मेहता, लोकमान्य तिलक, माननीय खापर्डे, माननीय विट्ठलभाओी पटेल और श्री नृसिंह चिन्तामणि केळकर

अठारहवाँ प्रकरण

काँग्रेसके निर्वाचित सभापति और अिंग्लैंडमें स्वराज्यका कार्य

कोऽतिभारः समर्थानां किं दूरं व्यवसायिनाम् ।
को विदेशः सविद्यानां कः परः प्रियवादिनाम् ।।

लोकमान्य तिलक २३ सितम्बरको बम्बअीसे रवाना हुअे । अुस समय जल-प्रवास बड़ा भयावह होता था । अदन पहुँचनेमें अुनके स्टीमरको दस दिन लगे । भारतीय प्रवासी होनेके कारण किनारे पर नहीं अुतर सके । अिसी समय दिसम्बरके अन्तमें दिल्लीमें होनेवाले काँग्रेस-अधिवेशनके आप सर्वसम्मतिसे अध्यक्ष चुने गअे । अुन्हें अिसका समाचार अदनमें मिला, परन्तु न कोअी हर्ष था, न खेद । तिलकके भाग्यमें काँग्रेसके अध्यक्ष-पदपर विराजना नहीं लिखा था । सन् १९०७ में अुनका नागपुरमें होनेवाली काँग्रेसका अध्यक्ष चुना जाना प्रायः निश्चित-सा था, परन्तु नरमदलने छल-नीतिसे बाजी मार ली और अधिवेशन नागपुरके बदले सूरतमें हुआ । पुनः सन् १९१७ में कलकत्ता-अधिवेशनका अध्यक्ष चुना जाना भी लगभग निश्चित-सा था, क्योंकि स्वागत-समिति तथा काँग्रेस-कमेटियोंका यही मत था । परन्तु अुन्होंने स्वयम् अपना नाम वापस लेकर डा. अेनीबेसेन्टका नाम प्रस्तावित किया और वे अध्यक्षा बनीं । वे नाम तथा पद या अधिकारके लिअे लालायित नहीं थे । अधिकार या पदको वे सेवाका साधन मानते थे । अिसलिअे काँग्रेसका सभापति चुना जाना अुनके लिअे विशेष हर्ष या गर्वकी घटना नहीं थी । यदि वे अिस सम्मानके लोभी होते तो दूसरे ही स्टीमर द्वारा अदनसे भारत लौटते और भारतकी राजधानीमें

अपना शाही जुलूस निकलवाकर 'जयजयकार' करवा, फूलोंकी वर्षामें अध्यक्षीय मंचपर विराजमान होनेकी अभिलाषा पूरी करते। किन्तु अुनकी स्थिति अैसे कर्मयोगी तथा स्थितप्रज्ञ की थी, जो कार्यके फल या कार्यसे प्राप्त यश अथवा सम्मानकी अपेक्षा कार्यको ही अधिक महत्व देता है। दूसरी विशेष महत्वकी बात यह थी कि अुनके द्वारा आरम्भ किया गया स्वराज्य-सम्पादन करनेका कार्य अभी अधूरा था। वे स्वराज्य-प्राप्तिके लिअे ही ब्रिटेन जा रहे थे। अतः, कार्य करनेका सात्विक आनन्द त्यागकर अध्यक्ष होनेका राजसी आनन्द अुन्हें आकर्षित न कर सका। फिर वे कांग्रेसके निर्वाचित अध्यक्षके नाते अिंग्लैण्ड जा रहे थे। अतः अुनका पलड़ा भारी था। अुनकी प्रतिनिधि होनेकी योग्यता बहुत बड़ी थी और वे अिससे लाभ अुठाना चाहते थे। वे जितने सिद्धान्तके पक्के थे अुतने ही व्यवहारके भी। लन्दन पहुँचनेमें अुन्हें चालीस दिन लगे। बीचमें जिब्राल्टरके पास धोखेकी आशंका होनेसे स्टीमरके अधिकारी प्रवासी लोगोंको 'लाअिफ बेल्ट' पहनने तथा 'लाअिफ बोट' चलानेकी शिक्षा देने लगे। बूढ़े तिलक नव-युवकोंके जैसे अुत्साहसे यह शिक्षा लेते थे। अुनका अुत्साह अधिकारियोंसे भी देखते बनता था। अुनके लंदन पहुँचते ही महायुद्ध समाप्त हुआ और मित्र राष्ट्रोंकी विजय हुअी। लोकमान्यने तत्काल अपनी तथा कांग्रेसकी ओरसे ब्रिटनके तत्कालीन प्रधान अेवं युद्ध-मन्त्री लायड जार्जको बधाअीका तार भेजा। फ्रान्सके प्रधान-मन्त्री तथा अमेरिकाके अध्यक्ष अुड्रो विलसनका भी तार भेजकर अभिनन्दन किया। चन्द दिनोंमें ही ब्रिटिश सरकारने अुनपर लगी रोक बहुत थोड़े प्रयत्नोंसे हटा ली। अुन्होंने पूनामें जो अपेक्षा की थी वही पूर्ण हुअी। धीरजका फल हमेशा अच्छा ही होता है। अब वे वह राजनीतिक हलचल करनेके लिअे मुक्त थे, जिसे मनमें रखकर बाहर आअे थे।

स्वराज्यका कार्य

मजदूर-दलसे सहानुभूतिपूर्ण सम्बन्ध जोड़ना और अुसे पार्लमेण्टमें "भारतके स्वशासनका विधेयक" अुपस्थित करनेके लिअे तैयार करना

आपका प्रमुख हेतु था । अिस दृष्टिसे आपने पार्लमेण्टरी मजदूर-दलके नेता, रैम्से मेकडोनाल्ड, लंसबरी, बेजवुड बेन और बेनस्कूर आदिसे परिचय प्राप्त किया तथा अुन्हें भारतकी यथार्थ परिस्थिति अेवं आकांक्षाओंकी जानकारी दी और निकट भविष्यमें होनेवाले पार्लमेण्टके चुनावमें मजदूरदलकी सहायता करनेका आश्वासन दिया । मजदूर-दलका मुखपत्र "हैराल्ड" अुनके मतोंका समर्थन करने लगा और अुसमें अुनके वक्तव्य प्रकाशित होने लगे । अुन्होंने जान लिया था कि पार्लमेण्टमें आजका विरोधी पक्ष मजदूर-दल ही भविष्यमें सरकार बनाअेगा, क्योंकि वह प्रगति-प्रिय था । अनुदार-दलकी अपेक्षा भारतके प्रति अुसकी सहानुभूति अधिक थी । अिसलिअे मजदूर-दलसे राजनीतिक-गठबन्धन करना अुनका प्रमुख ध्येय था और कुछ सीमा तक वे अिसमें सफल भी हुअे । श्री न. चिं. केलकरसे "अिन्डियाज केम फार होमरूल" पुस्तिका लिखवाकर अुसकी हजारों प्रतियाँ छपवाओी गअी तथा अुन्हें निःशुल्क ब्रिटेनमें बाँट दियागया ताकि सर्वसामान्य जनता भारत अेवं अुसकी वास्तविक राजनीतिक आकांक्षाओंसे परिचित हो । अिसकी प्रतियाँ सब दलोंके नेताओं तथा कार्यकर्ताओंको भेजी गअीं । अिसके अतिरिक्त हजारों प्रतियाँ अमेरिकामें पंजाबसिंह लाला लाजपतराय तथा डा. हार्डीकरको गअीं । अमेरिकामें अुन्होंने अुनका अपेक्षित अुपयोग किया । तीसरी बात यह थी कि अुन्होंने अपने तथा अन्य साथियोंके भाषणों द्वारा स्वराज्यका प्रचार प्रारम्भ किया । सौभाग्यसे बैरिस्टर बाप्टिस्टा तथा पाल बाबू जैसे प्रभावशाली वक्ता अुनके निकटस्थ साथी थे । तिलक स्वयम् स्काटलैंड गअे और वहाँ ग्लासगो तथा अन्य शहरोंमें प्रचार किया । अेडिन्बरामें अुनका दो-तीन जगह स्वागत तथा भाषण हुआ । ग्लासगोमें ट्रेड यूनियन कांग्रेसकी ओरसे स्वागत किया गया । ट्रेड यूनियन कांग्रेसके हालमें तिलकके प्रवेश करते ही हजारों दर्शक अुनके सम्मानमें खड़े हो गअे । प्रसिद्ध मजदूर नेता और ब्रिटेनके भूतपूर्व प्रधान-मन्त्री श्री रेम्से मेकडोनल्डने अुनके सम्बन्धमें आदरके अुद्गार व्यक्त किअे । अुन्होंने कहा कि भारतवर्षमें सरकारके विरुद्ध जो असन्तोष है और जिसके कारण जनता यातना तथा कष्ट भोगनेके लिअे प्रस्तुत है, अुसकी

प्रत्यक्ष मूर्ति तिलक हैं। तिलकने भी भारतकी आर्थिक दुर्दशाका करुण चित्र खींचा और कहा कि स्वराज्य-प्राप्तिके बिना भारतके मजदूरोंकी बुरी दशा नहीं सुधर सकती। बीचमें अुनके कअी भाषण लन्दन तथा बर्मिंघममें हुअे। अुन्होंने अमेरिकामें प्रचार करनेके लिअे अिसी प्रकारसे विख्यात वक्ता लाला लाजपतरायको प्रोत्साहित किया और अुन्होंने वहाँ बड़ी सफलतासे कार्य किया। चौथा महत्वका कार्य था ब्रिटिश कांँग्रेस कमेटीकी पुनर्व्यवस्था तथा पुनः संगठन। तिलक वहाँ गअे तब अुन्होंने देखा कि यह शाखा अपेक्षित कार्य ठीक ढंगसे नहीं करती। यही नहीं अुसके कार्यकर्ता कांँग्रेसकी निर्धारित नीतिसे मतभेद रखते थे। अिस शाखाके द्वारा जो "अिण्डिया" नामक पत्र प्रकाशित किया जाता था, अुसमें कांँग्रेसकी नीतिकी आलोचना भी की जाती थी। अुन्होंने कार्यालयकी पुनर्व्यवस्था की, "अिण्डिया" पत्रके सम्पादक मि० पोलकको कामसे पृथक् किया और मिस नार्मट्न तथा श्री न. चि. केलकरको संयुक्त-सम्पादक नियुक्त कर पुनः अुसका प्रकाशन चालू किया। अिसके द्वारा कांँग्रेसकी अधिकृत नीतिका प्रभावशाली प्रचार प्रारम्भ हुआ। अिसकी प्रतियाँ अमेरिका जाने लगीं। ब्रिटिश कांँग्रेस कमेटीका भी नव संगठन हुआ और सैकड़ोंकी संख्यामें लोग अुसके सदस्य बने। पत्र-व्यवहारका सिलसिला नियमित किया गया। आफिसकी व्यवस्थामें अुचित सुधार हुअे। अुन्होंने भारतमें संदेश भेजे कि महायुद्ध अभी समाप्त हुआ है, अतः कांँग्रेस तथा स्वराज्य-संघकी ओरसे अधिक-से-अधिक प्रतिनिधि-मण्डल तुरन्त अिंगलैंड आअें। अिस प्रकारके कार्योंमें अुनके तीन-चार मास व्यतीत हुअे। अिसी समयपर वेलन्टाअिन चिरौलके विरुद्ध चलाअे गअे मानहानिके मुकदमेने रंग पकड़ा, अतः तिलकका बहुतेरा समय अुसमें लगने लगा।

चिरोलके विरुद्ध मानहानिका मुकदमा

हम पहले ही लिख चुके हैं कि "लंदन टाअिम्स" के संवाददाता सर वेलन्टाअिन चिरोलने अपनी पुस्तकमें लोकमान्य तिलकको "भारतीय

अशान्तिका जनक" कहकर आपका सम्बन्ध राजनीतिक अत्याचारोंसे जोड़नेका निन्दनीय प्रयास किया था। लोकमान्य तिलकको यह बात खटकी और अुन्होंने लंदनकी अदालतमें मानहानिका मुकदमा दायर किया। लोकमान्यने "लंदन टाअिम्स" के संवाददाता सर वेलन्टाअिन चिरोलके विरुद्ध मानहानिका मुकदमा अिस आशासे चलाया कि ब्रिटेनमें अुन्हें न्याय प्राप्त होगा। वे समझते थे कि यह अुनका व्यक्तिगत तथा निजी मामला है, परन्तु भारत-सरकार अुनका व्यक्तित्व अितना विशाल तथा भयावह मानती थी कि अुसके लिअे अिस मुकदमेमें अुनके व्यक्तिगत प्रश्नका सवाल ही न रहा। अुसने अितनी दिलचस्पी ली कि चिरोलकी सहायताके लिअे अेक विशेष अफसर तमाम सरकारी कागजात लेकर भारतसे विलायत भेजा गया। दूसरी ओर अँगरेजोंने अिसे अपने देशकी प्रतिष्ठाका प्रश्न बना डाला। सर वेलंटाअिन की पैरवी करनेके लिअे आयरलैंडके विख्यात बैरिस्टर सर अेडवर्ड कार्सन आअे जो आयरलैंडके होमरूल-आन्दोलनके कट्टर शत्रु थे और जिनका हृदय साम्राज्यवादी अहंकारसे परिपूर्ण था। सर अेडवर्ड कार्सनने तिलकके विरुद्ध पैरवी करते समय न्यायाधीशसे कहा था कि "यदि अिस मुकदमेमें तिलक जीत गअे तो भारतमें ब्रिटिश सरकारकी बेअिज्जती होगी।" अिस प्रकार अेक होमरूल विरोधी साम्राज्यवादी बैरिस्टर भारतीय होमरूलके जनक तिलकके विरुद्ध कोर्टमें खड़ा हुआ। ब्रिटेनके अनुदारदलने भी सहायता की। अिधर तिलक भी अपनी बातके पक्के थे। अुन्हें आगे रक्खा हुआ कदम पीछे हटाना मंजूर न था। अुन्होंने अपनी औरसे विख्यात बैरिस्टर सर जान सायमनको नियुक्त किया और स्वयं दिनरात कानूनका अध्ययन कर अुनकी सहायता करने लगे। परन्तु लन्दनकी अदालतमें न्यायकी आशा करना अुनके लिअे बालूसे तेल निकालनेके समान हास्यास्पद था। न्यायाधीशने चिरोलको निर्दोष ठहराया और मुकदमेका व्यय तिलकके जिम्मे डाला। तिलककी पूरी हार ही नहीं हुअी, वरन् अुन्हें वह हार लगभग दो लाख रुपयोंकी भारी कीमत देकर खरीदनी पड़ी। क्या सोचा था और क्या हुआ। तिलकके मित्र बहुत दुखी हुअे, परन्तु वे स्वयं धीर गम्भीर थे। अुनकी शान्ति रत्ती भर भी कम नहीं

हुआी। भारतमें अुनकी हारका समाचार फैलते ही सैकड़ों मित्र तथा अनुयायी दुखी हुअे। अुन्होंने सरकारी नीतिका जवाब देनेका निश्चय किया और तत्काल अपने प्रिय नेता तिलकको तार भेजा कि "आप चिन्ता न करें, अपना स्वास्थ्य सम्भालें। हम चन्द दिनोंमें दो लाख रुपये भेज रहे हैं।" यह तार मिलनेपर तिलकको कष्ट हुआ। अुन्होंने तत्काल तारसे अुत्तर दिया कि यह मेरा व्यक्तिगत कार्य था। मैंने निजी जिम्मेदारीपर प्रारम्भ किया था। अुसका प्रायश्चित मुझे भुगतना चाहिअे न कि समाजको। आप चन्दा अिकट्ठा न करें। मैं अेक दो वर्ष राजनीतिसे संन्यास लेकर ग्रंथोंकी रचना करूँगा और यह ऋण चुका दूंगा। आप मेरी प्रकृतिकी चिन्ता न करें। मैं अिससे भी बुरे दिनोंके बीच गुजर चुका हूँ। यदि अुनसे दब जाता तो आज जीवित न होता। अिस तारसे अुनके मित्रों तथा अनुयायियोंका अुत्साह दुगुना हुआ। अिसी समय लन्दन-विश्वविद्यालयके ओरिअेंटल अिस्टीटयूटके संस्कृत अध्यापक आचार्य कान्हेरे शास्त्री तिलकसे मिलने आअे। आपने आत्मीयतासे तिलकसे पूछा कि क्या वे बहुत निराश हुअे हैं। तिलकने तत्काल अुत्तर दिया कि "मेरे कोशमें निराशा शब्द मिलता ही नहीं। मैं जय तथा पराजयकी परवाह नहीं करता। मेरा धर्म कार्य करना है।" शास्त्रीजी यह अुत्तर सुनते ही अवाक हो गअे। सम्राट् नेपोलियनके शब्द-कोशमें 'अशक्य' शब्द न था, अुसी तरह तिलकके कोशमें भी 'निराशा' शब्द न था। सर वेलंटाअिन चिरोलने ही अपने 'अिन्डिया' नामक ग्रंथमें, जो सन् १९२५ में प्रकाशित हुआ, लोकमान्यके बारेमें प्रशंसाके अुद्गार व्यक्त किअे। अुन्होंने लिखा कि "भारतवर्षमें बीसवीं शताब्दीमें लोकमान्य तिलक जैसा लोकोत्तर पुरुष अन्य नहीं हुआ। कदाचित महात्मा गांधी ही अुनकी बराबरी कर सकते हैं। तिलक गांधीजी जैसे नम्र तथा सौम्य नहीं थे, परन्तु वे अधिक बुद्धिमान तथा गम्भीर राजनीतिज्ञ थे। अपने धर्मपर अुनकी अटल श्रद्धा थी। वे जन्मसिद्ध नेता थे। वे अँगरेजी भाषामें अच्छी तरह भाषण दे सकते और लिख सकते थे। अुन्होंने यूरोपीय राजनीतिक आन्दोलनोंका गहरा अध्ययन कर अुसका मर्म ग्रहण किया था। सच तो यह है कि अुन्होंने

आयर्लैण्डके 'लैण्ड लीग' आन्दोलनका भरसक अनुकरण कर सन् १८९६ में महाराष्ट्रके अकाल-पीडितोंका अनूठा अुपकार किया। अुन्हें देश-सेवाके लिअे कठोर प्रायश्चित भी भुगतना पड़ा। वे अपने प्रान्तमें जितने प्रिय थे अुतने ही अन्य प्रान्तोंमें भी। जब वे डा. अेनीबेसेंटके साथ लखनअू कांग्रेसके मंचपर विराजे तब दर्शकोंने सिर झुकाकर अवतारी पुरुषके समान अुनका स्वागत किया।

भारतीय जनता अपने नेताकी निस्वार्थ तथा निरपेक्ष नीतिसे भली-भाँति परिचित थी। वह तिलकसे अुपर्युक्त आशयके अुत्तरकी ही अपेक्षा करती थी, परन्तु वह अुदात्त हेतुसे अुत्तेजित थी। अुसने तथा नेताओंने तार द्वारा तुरन्त लोकमान्यको अपने हेतुका स्पष्टीकरण भेजा। अुनका तार अिस आशयका था, "पूज्य लोकमान्यके चरणोंमें, आपका अपेक्षित अुत्तर मिला। आपसे हमारा अिस विषयमें प्रामाणिक मतभेद है। हम अिसे आपका व्यक्तिगत मामला नहीं समझते। भारत-सरकार तथा ब्रिटिश सरकारने अिसे राष्ट्रीय स्वरूप दिया और भारतीयोंकी राष्ट्रीय भावनाको चुनौती भी दी। हम सरकारकी चुनौतीको स्वीकर कर अपना राष्ट्रीय कर्तव्य निबाहना चाहते हैं। कृपया चिन्ताग्रस्त न हों।" निस्वार्थताकी मूर्ति तिलकका अिससे भी समाधान नहीं हुआ। वे मित्रोंको चन्दा अेकत्र न करनेकी सलाह देते रहे, परन्तु मित्रोंने अुनकी सलाह न मानी और तीन महीनेमें ढाअी लाखका "तिलक पर्स फंड" अिकट्‌ठा किया। तिलकके परम मित्र दादा साहब खापर्डेने, जिन्हें वे बड़ा भाअी कहते थे, अुनपर प्रेमका दबाव डाला और लन्दनकी अदालतमें चिरोलके मुकदमेका व्यय अदा किया गया। अिस प्रकार तिलक अिस संकटसे मुक्त होकर राजनीतिक कार्यमें जुट गअे।

भारत-मंत्रीसे सुधार सम्बन्धी चर्चा

भारतसे प्रतिनिधि-मण्डल आनेमें कुछ विलम्ब हुआ। मांटफोर्ड सुधारमें किन संशोधनोंकी आवश्यकता है, अुसके सम्बन्धमें लोकमान्यने अपने

भाषणों द्वारा वहाँके राजनीतिक नेताओंको परिचित कराया। लन्दनमें तीन-चार सभाअें हुअीं। अेक सभामें श्री भूपेन्द्रने, जो कि नरमदलके नेता थे, मांटफोर्ड-सुधारकी बड़ी प्रशंसा की और भारत-मंत्रीको धन्यवाद देते हुअे कहा कि भारतवासी अुसे बिना हिचकिचाहटसे कार्यान्वित करेंगे। संयोगसे लोकमान्य वहाँ अुपस्थित थे। अुन्होंने अुपवक्ताके नाते दूसरा भाषण देकर मांटफोर्ड-सुधारोंको अपर्याप्त बतलाया तथा दिल्ली-कांग्रेस द्वारा स्वीकृत संशोधनोंका तर्क-युक्त विवेचन किया। अुनका भाषण अितना प्रभावशाली हुआ कि अुसी सभामें मजदूर दलके नेताओंने, जिनमें सर्वश्री लॅन्सबरी, बेजवुड बेन, अुदर फोर्ड अित्यादि थे, अुनका समर्थन किया और कांग्रेस द्वारा अुपस्थित किअे गअे संशोधनोंको महत्व दिया। अिस प्रकार वे वहाँ भारतके अनुकूल वातावरण निर्माण करनेमें व्यस्त थे। यथासमय भारतसे चार-पाँच प्रतिनिधि-मण्डल लन्दन पहुँचे। तिलकने काँग्रेस तथा स्वराज्य-संघके प्रतिनिधि-मण्डलोंका नेतृत्व किया क्योंकि दोनोंके ध्येयकी समानता थी। अिसी बीच भारत-मन्त्री मान्टेग्यूने दो बार अुनसे व्यक्तिगत चर्चा की। अिन चर्चाओंमें अुन्होंने संभाव्य संशोधनोंकी छानबीन की। तिलक बालकी खाल निकालनेमें निपुण थे। अुन्होंने भारत-मन्त्रीको स्पष्ट बता दिया कि काँग्रेस द्वारा अुपस्थित किअे गअे संशोधनोंको सुधारोंमें सम्मिलित किअे बिना भारतवासियोंका सुधारोंसे समाधान नहीं होगा। भारत-मन्त्रीने कांग्रेस द्वारा अुपस्थित किअे गअे लीग-मेलका साम्प्रदायिक प्रतिनिधित्व, अुसका विभिन्न प्रान्तोंमें प्रतिशत प्रमाण तथा कहीं-कहीं सन्तुलनके लिअे कुछ अधिक प्रतिनिधित्व देनेके सिद्धान्त स्वीकारकर अुन्हें सुधारोंमें सम्मिलित किया और संशोधनोंपर सद्भावसे विचार करनेका आश्वासन दिया। अुसी समय वहाँ ज्वाअिन्ट पार्लमेन्टरी सब कमेटीकी कारवाअी प्रारम्भ हुअी। लोकमान्य तिलकको अुसके सम्मुख अपना बयान तथा सुझाव देने पड़े। अुन्होंने कांग्रेस द्वारा समर्थित सुझावोंपर ही जोर दिया। बीचमें अुनके पैरमें दर्द पैदा हुआ, जिसके कारण अुनसे चलते नहीं बनता था। अुन्हें कमरेसे मोटर तक सहायक नामजोशीके कन्धों

पर हाथ रखकर जाना पड़ता था, फिर भी अुन्होंने कार्यमें रुकावट नहीं आने दी। अैसी हालतमें ही वे "ब्रिटेन अेन्ड अिन्डिया सोसायटी" में भाषण देने गअे। सभामें अतीव भीड़ थी, जिसमें दो तिहाअी अँगरेज श्रोता थे। यह भाषण अुन्होंने सर विलियम ड्यूकके भाषणके अुत्तरमें दिया। श्रोतागण अुसे सुननेके लिअे अुत्सुक थे। तिलकने निर्विकार चित्त तथा गम्भीरतासे ड्यूक साहबके भाषणकी तर्क-पटु आलोचना की। अुनका यह भाषण अितना प्रभावशाली तथा अुत्कृष्ट हुआ कि मिसेस सिम्सन नामक विदुषीने अुनको अेक अभिनन्दन-पत्र भेजा। अुसने लिखा कि 'आपका कलका भाषण अतीव अुत्कृष्ट था। अन्य वक्ता जिस शिष्टताकी मर्यादाका पालन नहीं करते, आप अुसका पालन करते हैं। मुझे यह जानकर बड़ी प्रसन्नता हुअी कि आप आन्दोलनोंमें व्यक्तिगत मत्सर द्वेष तथा घृणाको अवसर नहीं देते। आप अिनके परे हैं। आपकी निर्विकार राष्ट्रीयताका मुझपर बड़ा असर पड़ा। वास्तवमें देश-सेवाके लिअे आपको काफी अुग्र तथा भयावह दण्ड भुगतना पड़ा, परन्तु अुसके प्रतिशोधमें थोड़ी भी विषाक्त भावना आपके हृदयमें स्थान नहीं रखती थी। यह आपकी महानता तथा दूरदर्शिताका द्योतक है।" लोकमान्यकी वाग्मितासे अनेक अँगरेज विद्वान् प्रभावित हुअे। मिसेस सिम्सनने स्वयं वैदिक वाङ्मयका गहन अभ्यास किया था, परन्तु तिलकको वह अपना "वैदिक गुरु" मानने लगीं। अिधर 'पार्लियामेण्टरी सिलेक्ट कमेटी' की कारवाअी शुरू हुअी। तिलकने अुसके अनेकानेक प्रश्नोंके मार्मिक अुत्तर दिअे। दिन-रात राजनीतिक सुधारोंके बारेमें अुहापोह चलता था। लोकमान्य अुन सभाओंके केन्द्र-पुरुष जैसे प्रतीत होते थे।

वास्तवमें अुनका बहुतेरा समय राजनीतिक अुत्सवोंमें व्यतीत होता था; परन्तु अवसर मिलते ही वे ब्रिटिश म्यूजियमकी लाअिब्रेरी तथा अिण्डिया हाअुसके ग्रन्थालयमें भी जाते और वैदिक तथा खाल्डियन संस्कृतियोंके सम्बन्धमें खोज करते थे। समय-समयपर वहांके जियोलाजिस्ट "भूगर्भ शास्त्रज्ञों" के साथ पश्चिमी संस्कृतियोंके सम्बन्धमें चर्चा भी करते थे। अुन्होंने "रायल अेशियाटिक सोसायटी" में हुअी प्राच्य-विद्या परिषदमें भी

भाग लिया था। लोकमान्यके प्रति अिन पश्चिमी विद्वानोंका आदरभाव सन् १८९६ से था जब अुनका पहला ग्रन्थ "ओरायन" अर्थात् "वेदकाल निर्णय" प्रकाशित हुआ।

आक्सफोर्ड तथा केंब्रिज विश्वविद्यालयमें

अवसर प्राप्त होते ही लोकमान्य आक्सफोर्ड तथा केंब्रिज विश्व-विद्यालयोंमें गअे। अुन्होंने वहांके प्राच्य-विद्या विभागोंका सूक्ष्मतासे निरीक्षण किया तथा विभागोंके अध्यक्षोंके साथ अुपयुक्त चर्चा की। दोनों विश्वविद्यालयोंमें भारतीय तथा अन्य विद्यार्थियोंने आपका हार्दिक स्वागत किया। विद्यार्थियोंके भावी जीवनपर आपके भाषण हुअे। आपने कहा—"ध्येयकी रुक्ष चर्चा करनेमें समयका अपव्यय करनेकी अपेक्षा युवकोंको कुछ-न-कुछ ध्येय निश्चित कर अुसके लिअे सर्वस्व बलिदान करनेको सन्नद्ध होना चाहिअे। आप किसी भी प्रकारकी देश-सेवाका निश्चय कर यहांसे बाहर प्रस्थान करें। आप जैसे शिक्षित तथा सभ्य युवकोंसे ठोस देश-सेवाकी आशा की जाती है।"

पंजाबके अत्याचार

पंजाबके हत्याकाण्डके विषयमें कांग्रेसकी तरफसे जो जांच-कमेटी बैठी, अुसने अपनी रिपोर्टमें लिखा कि पंजाबमें १२०० आदमी मरे, और ३६०० घायल हुअे। जब यह समाचार विलायत पहुँचा तो लोकमान्य तिलकने वहांपर जगह-जगह सभाअें कर घोर आन्दोलन प्रारम्भ किया। ता. २० अक्टूबर सन् १९१९ को लंदनके केक्स्टन हालमें डा. जी. वी. क्लार्ककी अध्यक्षतामें पंजाबके अत्याचारोंका प्रतिवाद करनेके लिअे भारी सभा हुअी, अुसमें लोकमान्यने कहा—"क्योंकि मार्शल ला जारी किया गया था, अिसलिअे वहां पर जरूर गदर हुआ होगा। ला. हरकिशनलाल सरीखे लोगोंने भी मार्शल ला की घोषणाके पहले सत्याग्रह-आन्दोलनका समर्थन किया था, अिसीलिअे अुन लोगोंपर भी बागियोंकी तरह मुकदमा चलाया गया।

अिस हत्या-काण्डको दो मास पूर्व ही सर ओडायरने पंजाब-प्रदेशको संतोषी और शान्तिप्रिय बतलाया था। अधिकारियोंको माफी मिलनेका कारण यदि यह बताया जाता है कि अुन्होंने नेकनियतीसे काम किया तो मैं कहता हूँ कि लोगोंने भी नेकनियतीसे काम किया था और अिसीलिअे अुन्हें भी छोड़ देना चाहिअे। यदि हिन्दुस्तानियोंपर केस चलाया गया है तो वाअिसरायपर भी लंदनकी अदालतमें खुली तौरसे मामला चलाया जाना चाहिअे। मैं कहता हूँ कि सर ओडायर पर तो यहाँकी अदालतमें अवश्य ही मामला चलाया जाय। भारत सरकारने खुद ही कह दिया है कि भारतमें गदर था तो अुसके द्वारा नियुक्त की गअी जाँच-कमेटी तो अुसीकी बातकी पुष्टि करेगी। भारतके लोगोंने तो केवल अुपवास किया तथा अपनी दूकानें बन्द रक्खीं। अगर अंगरेज अपने कर्तव्यको भूल जाअेंगे तो भारी खलबली मचेगी। हम साम्राज्यके भीतर रहकर ही स्वतन्त्रता चाहते हैं। यदि कोअी स्वेच्छाचारिणी सरकार वैध कार्योंको ही गदर समझती है तो जो सहायता युद्धमें दी गअी वह सब व्यर्थ हुअी। भारतवर्ष अपनी स्वतन्त्रताके लिअे लड़ने और मार्गमें होनेवाले कष्टोंको सहनेके लिअे तैयार है।"

शान्ति-परिषदका मार्मिक आवेदन-पत्र

सन् १९१८ की दिल्ली-कांग्रेसने अपनी ओरसे लोकमान्य तिलक तथा महात्मा गांधीको विश्वशान्ति-परिषदके लिअे प्रतिनिधि चुना। अिस समय सन्धि सम्पन्न होकर जेनेवामें शान्ति-परिषद् प्रारम्भ हुअी थी। भारतमें अेकाअेक विषम राजनीतिक परिस्थिति अुत्पन्न होनेसे, अर्थात् रोलट अेक्टके स्वीकृत होनेसे, महात्मा गांधी सत्याग्रह-आन्दोलनके संचालनमें संलग्न थे। अतः, अुनके पहुँचनेकी सँभावना न थी। लोकमान्य लंदनमें थे अिसलिअे आसानीसे पहुँच सकते थे और वास्तवमें वे अुसके लिअे अुत्सुक भी थे। परन्तु दोनों सरकारोंने टाँग अड़ाअी और अुन्हें यूरोपमें प्रवेश करनेका पासपोर्ट नहीं दिया। लोकमान्यने यह पहले ही ताड़ लिया था। वे शान्त रहे। अुन्होंने चतुराअीसे काम लेनेका निश्चय किया। बड़ी गुप्त रीतिसे शान्ति-परिषदके

सभापति जार्ज क्लेमेंकोके पास निम्न आशयका आवेदन-पत्र भेजा, जिसकी प्रतियाँ अमेरिकाके अध्यक्ष अुड्रो विल्सन और अन्य लब्धप्रतिष्ठ सदस्योंको भी भेजी गअी, जिसका सारांश यह था––

१. पेरिस सन्धि-परिषदमें बने नियम नं. ११ तथा दिल्ली-कांग्रेसके प्रस्तावके अनुसार मैं आपके सद्भावपूर्ण निर्णयके लिअे यह पत्र भेज रहा हूँ। मैं स्वयं वहाँ अुपस्थित होना चाहता था, परन्तु ब्रिटिश सरकारने मुझपर निषेध लगा रखा है।

२. जर्मनीके भयानक आक्रमणसे संसारकी मुक्ति कर अिस महायुद्धने "नअे युग" का अुद्घाटन किया है। अब किसी भी सभ्य देशपर अुसकी अिच्छाके विरुद्ध दूसरे देशका राज्य नहीं चलना चाहिअे। किसी भी देशपर अुपकारके बहानेसे बलात् शासन करना अन्तर्राष्ट्रीय विधानके विरुद्ध माना जाना चाहिअे। आत्मनिर्णयका सिद्धान्त लागू कर भारतको आपसी अुलझनें सुलझानेका अवसर दिया जाना चाहिअे। किसी भी अन्य राष्ट्रके समान स्वराज्य भारतका भी जन्मसिद्ध अधिकार है। यह अधिकार प्राप्त हुअे बिना सुदूर पूर्वमें शान्ति स्थापित होना असंभव है। यदि भारतको स्वराज्य दिया गया तो वह शान्तिका आधार-स्तम्भ बनेगा। विश्वशान्तिकी स्थापनाकी दृष्टिसे आस्ट्रेलिया, कनाड़ा और दक्षिणी अफ्रीकाके समान भारतको साम्राज्यान्तर्गत स्वराज्य दिलवाना राष्ट्र-संघका आदिका कर्तव्य है। मैं आशा करता हूँ कि राष्ट्रसंघ तथा आप जैसे विश्वशान्तिके समर्थक व्यक्ति भारतके सम्बन्धमें अनुकूल निर्णय करेंगे।" अिस प्रकार तिलकने शान्ति-परिषद तथा राष्ट्रसंघमें भारतके स्वराज्यका प्रश्न अुपस्थित कर अुसे अन्तर्राष्ट्रीय राजनीतिमें सम्मानपूर्ण स्थान दिलाया।

मातृभूमिकी ओर

अब लोकमान्यका लन्दनमें रहना अनावश्यक प्रतीत होने लगा, क्योंकि पार्लमेन्टने मॉंटफोर्ड सुधारोंमें कुछ संशोधन स्वीकार कर अुनको अेक्टका स्वरूप प्रदान कर दिया था। अिधर भारतमें रोलट कानून स्वीकृत

हुआ और जनताने अुसका तीव्र विरोध किया। महात्मा गांधीने अुसके विरुद्ध सत्याग्रहका सक्रिय आन्दोलन चलाया। अमृतसरके जलियानवाला बागमें घृणित हत्याकांड हुआ। आसेतु हिमाचल राष्ट्रीय जागृति पैदा हुआी। सरकारी दमननीतिने भयावह तांडव-नृत्य किया। सन् १९१९ के अप्रैलमें सारा देश भयानक परिस्थितियोंके बीचसे गुजर रहा था। यह सब समाचार सुनकर लोकमान्यका हृदय व्याकुल अेवं चिन्ताग्रस्त था। अुन्हें भारत भूमिका-वियोग असह्य जान पड़ता था। अतअेव वे बिछुड़े हुअे बालककी भाँति भारत-माताके दर्शन करनेके लिअे लौट पड़े।

अुन्नीसवाँ प्रकरण

कर्मयोगीका स्वर्गवास

स जीवति यशो यस्य कीर्तिर्यस्य स जीवति
अयशोकीर्तिसंयुक्तो जीवन्नपि मृतोपमः

लोकमान्य तिलक ता. २७ नवम्बरको बम्बअीमें भारतभूमिके तटपर अुतरे। अुनके स्वागतके लिअे हजारोंकी संख्यामें लोग बन्दरगाहपर अुपस्थित थे। बम्बअी प्रान्तीय कांग्रेस कमेटी तथा स्वराज्य-संघके सैकड़ों हिन्दू मुसलमान स्वयंसेवकोंने अुनका आदरपूर्वक अभिवादन किया। सागर जैसी भीड़ अुमड़ पड़ी। स्वयंसेवकोंको लोकमान्यकी रक्षा करना कठिन हो गया। शामको बैरिस्टर बाप्टिस्टाकी अध्यक्षतामें विराट् सभा हुअी जिसमें कन्नड़ सिंह गंगाधरराव देशपांडेने जनताकी ओरसे लोकमान्यको अभिनन्दन-पत्र अर्पित किया। अन्तमें लोकमान्यने कहा—"मैं आप सबके प्रति हार्दिक आभार प्रकट करता हूँ। मैंने अिंग्लैण्डमें यथाशक्ति जो देशसेवा करनेकी चेष्टा की, वह मेरा कर्तव्य था। गत अप्रैल मासमें भारतमें जो अभूतपूर्व राजनीतिक आन्दोलन हुआ अुसके समाचार मैं अति व्याकुलता तथा जिज्ञासासे पढ़ता रहा। मुझे दुख है कि महात्मा गांधीने रोलट अेक्टके विरुद्ध जो सत्याग्रह आन्दोलन छेड़ा अुसमें योग देनेके लिअे मैं यहाँ नहीं था। मांटफोर्ड सुधार असंतोषजनक और अपर्याप्त हैं, परन्तु हमें निराश होनेकी आवश्यकता नहीं, क्योंकि पार्लमेन्टरी मजदूर-दलने भारतके होमरूल (स्वशासन) विधेयकको पार्लमिन्टमें प्रस्तुत करनेका मुझे आश्वासन दिया है। हमें जितना लाभ अिन सुधारोंसे अुठाना है, अुतना लाभ अुठाकर हम अधिक अधिकार प्राप्त करनेके लिअे लड़ेंगे।" दूसरे तथा तीसरे दिन अनेक सार्वजनिक संस्थाओंकी ओरसे अुनका स्वागत किया गया। वहाँ भी अुन्होंने कांग्रेसकी शक्ति बढ़ानेका अुपदेश दिया। फिर पूनाके लिअे चल पड़े।

पूनामें म्युनिसिपल कमेटीका अभिनन्दन-पत्र

पूनामें आपका अभूतपूर्व स्वागत हुआ। म्युनिसिपल कमेटीने आपको अभिनन्दन-पत्र अर्पित किया। भारतवर्षमें यह पहली घटना थी जब सरकारकी दृष्टिमें राजद्रोही तिलक जैसे सच्चे देशभक्तको सरकार-मान्य तथा सरकार-पोषित म्युनिसिपल कमेटीने यथाविधि अभिनन्दन-पत्र अर्पण कर अुनका सम्मान किया। अुस समयतक गवर्नर या अूंचे सरकारी अधिकारियोंको ही अभिनन्दन-पत्र देनेकी प्रथा प्रचलित थी। अिस घटनासे सरकारी क्षेत्रमें सनसनी फैली। सरकारने म्युनिसिपल कमेटीके अिस कार्यपर आक्षेप किया और खर्च नामंजूर करनेकी सूचना दी। म्युनिसिपल सदस्योंने धैर्यसे अुत्तर दिया कि लब्धप्रतिष्ठ नागरिकका स्वागत करने तथा अुसे अभिनन्दन-पत्र भेंट करनेका हमें अधिकार है, क्योंकि हम जनताके प्रतिनिधि हैं, परन्तु अिस अभिनन्दन-पत्रका खर्च हमने व्यक्तिगत रूपसे किया है न कि म्युनिसिपलीटीके खजानेसे। परिणामस्वरूप म्यूनिसपल कानूनमें अुचित संशोधन किया गया।

मद्रासमें अभिनन्दन-पत्रोंकी वर्षा

लोकमान्य वृद्ध तथा क्षीण हो चुके थे। अुन्हें विश्रामकी आवश्यकता थी, परन्तु जनताके प्रति अुनका जो प्रेम था वह विश्राम नहीं लेने देता था। मद्रासके मित्रोंके आग्रहपर वे वहाँ गअे। स्टेशनपर सभी दलोंके कार्यकर्ताओं तथा मजदूर-संघके प्रतिनिधियों द्वारा अुनका स्वागत किया गया और जुलूस निकालकर विराट् सभाओंमें अुन्हें कअी संस्थाओंकी ओरसे सम्मानपूर्वक अभिनन्दन-पत्र भेंट किअे गअे। मद्रास सूबेकी अब्राह्मण सभाने भी अुनका अभिनन्दन किया, और भारतके भिन्न-भिन्न दलोंमें मेलकी आवश्यकताका अुल्लेख कर अुस कार्यके लिअे अुन्हें अीश्वरसे आरोग्य तथा दीर्घायु प्रदान करनेकी प्रार्थना की। विद्यार्थियोंकी अेक सभामें भी अुन्हें भाषण देनेके लिअे बुलाया गया।

अमृतसर कांग्रेसमें

लोकमान्य तिलक सदलबल ता. २४ दिसम्बरको होमरूल स्पेशल ट्रेन द्वारा अमृतसर जानेके लिअे पूनासे रवाना हुअे। वास्तवमें अुनके पंजाब प्रवेशपर सरकारी प्रतिबन्ध था और अुनका स्वास्थ्य भी गिरा हुआ था, जिससे डाक्टरोंने विश्रामकी सलाह दी थी, परन्तु अुनका हृदय अुन्हें अमृतसरकी ओर खींच रहा था मानों वह सूचित कर रहा हो कि यह तेरे लिअे कांग्रेसका अन्तिम अधिवेशन है। अमृतसरकी स्वागत-समितिकी ओरसे अुन्हें आग्रहपूर्ण निमन्त्रण भी आया। अधिवेशनकी विशेषता यह थी कि जिस जलियानवाला बागमें गत ६ अप्रैलको अँगरेज सरकारने निहत्थी जनतापर गोलियाँ चलाअी थीं, जिसमें लगभग १५०० भारतीयोंकी आहुति पड़ी, अुसी स्थानपर कांग्रेस-अधिवेशनमें अुस दमननीतिकी घोर भर्त्सना कर स्वराज्य-प्राप्तिका निश्चय किया जानेवाला था। यह भारतीयोंके जीवित होनेकी कसौटी थी। अिस अैतिहासिक महत्वने लोक-मान्यको बेचैन किया और अुन्होंने मित्रों तथा डाक्टरोंसे कहा कि अमृतसरसे लौटनेके पश्चात् मैं विश्राम करूँगा। अुन्होंने कांग्रेस-अधिवेशनमें सम्मिलित होनेकी सूचना पंजाब-सरकारको तार द्वारा दी। अुनकी होमरूल स्पेशल ट्रेन बी. बी. अेन्ड. सी. आय. के जिस मार्गसे गुजरती थी वहीं प्रत्येक बड़े स्टेशनपर अुनका स्वागत होता था। दिल्ली स्टेशनपर अुन्हें पंजाब-प्रवेशका प्रतिबन्ध हटानेकी सूचना दी गअी। बीचमें सम्राट् पंचम जार्जकी ओरसे अेक सूचना-पत्र भी प्रकाशित किया गया जिसमें भारतीयोंको मांटफोर्ड-सुधारोंको कार्यान्वित करनेमें सहायता देनेका आह्वान और पंजाब तथा भारत-वर्षके अन्य प्रान्तोंके सभी राजनीतिक कैदियोंको तत्काल मुक्त करनेका आदेश था। ट्रेनमें लोकमान्यने ज्यों ही यह समाचार पढ़ा त्योंही सम्राट्को बधाअीका तार भेजा और सुधारोंके कार्यान्वित करनेमें प्रतियोगी सहकारिताका आश्वासन दिया। अिसके पश्चात् यही प्रतियोगी सहकारिता लोकमान्यकी राजनीति बनी। जनताने अमृतसरके स्टेशन पर आपका भव्य तथा

हार्दिक स्वागत किया। स्वामी श्रद्धानन्द अिस अधिवेशनके स्वागताध्यक्ष थे और पण्डित मोतीलाल नेहरू सभापति। प्रतिनिधियों तथा प्रेक्षकोंकी अुपस्थिति अपूर्व थी। स्वामी श्रद्धानन्दने अपने स्वागत-भाषणमें नेताओंमें दो प्रबल पक्ष होनेका अुल्लेख कर मेल करनेकी प्रार्थना की। पण्डित मोतीलाल नेहरूके अध्यक्षीय-भाषणसे भी दो पक्ष स्पष्ट हुअे। मांटफोर्ड-सुधार सम्बन्धी प्रस्तावपर विषय-निर्वाचनी समितिमें तीव्र मतभेद व्यक्त किअे गअे। अेक पक्षमें कांग्रेसके सभापति स्वयम् पं० मोतीलाल नेहरू, महात्मा गांधी तथा महामना पं० मदनमोहन मालवीय अेवं डा. अेनीबेसेन्ट थीं तो दूसरे पक्षमें लोकमान्य तिलक, देशबन्धु चित्तरंजनदास तथा श्री विपिनचन्द्र पाल थे। पहले पक्षका कहना था कि माण्टफोर्ड-सुधारोंको "असमाधानकारी तथा अपर्याप्त" आदि आलोचनात्मक विशेषणोंसे संबोधित न किया जाय। दूसरे पक्षकी राय थी कि चूंकि बम्बअी तथा दिल्ली-अधिवेशनोंमें अिन विशेषणोंका प्रयोग सोच-विचार कर किया गया था और वे बहुमतसे मान्य भी किअे गअे थे, अतः अब अुनके हटानेकी कोअी आवश्यकता नहीं। संक्षेपमें लोकमान्य तिलक तथा देशबन्धु बम्बअी तथा दिल्ली-अधिवेशनोंके प्रस्तावमें परिवर्तन करनेके विरोधी थे। दूसरी ओर दिल्ली-अधिवेशनके सभापति स्वयं महामना मालवीय तथा कलकत्ता-अधिवेशनकी अध्यक्षा डा. अेनीबेसेन्ट तथा महात्मा गांधी पं. मोतीलाल नेहरूकी सहायतासे परिवर्तन कराना चाहते थे। अिसके अतिरिक्त डा. अेनीबेसेन्ट सुधार प्रदान करनेके निमित्त भारत-मन्त्री मांटेग्यूका अभिनन्दन भी करना चाहती थीं जिसके देशबन्धुदास तीव्र विरोधी थे। विषय-निर्वाचनी समितिमें दोनों ओरसे प्रभावशाली भाषण हुअे। देश-बन्धुदासके विरुद्ध डा. अेनीबेसेन्ट और महामना मालवीय जैसे आचार्य लड़ रहे थे, परन्तु देशबन्धुके सारथी थे कर्मयोगी लोकमान्य तिलक, जैसे योगेश्वर कृष्णके बिना सव्यसाची अर्जुनकी जीत सम्भव नहीं थी वैसे ही कर्मयोगी तिलककी सहायता तथा पथप्रदर्शनके बिना अमृतसरमें देशबन्धुकी जीत असम्भव थी। तीसरे दिन लोकमान्यने अतीव तर्क-पटु प्रभावशाली भाषण द्वारा देशबन्धुके प्रस्तावका समर्थन किया। आपने "असन्तोषः श्रीयोमूलम्"

तत्वका रोचक विवेचन कर "असमाधानकारी तथा अपर्याप्त" विशेषणोंकी अुत्तेजक स्पष्ट व्याख्याकी और प्रतिनिधियोंसे निवेदन किया कि वे कांग्रेसकी निर्धारित नीतिमें परिवर्तन करनेकी चेष्टा न करें। हम अिन सुधारोंको असमाधानकारी तथा अपर्याप्त कहकर भी अिन्हें अधिक अधिकार प्राप्त करनेकी दूरदर्शितासे कार्यान्वित कर सकते हैं।"

अुन्होंने कहा कि "सुधारोंकी स्वीकृति द्वारा अंगरेजोंकी कृपा सम्पादन करनेकी अपेक्षा देशका अुपकार करनेकी भावनाको हम बहुत अधिक महत्व देते हैं। जितना बने अुतना देशका लाभ करना और आगे बढ़ना हमारा ध्येय है। हमारे तथाकथित विरोधी भी अिन सुधारोंको कार्यान्वित ही करना चाहते हैं। दोनोंका अुद्देश्य अेक है। अुसे प्रकट करनेके शब्द मात्र भिन्न हैं। वास्तवमें वे भी अिनको पर्याप्त नहीं मानते। जो वस्तु पर्याप्त नहीं, वह समाधानकारी कैसे हो सकती है? अिस प्रकार अिन विशेषणोंके लिअे वाद-विवाद करना व्यर्थ है।" लोकमान्यके अिस भाषणसे देशबन्धुका पलड़ा भारी हुआ। वे संघर्ष कर बहुमतके बलपर बाजी मारना चाहते थे। अिधर लोकमान्य अुदारता तथा सामंजस्यसे सफलता पानेके लिअे प्रयत्नशील थे। आपका झुकाव मेलकी ओर अधिक था और वही समयकी माँग भी थी। अुन्होंने महात्माजीसे विचार-विमर्श कर मेलका प्रस्ताव बनवाया। अिधर वृद्ध तथा थके-माँदे तिलकने युवक देशबन्धुको समझाया अुधर महात्मा गांधीने अति वृद्धा डा० अेनीबेसेन्टको। जीतनेका विश्वास रखनेवाले युवकोंको समझाना बहुत कठिन था; परन्तु कठिन कार्य करनेमें लोकमान्य निपुण ही नहीं सिद्धहस्त थे। मेलका प्रस्ताव सर्व-सम्मतिसे विषय-निर्वाचनी समितिमें स्वीकृत हुआ, जिससे काँग्रेसकी पुरानी नीति ज्यों-की-त्यों बनी रही। अिस अधिवेशनमें अेक अनूठा दृश्य भी दिखाअी दिया। काँग्रेसके आकाशमें अेक साथ दो सूर्य चमक रहे थे। अेक पूर्वकी ओर अुदयाचलसे तेजीसे अूपर अुठ रहा था तो दूसरा पश्चिममें अस्ताचलकी ओर झुक रहा था। दूसरे सूर्यको दर्शक आदर तथा सम्मानसे अर्घ्य प्रदान कर रहे थे, तो प्रथमको वे आशा तथा अुत्साहसे वन्दना कर रहे थे।

अिसी अधिवेशनमें महात्मा गांधीजीने अपने भावी "असहयोग" का शाब्दिक परिचय कराया था। लोकमान्यने विदेशोंमें भारतके स्वराज्यका प्रचार कर सहानुभूति प्राप्त करनेकी आवश्यकताका प्रतिपादन किया और कांग्रेसने अुनके कथनके अनुसार अिस सम्बन्धमें प्रस्ताव स्वीकृत किया। यही नहीं लोकमान्यने स्वयं "स्वराज्य-फण्ड" से लगभग पचीस हजार रुपअे श्री विट्ठलभाअी पटेलको भेजवाअे, जो अिस समय अिंग्लैंडमें प्रचार-कार्य कर रहे थे। अमेरिकामें प्रचार करनेके लिअे लाला लाजपतरायकी भी अुन्होंने समय-समयपर सहायता की। अिस प्रकार लोकमान्य विदेशोंमें प्रचारपर जोर देते थे। अधिवेशन समाप्त होनेके पश्चात् तिलक पूना लौटे और स्वास्थ्य सुधारनेके लिअे शहरके बाहर अेक बंगलेमें अेक मास तक रहे। स्वास्थ्यमें कुछ सुधार होते ही फिर कार्यमें जुट गअे। फरवरी मासमें पूनामें स्वराज्य-संघकी कार्यकारिणी समितिकी बैठक हुअी। अुसमें भावी निर्वाचनकी दृष्टिसे लोकमान्यको अेक घोषणा-पत्र तैयार करनेका अधिकार सौंपा गया।

ज्योतिष-सम्मेलन

अिसी मासमें साहित्य-सम्राट् श्रीपाद कृष्ण कोल्हटकरकी अध्यक्षतामें सांगलीमें ज्योतिष-सम्मेलन हुआ। लोकमान्य तिलक प्रसिद्ध गणितज्ञ थे। आपने अिस विषयमें खोजका कार्य किया था। आप पंचांगोंकी रचनामें समयानुसार कुछ संशोधन तथा सुधार करना चाहते थे। आपकी यह अिच्छा थी कि अंगरेजी "नाटीकल" जैसे नौकागमनके लिअे अुपयुक्त होनेवाले नअे शुद्ध भारतीय पंचांगकी रचना की जाय। अितना ही नहीं अिस दृष्टिसे आपने विधायक कार्य भी प्रारम्भ किया। अेक नया और संशोधित "कारण ग्रंथ" लिखवानेकी योजना बनवाअी और नागपुरके विद्वान् डा० भाअूजी दफ्तरी अिस मंडलके अध्यक्ष नियुक्त हुअे। तिलक चाहते थे कि अखिल भारतमें अेक ही शुद्ध पंचांग माना जाय। आपने अेक शुद्ध पंचांग भी बनवाया जिसे "शुद्ध तिलक पंचांग" कहा जाता है। महाराष्ट्रमें कतिपय सुधारवादी तथा प्रगतिप्रिय लोग अिसीके अनुसार अपने धार्मिक विधि

तथा त्यौहार मनाते हैं। तिलक चाहते थे कि ब्रिटेनके ग्रीनवीचके समान भारतवर्षमें तीन या चार वेधशालाअें स्थापित की जायँ और अुनके प्रयत्नों तथा संशोधनोंके आधारपर अेक सर्वसम्मत अखिल भारतीय पंचांग बनवाया जाअे। लोकमान्यकी दूरदर्शिताका महत्व स्वतन्त्र भारत सरकारने अनुभव किया है और अब संशोधित नया पंचाग बनानेके लिअे ग्रहगणितज्ञोंकी समिति भी स्थापित की है जो निकट भविष्यमें लोकमान्यका स्वप्न साकार करेगी।

सिन्धमें दौरा

लोकमान्य अखिल भारतीय लोकप्रिय नेता थे। अबतक अुन्होंने सिन्धको छोड़कर भारतके सभी प्रान्तोंमें स्वराज्यके प्रचारके लिअे दौरे किअे थे। सिन्धवासियोंने बड़े आग्रहपूर्वक अुन्हें निमंत्रण दिया। अुनका स्वास्थ्य बराबर गिरता जा रहा था, परन्तु अुनकी मनोदशा अुन्हें भारतका पूरा दर्शन करनेके लिअे प्रोत्साहित कर रही थी। अत: अुन्होंने सिन्धका दौरा करनेका निश्चय किया। बीचमें दिल्ली तथा अजमेरकी कांग्रेस-कमेटियोंने अुनसे वहाँ पधारनके लिअे आग्रह किया। वे दिल्ली गअे जहाँ अुनका हार्दिक स्वागत किया गया। जुलूस निकाला गया और विराट् सभामें अभिनन्दन-पत्र भेंट किया गया। अुन्होंने अपने भाषणमें अमृतसर-कांग्रेस द्वारा स्वीकृत प्रस्तावोंका प्रभावशाली विवेचन किया। दिल्लीसे अजमेर गअे। यहाँ भी अुनका अनुपम स्वागत हुआ। हजारोंकी संख्यामें हिन्दू तथा मुसलमान नागरिकोंने भाषण सुना। समस्त अजमेर शहर सजाया गया था। मुसलमानोंने अपने अति पवित्र ख्वाजा साहबकी दरगाहमें अुनका स्वागत किया और भारतकी आजादीके लिअे हिन्दुओंका साथ देनेका आश्वासन दिया। यहाँ भी अुन्हें अभिनन्दन-पत्र भेंट किया गया। अजमेरसे वे सिन्धके लिअे रवाना हुअे। आपके साथ दादा साहेब खापर्डे और विट्ठलभाओी पटेल भी थे। हैदराबाद-स्टेशनपर सैंकड़ों हिन्दू-मुसलमान स्वयंसेवकों तथा हजारों नागरिकोंने अुनका स्वागत कर प्रमुख मार्गोंसे जुलूस निकाला। तिलक बग्घोमें बैठे थे, परन्तु अुसे घोड़े नहीं जनता ही खींच रही थी। शामको मुस्लिम-लीग, हिन्द-स्वराज्य-संघ, कांग्रेस तथा

खिलाफत कमेटीकी ओरसे अेक विराट् सभामें लोकमान्यको अभिनन्दन-पत्र भेंट किअे गअे। छह हजार रुपयोंकी थैली भी अर्पित की गअी। अिसके पूर्व अितना विराट् स्वागत यहाँ किसी भी नेताका नहीं किया गया था। सक्खरमें भी यही हाल रहा। कराचीमें भी विराट् स्वागत हुआ तथा मुस्लिम लीग, काँग्रेस-कमेटी, नागरिक और विद्यार्थी-संघकी ओरसे अभिनन्दन-पत्र भी दिअे गअे। मीरपुर खास, ताडीव कोटी अित्यादि शहरोंमें भी यही अुत्साह दिखाअी दिया। अप्रैल मास था। अवस्थासे क्षीण होनेके कारण गरमीसे बेचैनी मालूम होने लगी। वे बम्बअीके लिअे लौट पड़े।

विरोधियोंपर अन्तिम विजय

दुनियामें अुदारताका अनुचित लाभ अुठाया जाता है। लोग अुदारताको दुर्बलता ही समझते हैं और सामंजस्यकी ओटमें छलकी नीति अपनाकर अपना अुल्लू सीधा करना चाहते हैं। लोकमान्यने अमृतसरमें अुदारतासे काम लिया, परन्तु अुनके विरोधियोंने अनुदारताका प्रदर्शन कर अुन्हें अपने प्रान्त महाराष्ट्रमें पराजित करनेका षड्यन्त्र रचा। मार्चमें जुन्नरमें तालुका-परिषद् हुअी और बेलगाँवमें जिला-परिषद्। अिन दोनोंमें अुनके तथाकथित विरोधियोंने अशिष्ट मार्गोंसे भर्त्सना कर अुन्हें पराजित करनेका भरसक प्रयत्न किया, परन्तु अुनको करारी हारका सामना करना पड़ा। सोलापुरमें हुअे प्रान्तीय अधिवेशनमें नरमदलवादी तथा विषाक्त जातीयतासे पीड़ित विरोधियोंने डा. अेनीबेसेन्ट जैसी अन्तर्राष्ट्रीय कीर्ति प्राप्त विदुषी, काँग्रेसकी भूतपूर्व तथा अखिल भारतीय "स्वराज्य-संघ" की अध्यक्षाको बहुमतके भ्रममें डालकर वहाँ बुलवाया और अुनके बलपर तिलकको हरानेकी चेष्टा की। अमृतसरमें काँग्रेसने मांटफोर्ड-सुधार सम्बन्धी जो प्रस्ताव स्वीकृत किया था, वही प्रस्ताव लोकमान्यने यहाँ स्वयं प्रस्तुत किया। डा. अेनीबेसेन्टने अुसमें अेक संशोधन प्रस्तुत किया। कड़ा वादविवाद हुआ। अब भी लोकमान्यका झुकाव सुलहकी ओर ही अधिक था, संघर्षकी ओर नहीं। परन्तु अुनके विरोधी संघर्षपर तुले हुअे थे। अन्ततोगत्वा प्रतिनिधियोंके

बहुमतसे निर्णय हुआ । लोकमान्यके पक्षमें १७०० मत थे और विरोधियोंने बड़ा हल्ला मचाकर भी केवल ७०० मत प्राप्त किअे । अिस प्रकार अुनके विरोधियोंकी करारी हार हुअी । अिस विजयसे वे स्वयम् भी दुखी हुअे, परन्तु राजनीतिमें अैसी ही विवशतासे संघर्ष कर अुन्हें कअी बार विजय प्राप्त करनी पड़ी ।

पर्सफण्ड-समर्पण-समारम्भ

हम पहले ही लिख चुके हैं कि जब लोकमान्य लन्दनमें चिरोल-केसमें व्यस्त थे, तब अुनकी सहायताके लिअे भारतवर्षमें निधि अेकत्र की जा रही थी । परन्तु अभी तक लगभग तीन लाख रुपयोंकी अिस निधिका समर्पण-समारम्भ सम्पन्न नहीं हुआ था । लोकमान्यके मित्रों तथा अनुयायियोंने बड़े अुत्साह तथा आदरके साथ ता. २२ मअीको पूनामें पर्सफण्ड-समर्पण-समारम्भ किया । अिसमें स्वराज्य-संघ तथा कांग्रेसके सैकड़ों कार्यकर्ता सम्मिलित हुअे । देशके विभिन्न प्रान्तोंसे प्रतिनिधि आअे । पर्सफण्डकी विशेषता यह थी कि वह अधिक-से-अधिक व्यक्तियोंके चन्देसे अिकट्ठा किया गया था । अर्थात् अेक-अेक रुपया चन्दा देनेवाले बहुत अधिक थे । अिससे लोकमान्य तिलककी लोकप्रियताकी कल्पना की जा सकती है । तिलकने गद्गद् कण्ठसे कहा कि "वास्तवमें चिरोल मुकदमेका स्वरूप व्यक्तिगत था, परन्तु सरकारने बलात अुसे राजनीतिक स्वरूप प्रदान किया और आपने सरकारकी अिस चुनौतीको स्वीकार कर मुझे अतीव अुपकृत ही नहीं किया बल्कि खरीद लिया । अिस थकी-माँदी अवस्थामें आपके ऋणसे मैं कैसे मुक्त हो सकूँगा ?" लोकमान्य तिलककी मृत्युके बाद 'केसरी' पत्रने प्राप्त धनसे अुक्त रुपया अेकत्रित करके जनताके लिअे 'ट्रस्ट' बना दिया । अिस प्रकार जनताका पैसा जनताको वापस लौटाया ।

कांग्रेस डेमोक्रेटिक पार्टीका घोषणा-पत्र

दूसरे दिन स्वराज्य-संघकी परिषद् हुअी । अिसमें लोकमान्य द्वारा बनाया गया कांग्रेस डेमोक्रेटिक पार्टीका घोषणा-पत्र सर्व-सम्मतिसे स्वीकृत

किया गया। वास्तवमें अिस घोषणा-पत्रके मुख्य सिद्धान्तोंसे महात्मा गांधी, बैं० जिन्ना, महामना मालवीय, पं. मोतीलाल नेहरू तथा लाला लाजपतराय भी सहमत थे। यही नहीं, महात्मा गांधी और बैं० जिन्नाकी राय तिलकने पहले ही प्राप्त कर ली थी। नरमदलवाले या लिबरल्स अिसके विरोधी थे, क्योंकि अुन्होंने कांग्रेस त्यागकर लिबरल फेडरेशन नामक राजनीतिक संस्था स्थापित कर ली थी, परन्तु देशमें अुसके अनुयाअियोंकी संख्या नगण्य थी। अिस घोषणा-पत्रकी प्रधान धाराअें ये थीं—१. काँग्रेस प्रजातान्त्रिक दलकी नीतिका अच्छा परिचायक अुसका नाम ही है। काँग्रेसके प्रति अिस दलकी अटल निष्ठा है और प्रजातन्त्रमें अिसका दृढ़ विश्वास है। अिस दलकी रायमें भारतकी राजनीतिक समस्या प्रजातान्त्रिक ढंगसे ही हल हो सकती है, बशर्ते शिक्षाका काफी प्रचार हो और मतदानका अधिकार विस्तृत किया जाय। अिसमें जातिभेद, वर्गभेद तथा धर्मभेद बाधक नहीं होना चाहिअे। धर्म-विषयक पूरी सहिष्णुता रखते हुअे यदि किसी नागरिकके धर्मपर आघात पहुँचता है तो अुसकी रक्षा करना सरकारका कर्तव्य है। खिलाफतकी समस्या मुसलमानोंकी धार्मिक भावनाके अनुकूल तथा कुरानकी हिदायतोंके अनुसार ही हल की जानी चाहिअे। यह दल भारतीय मुसलमानोंकी माँगका पूरा समर्थन करता है। २. यह दल अिस सिद्धान्तको मानता है कि संसारमें भ्रातृभाव बढ़ाकर मनुष्य मात्रकी अुन्नति करनेकी दृष्टिसे भारत ब्रिटिश-साम्राज्यमें बराबरीके हिस्सेदारके रूपमें रहे, परन्तु अपने राज्य-शासनपर अुसका पूरा अधिकार हो तथा ब्रिटिश-साम्राज्यके अन्य प्रत्येक देशमें अुसके निवासियोंको बराबरीके अधिकार प्राप्त हों। जिन देशोंमें ये अधिकार प्राप्त नहीं होंगे अुसकी प्राप्तिके निमित्त भारत जैसेको तैसेकी नीतिका पालन करेगा। यह दल राष्ट्र-संघका हार्दिक स्वागत करता है और आशा करता है कि वह संसारमें अेक देशपर दूसरे अधिक प्रबल देशके द्वारा होनेवाले आर्थिक शोषण, स्वतन्त्रता-अपहरण तथा अन्य अन्यायपूर्ण आक्रमणोंको रोककर शान्ति प्रस्थापित करेगा। ३. अिस दलका यह विश्वास है कि भारतके निवासी अपने देशका शासन प्रजातान्त्रिक ढंगसे

करनेकी पूर्ण क्षमता रखते हैं। भारतमें राज्य-शासन-प्रणाली कैसी हो, कानून कैसे हों, यह निश्चित करनेका अधिकार केवल भारतवासियोंको हो और अिस अधिकारका अुपयोग स्वयंनिर्णयके सिद्धान्तोंपर किया जाय। मान्टफोर्ड-सुधार अपर्याप्त निराशाजनक तथा असमाधानकारक हैं, तो भी ब्रिटिश पार्लमेण्टमें मजदूर-दल तथा लिबरल-दलकी सहायतासे अुसके दोष हटवाकर अुन्हें अधिक अुपयोगी बनानेकी यह दल-चेष्टा करेगा और यह दल भविष्यमें भारतको सम्पूर्ण स्वराज्यके अधिकार प्राप्त करानेकी दृष्टिसे अुन सुधारोंको कार्यान्वित करेगा। स्वराज्यसे अभिप्राय है—राज्यशासन, अर्थनीति, सेना तथा परराष्ट्रीय नीति पर भारत-वासियोंका अक्षुण्ण अधिकार होना। सभी भारतवासियोंको नागरिकताके नैसर्गिक अधिकार प्राप्त होना और अुन्हींका अपने देशका भाग्यविधाता बनना। अिस ध्येयकी प्राप्तिके लिअे दल राष्ट्रसंघके अन्य सदस्य राष्ट्रोंकी सहायता लेगा। देश तथा विदेशमें तीव्र आन्दोलन कर सगठन बनाना अिस दलका ध्येय होगा अित्यादि। अिसके अतिरिक्त यह दल प्रान्तीय तथा केन्द्रीय राज्यशासनमें तत्काल कौनसे संशोधन चाहता है, अिसकी विस्तृत सूची भी तैयार की गअी। संक्षेपमें लोकमान्यने यह घोषणा-पत्र कांग्रेसकी निर्धारित नीतिके अनुसार बनाया। अिस पत्रमें अुनकी सर्वतोमुखी राजनीतिक दूर-दर्शिता दिखाअी देती थी और परराष्ट्र-नीति भी स्पष्ट थी।

अिसमें धर्म-निरपेक्ष राज्यकी कल्पना भी स्पष्ट है। आज अिसी धर्म-निरपेक्षताकी मूर्ति हमारी भारत-सरकार है। लोकमान्यके चिरवांच्छित प्रजा-तन्त्रका प्रत्यक्ष रूप आजका हमारा प्रजातान्त्रिक शासन है। लोक-मान्यकी अिच्छानुसार ही आज बालिग मतदानके आधारपर प्रतिनिधि चुने जाते हैं। अन्तिम वाक्यमें अुन्होंने अपना ध्येय-सूत्र गुंफित किया था कि प्रचार करो, आन्दोलन छेड़ो और संगठन मजबूत कर स्वराज्यकी प्राप्ति करो। अर्थात् स्वराज्यकी प्राप्ति स्वावलंबनके बलपर की जाय। अुनकी मृत्युके पश्चात् सन् १९४७ तक कांग्रेसकी राजनीति अिसके अनुसार ही चलती रही। अिस प्रकार लोकमान्य तिलक आजके स्वतन्त्र भारतके द्रष्टा

थे। कॉंग्रेस-प्रजातान्त्रिक दलका घोषणा-पत्र ही भारतको अुनकी अन्तिम देन थी।

लोकमान्यका काशीमें सम्मान

सन् १९२० के मअीमें ता. २९ को काशीमें अखिल भारतीय कॉंग्रेस कमेटीका विशेष अधिवेशन हुआ। अुसमें सम्मिलित होनेके लिअे लोकमान्य पूनासे चल पड़े। संयोगसे अुसी ट्रेनसे महात्मा गांधी भी काशी जा रहे थे। प्रत्येक स्टेशनपर दर्शकोंकी भीड़ होती थी और 'लोकमान्य तिलककी जय' 'महात्मा गाँधीकी जय' के नारोंसे आकाश गूँजने लगता था। बनारस-अधिवेशनमें तय हुआ कि अगस्तमें कलकत्तामें अ. भा. कॉंग्रेसका विशेष अधिवेशन हो, जिसमें महात्मा गाँधीके असहयोग-प्रस्ताव पर निर्णय किया जाय। लोकमान्य तीन दिन तक काशीमें ठहरे। यहाँकी विद्वत्परिषदकी ओरसे आपको गंगा-घाटपर विराट् सभामें संस्कृत भाषामें अभिनन्दन-पत्र अर्पित किया गया था, जिसका अुत्तर संस्कृतमें ही देकर आप पण्डितोंके प्रशंसा-भाजन बने। काशीके नागरिकोंने भी भारतरत्न डा० भगवानदासकी अध्यक्षतामें टाअुन-हालके मैदानमें विराट् सभा कर आपको अभिनन्दन-पत्र अर्पित किया। आपने अध्यक्षकी सूचनानुसार "राजधर्म" विषय पर सारगर्भित भाषण कर काशी-निवासियोंके प्रति कृतज्ञता व्यक्त की।

भारतरत्न मनिषी डा. भगवानदासजीसे भेंट

अपने "भगवद्गीताका आशय और अुद्देश्य" नामक पुस्तिकामें डा० भगवानदास अिस भेंटका वर्णन अिस प्रकार करते हैं:—"प्रसिद्ध है कि सांख्य-कारिकामें ७० कारिकाअें हैं, किन्तु ६९ मिलती हैं। गोड़पाद भाष्यके शब्दोंसे तिलकने लुप्तकारिकाओंको खोज निकाला। यह मैंने 'गीता रहस्य' के हिन्दी अनुवादमें पढ़ा था। अब जो ७० वीं कारिका मानी जाती है, अुसमें दर्शनकी बात कुछ नहीं, केवल गुरु-परम्परा ही है। तिलकसे मैंने कहा कि आपने नष्ट कारिकाओंका अुद्धार किया है तो वे प्रसन्न हुअे, मुस्कराअे।

फिर आंगस्ट कामरे आदिके दार्शनिक विचारोंकी चर्चा हुअी। मैं प्रणाम कर चला आया। तिलककी राजनीति सच्ची थी। प्रतिसहकारिताकी नीति व्यवहारतः गांधीजीको भी माननी पड़ी, भले ही अुन्होंने मुँहसे वैसा न कहा हो। प्राचीन महाभारतका अेक श्लोक गीताके आशयके अनुकूल है। अुसका तिलक अपने सार्वजनिक व्याख्यानोंमें पुनः-पुनः अुल्लेख किया करते थे और वह है "शठं प्रति शाठ्यं कुर्यात् सादरं प्रति सादरम्।" यही तिलकके प्रति-सहकारिताका मर्म था। लोकमान्य महाभारतको हिन्दुओंका राष्ट्रीय ग्रन्थ कहा करते थे और अुसमें प्रतिपादित नीतिका जहाँ तक हो सके वहाँ तक अनुसरण करते थे, परन्तु अुनका सांस्कृतिक अभिमान या निष्ठा संकीर्ण न थी। अुसे आधुनिक अन्तर्राष्ट्रीयता, धार्मिक सहिष्णुता तथा सामाजिक समानताकी अुचित अेवं विशाल नींव प्राप्त थी। अुनका जीवन प्राचीनता तथा आधुनिकताका सुन्दर समन्वय था। अुसमें आध्यात्म विद्या और वैज्ञानिक ज्ञानका पवित्र सगम था। अतः प्राचीन पंडित तथा आधुनिक अूँचे डिग्री-होल्डर्स सभी अुनके समक्ष आदरसे सिर झुकाते थे।

अिस प्रकार प्राचीन भारतीय संस्कृतिकी नगरी वाराणसीमें सम्मान प्राप्त कर वे जबलपुर गअे। डाक्टर विश्रांति लेनेके लिअे आपको समय-समयपर चेतावनी देते थे। आप अुनकी सलाहको कुछ अंश तक मानते थे, फिर भी कार्य-व्यस्त रहते थे। जबलपुरमें जनताने आपका हार्दिक स्वागत किया। विराट् सभामें आपके दो भाषण हुअे। आपने कांग्रेसकी नीतिका समर्थन किया। ये आपके अन्तिम सार्वजनिक भाषण थे।

अब आप पूना लौटे। कुछ दिनों तक विश्राम लिया। अैसा मालूम हुआ कि आपका स्वास्थ्य पुनः अच्छा हो गया है। आपने स्वराज्य-संघके अन्तिम अधिवेशनमें कहा था कि कतिपय नेता मुझसे अनुरोध करते है कि मैं चुनावमें अुम्मीदवारकी हैसियतसे सक्रिय भाग लूं और केन्द्रीय असेम्बलीमें कांग्रेस-प्रजातान्त्रिक दलका नेतृत्व ग्रहण करूँ, परन्तु मुझे अिस वृद्धावस्थामें भीतरसे अैसा प्रतीत होता है कि मैं दिन-प्रति-दिन क्षीण हो रहा हूँ और

किसी प्रकारका नया बोझ ढोनेकी मुझमें सामर्थ्य नहीं है। आपके ये दर्द-भरे शब्द सुनकर कअी कार्यकर्ता चिन्तामग्न हुअे थे। यह आपका अन्तर्ज्ञान था।

कर्मयोगीका स्वर्गवास

ता० १२ जुलाअी १९२० को आप पूनासे बम्बअी गअे। वहाँ हाअी-कोर्टमें ताअी महाराजका दीवानी दावा अभी भी चल रहा था। यह आपका मित्र-कार्य था, परन्तु सरकारकी नीतिसे गत अुन्नीस वर्षोंसे अुलझनमें पड़ा था। यदि अिसमें आपका हाथ न होता तो मित्रका पूरा विनाश होता और मुकदमा चन्द महीनोंमें ही समाप्त हो गया होता। अब आप अिसे समाप्त करनेपर तुले। सात दिनों तक आपने बहुत कष्ट अुठाया और अुन्नीस वर्षोंके निस्वार्थ श्रमका अपेक्षित फल ता० १४ जुलाअीको प्राप्त हुआ। आपके पक्षकी जीत हुअी, परन्तु आपकी जीवनी तो धूप-छायाका अनूठा खेल थी। ता० २० जुलाअीको आप मामूली बुखारसे पीड़ित हुअे। अुस दिन दीवान चमनलाल आपसे मिलने आअे थे। प्रचलित राजनीतिपर अुनके साथ आपने दीर्घ चर्चा की। शामको वे टहलनेके लिअे आपको मोटरमें ले गअे। अुन्होंने आपसे काश्मीरमें दो-तीन मास तक विश्राम करनेका अनुरोध किया और स्वयं अिसका प्रबन्ध करनेका आश्वासन दिया। आपने अुत्तर दिया कि मेरे जैसे क्षीणकाय व्यक्ति द्वारा अितनी लम्बी सफर करना असम्भव है। बुखार कम होते ही मैं पूनाके पास किसी स्थानमें विश्राम करूँगा। दीवान चमन-लालने आपसे भारतीय-मजदूर-परिषदका अुपाध्यक्ष होनेकी प्रार्थना की। आपने तत्काल स्वीकार किया और गद्‌गद् कण्ठसे कहा कि मुझे पक्का स्मरण है कि सन् १९०८ में जब मुझे छह वर्षोंकी सजा सुनाअी गअी थी, तब बम्बअीके मजदूरोंने लगातार छह दिनोंकी प्रथम तथा अनूठी हड़ताल द्वारा अुसका कड़ा विरोध किया था। मजदूरोंका ऋण मैं कैसे अदा कर सकता हूँ? दीवान चमनलाल सन्तुष्ट हुअे, क्योंकि अुनकी अिच्छा पूरी हुअी। शामको अेक घंटेके बाद वे लौटे, परन्तु तिलकका बुखार बहुत बढ़ गया था। अुस दिन आप बिस्तरे पर लेटे तो फिर अुठ न सके। बम्बअीके विख्यात डाक्टर तथा

धन्वन्तरि जैसे वैद्यराज्य आपकी चिकित्सा तथा औषधिकी योजना कर रहे थे, पर कुछ लाभ न हुआ। आपको भ्रम तथा सन्निपात हुआ। अितनी भयावह बीमारीमें भी आप देश तथा स्वराज्यके सम्बन्धमें ही चिन्तन करते थे। बीच-बीचमें आपके मुँहसे अेकाअेक निम्नलिखित ढंगके वाक्य या अुद्‌गार प्रवाहित होते थे, मानों आप भाषण कर रहे हों, "सन् १८१८ में अंग्रेजोंकी सत्ता भारतमें कायम हुअी। परसों १९१८ साल समाप्त हुआ। धिक्कार-धिक्कार!! हम अभी भी अुनके दास बने हैं। पंजाब-हत्याकांडका प्रतिकार आप कैसे करेंगे। विट्‌ठल भाअी पटेल लन्दनमें प्रचार-कार्य कर रहे हैं। अब अुन्हें यहाँसे सहायता भेजो। हमने कलकत्तेमें स्पेशल कॉंग्रेस करनेका निश्चय किया है। मेरा यह पूरा विश्वास है कि भारतका अुद्धार स्वराज्य-प्राप्तिके बिना कदापि नहीं हो सकता। स्वराज हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है और हम अुसे प्राप्त करके ही रहेंगे। आपने और जनताने जो कष्ट अुठाअे हैं अुनके लिअे मैं आपका कृतज्ञ हूँ।" अित्यादि। देशकी चिन्ता अुनके मनमें अंत तक रही। यह तिलमिलाहट सिंहकी अन्तिम पुकार थी। गिरनेवाली बिजलीकी कड़कड़ाहट थी। बुझते हुअे दीपककी आखिरी ज्योति थी। जुलाअीके अन्तिम ८–१० दिन देशवासियोंने चिन्ता, व्यग्रता और अुद्विग्नतामें बिताअे। देशके कोने-कोनेमें हजारों प्रार्थनाअें हुअी। महात्मा गांधी, देशबन्धु दास, तथा स्वागत-समितिके कतिपय सदस्य लोकमान्यको कलकत्ता कांग्रेसके विशेष अधिवेशनका अध्यक्ष बनानेकी योजना बना रहे थे। बीमारीकी बात सुनते ही महात्मा गांधी बम्बअीकी ओर दौड़े। लाला लाजपतराय भी बेचैन हुअे और बम्बअीकी ओर चल पड़े। देशके सभी प्रान्तोंसे कार्यकर्ताओंके झुंड बम्बअीकी ओर अग्रसर हुअे। अखिल भारतवर्षकी जनता आपकी बीमारीका हाल जाननेके लिअे अुत्सुक थी। मन्दिरोंमें जप, अभिषेक, प्रार्थना तथा अनुष्ठान हो रहे थे। परन्तु "जातस्यहि ध्रुवं मृत्यु" अिस सूक्तिकी अटलता सिद्ध हुअी और लोकमान्यताके गौरीशंकर शिखरसे तिलकने ता. ३१ जुलाअीकी भयावनी रातको १ बजे स्वर्गारोहण किया। समस्त भारतवासी अिस दुखद घटनासे शोक-सागरमें डूब गअे। पहली अगस्तको भारतवर्षमें अपूर्व राष्ट्रीय शोक

दिन तथा हड़ताल मनाओी गओी। वैसा शोक सार्वजनिक रूपसे अिस देशमें अिससे पहले कभी नहीं मनाया गया था। बम्बओीमें अपूर्व शव-यात्रा निकली। शवके साथ जुलूसमें हिन्दू, मुसलमान, पारसी, सिख तथा ओीसाओी लाखोंकी संख्यामें थे। अिस शोक-सागरको देखकर आकाश भी विकल हुआ और अश्रुसिंचन करने लगा। लगातार अेक घण्टेतक भीषण वर्षा हुओी, परन्तु जनता टससे मस न हुओी। शव-यात्राका जुलूस बढ़ता ही गया। अन्ततोगत्वा सागरके किनारे चौपाटीपर चन्दनकी चितामें लोकमान्यके पार्थिव देहका अन्तिम अग्नि-संस्कार यथाविधि सम्पन्न हुआ। अिसी स्थानपर आज लोकमान्यकी प्रस्तर-प्रतिमा खड़ी है। ज्यों-ज्यों चिताकी ज्वालाअें धधकीं त्यों-त्यों जनताके हृदयमें शोककी लपटें अुठने लगीं। आकाशस्थित देवी-देवताओंने भी व्याकुलतासे मोटे-मोटे आँसुओंका सिंचन आधे घण्टेतक किया। अिधर विशाल अरब सागर भी विह्वलतासे अुमड़ पड़ा। मानों सब सृष्टि विकल हुओी हो।

काँग्रेसकी श्रद्धांजलि

विशेष अधिवेशन कलकत्ता सितम्बर १९२०

"The Congress places on record its deep and profound sorrow at the death of Lokmanya Bal Gangadhar Tilak, whose stainless purity of life, services and sufferings in the cause of his country, whose deep devotion to the welfare of the people, whose arduous endeavours in the fight for national autonomy would enshrine his memory in the grateful recollection of our people and would be a source of strength and inspiration to countless generations of his countrymen."

अर्थात् "लोकमान्य तिलककी मृत्युपर कांग्रेस अतीव दुखी तथा शोकयुक्त होकर अुनके प्रति अपनी श्रद्धांजलि अर्पण करती है। कांग्रेसको दृढ़ आशा है कि आपका निष्कलंक चरित्र, आपकी निरपेक्ष देश-सेवा, स्वराज्यके लिअे किया हुआ अविरल त्याग तथा बलिदान, अपने देश-भाअियोंके हितकी व्यग्रता अित्यादि चिरस्मरणीय रहेंगे और आपकी पवित्र स्मृति भविष्यमें असंख्य पीढ़ियोंके लिअे प्रोत्साहन तथा बलप्रदायक स्रोत बनी रहेगी।"

वीसवाँ प्रकरण

समकालीन नेताओंके कुछ संस्मरण

राष्ट्रपिता महात्मा गांधी

मैंने भारतके प्राय: सब नेताओंसे सन् १८९६ में दक्षिण अफ्रीकाके भारतीयोंके सम्बन्धमें वार्तालाप किया। मैं पूना गया किन्तु वहाँकी परिस्थितिसे मैं पूर्णतया अनभिज्ञ था। मुझे अितना मालूम था कि सार्वजनिक सभाके प्रमुख लोकमान्य तिलक थे और डेक्कन सभाके प्रधान-मन्त्री गोपालकृष्ण गोखले। मैं जब तिलकजीसे मिलने गया तब वे अपने अनेक साथियोंसे वार्तालाप करनेमें व्यस्त थे। मैंने लोकमान्यसे कहा कि पूनामें अेक सार्वजनिक सभा करना मेरा अुद्देश्य है। अुन्होंने पूछा कि क्या आप श्री गोपालराव गोखलेसे मिल चुके हैं? मैं अुनके प्रश्नका अभिप्राय समझ नहीं सका। मैं अवाक् रह गया। फिर तिलकजीने स्वयम् मुझे पूनाकी सार्वजनिक दलबन्दीसे परिचित कराया। अुनकी निर्मल स्पष्टवादितासे मैं बहुत प्रभावित हुआ। अुन्होंने मुझे सरल सुझाव दिया कि मैं सार्वजनिक दलबन्दीसे सदा अलग रहनेवाले डा॰ रामकृष्णराव भाण्डारकरसे अिस सभाका अध्यक्ष होनेकी प्रार्थना करूँ। अिसके अतिरिक्त तिलकजीने मुझे आश्वासन दिया कि वे हर हालतमें मुझे पूरी सहायता प्रदान करेंगे। अिस तरह तिलकजीने धैर्य देकर मुझे सम्भाला। अपने कोटि-कोटि देश-बन्धुओंकी तरह अुनकी दुर्दम्य आकांक्षा, अगाध ज्ञान, देशप्रेम और सबसे अधिक अुनके पवित्र महान् व्यक्तिगत जीवनकी मैं प्रशंसा करता हूँ। आधुनिक कालके सब नेताओंकी अपेक्षा अुन्होंने अपनी ओर लोगोंका ध्यान सबसे अधिक खींचा था। अुन्होंने स्वराज्यका मन्त्र हमारे प्राणोंमें फूंका। प्रस्थापित राजसत्ताकी बुराअियोंकी जितनी प्रतीति अुन्हें हुअी थी, अुतनी और किसीको नहीं। अुनके अच्छेसे-अच्छे अनुयाअीकी तरह अुनका सन्देश अुतनी ही सत्यतासे देशको देनेका मैं

दावा करता हूँ। मैं भली-भाँति जानता हूँ कि शीघ्रातिशीघ्र स्वराज्यकी प्राप्ति ही अुनकी आत्माको शान्ति दे सकती है, और कोअी बात नहीं।

काँग्रेसके कलकत्तामें हुअे विशेष अधिवेशनके समय मुझे लोकमान्यकी अनुपस्थिति बहुत खल रही थी। मेरा आज भी यह मत है कि वे जीते होते तो कलकत्तेके मौकेका स्वागत करते। पर यदि अैसा न होता और वे विरोध भी करते तो भी मुझे पसन्द आता। मैं अुनसे कुछ सीखता। मेरे साथ अुनके मतभेद हमेशा रहते थे। पर वे सब मीठे होते थे। मुझसे अुनका निकटका सम्बन्ध है, यह बात अुन्होंने मुझे सदा मानने दी। यह लिखते समय अुनके अवसानका चित्र मेरी आंखोंके सामने आ जाता है। मध्य-रात्रि में मुझे अुनके अवसान हो जानेका टेलीफोन मेरे साथी पटवर्धनने किया था। अुसी समय साथियोंके सामने मेरे मुँहसे यह अुद्‌गार निकला था—"मेरे पास बड़ा सहारा था जो आज टूट गया।" अिस समय असहयोग-आन्दोलन जोरोंपर चल रहा था, अुनसे अुत्साह और प्रेरणा पानेकी मैं आशा रखता था। असहयोगके सम्बन्धमें अुन्होंने मुझे विश्वसनीय आश्वासन दिया था। अुन्हें स्वयम् असहयोग मंजूर था, परन्तु जनताकी शक्तिके बारेमें कुछ शंकित थे। यदि देश और कांग्रेस बहुमतसे असहयोगका कार्यक्रम स्वीकार करे तो वे स्वयम् असहयोगमें भरसक योग देनेको तत्पर थे। यकीन था कि अुनके जैसा तेजस्वी राष्ट्र-नेता असहयोगके आन्दोलनोंसे अछूता न रहता।

महामना पण्डित मदनमोहन मालवीय

मेरा लोकमान्य तिलकजीसे सन् १८८५ से घना परिचय था, जब वे पूनामें न्यू अिंग्लिश स्कूल तथा फर्ग्यूसन कालिजमें केवल ४०) रुपये मासिक जीवन-वेतन स्वीकार कर अध्यापनका कार्य करते थे, तभीसे मुझपर आपके स्वार्थत्याग तथा बुद्धिमानीका अमिट प्रभाव पड़ा। भविष्यमें हम मित्र बने। वे बहुत असाधारण पुरुष-सिंह थे। अुनका जीवन अुपदेशमय और मनुष्योंमें विद्या-प्रेम, देशभक्ति, धैर्य और अुत्साह बढ़ानेवाला है। राजा भर्तृहरिका नीचे लिखा प्रसिद्ध सुभाषित अुनके विषयमें प्रचुर अंशमें घटता था :—

विपदि धैर्यमथाभ्युदये क्षमा
सदसि वाक्पटुता युधि विक्रमः ।
यशसिचाभिरुचिर्व्यसनं श्रुतौ
प्रकृतिसिद्धमिदंहि महात्मनाम् ॥

लोकमान्यको युद्ध-प्रबन्ध करनेका अवसर नहीं मिला, नहीं तो जैसा देशभक्त गोपाल कृष्ण गोखलेजीने कहा था लोकमान्य अुसमें भी निपुण पाअे जाते । अुन्हें शास्त्र-ग्रन्थोंका व्यसन था और वे शास्त्र तथा सद्ग्रन्थोंका अभ्यास करते रहना देश-भक्तका परम धर्म मानते थे । अिसीलिअे ऋषियोंने नियम किया है कि "अहरहः स्वाध्यायामधीयत" प्रतिदिन वेद-वेदांगका तथा अन्य अुत्तम ग्रन्थोंका अध्ययन करते रहना चाहिअे । जैसा सुखमें वैसा ही विपत्तिमें लोकमान्यका शास्त्राध्ययन-व्यसन समान बना रहा । राजनीतिमें वे बेजोड़ थे । अंग्रेजोंकी नीतिको जैसा वे समझते थे वैसा और नेताओंमें बहुत कम पुरुषोंने समझा था । सबसे बड़े दो गुण लोकमान्यमें निर्भयता और धैर्य थे । "स्वराज्य हमारा जन्मसिद्ध स्वत्व है" ये स्वतन्त्रजनोचित भाव अुसीके हृदयमें रह सकते थे और अुसीके मुखसे निकल सकते थे जिसका हृदय कभी भयसे दुर्बल नहीं हुआ और जिसके हृदयको विपत्तिका प्रबल-से-प्रबल पवन भी विचलित नहीं कर सकता । लोकमान्यको पुत्रका वियोग हुआ, धर्मपत्नीका वियोग हुआ, ऋणका संकट आया, तीन बार जेल जाना पड़ा और अनेक विपत्तियाँ भी आओं किन्तु अुनका धैर्य नहीं डिगा । मुझे नीचे लिखे श्लोक स्मरण आते हैं जो कि अुनके सम्बन्धमें अुचित जंचते हैं :—

पुत्रदारैर्वियुक्तस्य वियुक्तस्य धनेन वा ।
मग्नस्य व्यसने कृच्छ्रे धृतिः श्रेयस्करी नृप ॥
चलानि गिरयः कामं युगान्ते पवना हताः ।
कृच्छ्रेऽपि न चलत्येव धीराणां निश्चलं मनः ॥

मुझे अुनके मृत्युके केवल बारह दिन पूर्व अुनके घर पूनामें रहनेका सौभाग्य प्राप्त हुआ था। अुस समय अुन्होंने अमेरिका, फ्रान्स, जर्मनी, जापान जैसे विदेशोंमें भारत विषयक जागृति तथा प्रचार करनेकी बात मुझसे व्याकुलतासे कही। मैं निःसन्देह कहता हूँ कि लोकमान्यकी दुःखद मृत्युतक अुनसे अधिक लोकप्रिय अन्य राष्ट्रनेता भारतमें नहीं था। अुनकी पावनकारी स्मृति भविष्यमें पीढ़ियों तक स्फूर्तिका स्रोत बनी रहेगी।

पंजाबसिंह लाला लाजपतराय

मेरा लोकमान्य तिलकसे १८९६ से परिचय था किन्तु १९०४ से अुनसे घनिष्ठ मित्रता हुआी। सन् १९०६ में कलकत्ता-कांग्रेस द्वारा आपकी अलौकिक प्रतिभाके कारण स्वराज्य, स्वदेशी, बहिष्कार तथा राष्ट्रीय शिक्षाका चतुर्मुखी कार्यक्रम स्वीकृत किया गया। बाबू अरविंद घोष, बाबू विपिनचन्द्र पाल तथा मैंने स्वयं अुनकी अुग्र राष्ट्रीय नीतिका भरसक समर्थन तथा प्रचार किया। कांग्रेसकी अेकता कायम रखनेके लिअे अुन्होंने कुछ भी अुठा नहीं रखा। मैं जब अमेरिकामें भारतके लिअे प्रचार करता था, तब अुन्होंने मेरी सब तरहसे सहायता की। मैं जब सन् १९१९ में अमेरिकासे लौटा तब अुन्होंने बम्बअीमें मेरा हार्दिक तथा भव्य स्वागत किया और स्वराज्य-संघकी ओरसे मुझे अभिनन्दन-पत्र अर्पण किया। अुनके बौद्धिक तथा मानसिक अलौकिक गुणोंका मुझपर बहुत असर हुआ। सन् १९२० में दिल्ली तथा बनारसमें हुअे अखिल भारतीय कांग्रेसके अधिवेशनोंके समय "असहयोग" के विषयमें अुनकी और मेरी काफी चर्चा हुआी। अुनकी अन्तिम बीमारीकी वार्ता सुनते ही मैं व्याकुलतासे बम्बअीकी ओर चल पड़ा। परन्तु बम्बअी स्टेशनपर पहुँचते ही मुझे मालूम पड़ा कि अुनकी महान् आत्मा अिस संसारसे चल बसी। मेरे हृदयपर वज्राघात हुआ और मैं स्तंभित हुआ। जब मैं संभला तब अुनकी मृत्युसे भारतकी जो क्षति हुआी अुसकी दुःखद अनुभूति मुझे कअी दिनों तक रही।

देशबन्धु बैरिस्टर चित्तरंजनदास

मैं १९०६ में कलकत्ता-कांग्रेस-अधिवेशनके समय लोकमान्य तिलकके सम्पर्कमें आया। अुनकी अलौकिक बुद्धिमानी, धैर्य तथा अुग्र राजनीतिक मतका मेरे युवक हृदयपर चिरप्रभाव पड़ा। अिसके पश्चात् सन १९१६ में मेरा अुनसे दृढ़ परिचय हुआ। मैं अुनके राष्ट्रीय दलका अेक कार्यकर्ता बना। वास्तवमें सन १९१७ में हमारी हार्दिक अिच्छा थी कि लोकमान्य तिलक कलकत्ता-कांग्रेसके सभापति बनें, परन्तु अुन्होंने स्वयम् डा० अेनीबेसेन्टका नाम सभापति-पदके लिअे सूचित किया। सन १९१६ से १९२० तक वे कांग्रेस तथा भारतके सिरमौर नेता थे। आयर्लेंडके सिनफीन दलकी भाँति पार्लमेन्टमें अँग्रेज-सरकारसे मुकाबला करनेके वे पक्षपाती थे। अुनमें राजनीतिज्ञकी कुशलता, वीरकी निडरता तथा साधुकी पवित्रताका अनोखा समन्वय दिखाअी देता था।

बैरिस्टर मुहम्मदअली जिन्ना

लोकमान्य तिलक चतुर राजनीतिज्ञ थे। सूरत-कांग्रेसके समय मैं अुनको जानने लगा। सन १९०८ में कोर्टके कार्यसे मेरा अुनसे परिचय हुआ। सन १९१४ में जब वे मंडालेसे मुक्त होकर लौटे तबसे मेरा और अुनका परिचय दृढ़ होता गया। अुनके संस्थापित स्वराज्य-संघका मैं अेक निष्ठावान कार्यकर्ता बना। वे व्यवहार-कुशल नेता थे। अुनकी दृष्टि राष्ट्रीयतासे लबालब थी। साम्प्रदायिकता या जातीयताका अुसमें पूरा अभाव था। अमृतसरकी कांग्रेसमें अुनकी पैनी राजनीतिक बुद्धिमानीकी विजय हुअी। वे निःस्वार्थी देशभक्त थे। अुनके प्रति सब भारतवासियोंके मनमें आदर था। सचमुच भारतके राजनीतिक तथा सार्वजनिक क्षेत्रमें वे अद्वितीय महापुरुष थे।

पंडित मोतीलाल नेहरू

यद्यपि लोकमान्य तिलकसे मेरा दृढ़ परिचय नहीं हुआ था तथापि मैं आपको हृदयसे चाहनेवालोंमेंसे अेक था। कांग्रेस-अधिवेशनोंके समय आपसे

राजनीतिक प्रश्नोंके सम्बन्धमें वार्तालाप करनेके पाँच-छह मौके मुझे प्राप्त हुओ थे। आपकी पैनी बुद्धि तथा राजनीतिक ज्ञानसे मैं प्रभावित हुआ था, परन्तु मैं आपसे कभी भी पूर्णतया सहमत नहीं हुआ। सूरत कॉंग्रेसमें मैं नरमदलका प्रतिनिधि था, परन्तु तिलकजीके धैर्यकी प्रशंसा मन-ही-मन करता था। लोकमान्य तिलकजीने म. गांधीजी द्वारा प्रदर्शित असहयोग कार्य-क्रमको आशीर्वाद दिया था। यद्यपि असहयोगकी सफलताके सम्बन्धमें आपको आशंका थी।

डा० अॅनीबेसेन्ट

जबसे मैं भारतकी राजनीतिमें हाथ बटाने लगी तबसे ही तिलकसे मेरा परिचय हुआ। मैं सन् १९१५ में पूना गअी और आपसे मिली। आप कॉंग्रेसके दोनों दलोंमें मेल करानेके लिअे व्याकुल थे और आपने मुझसे मध्यस्थता करानेके लिअे अनुरोध किया। मैंने दोनों दलोंके बीच समझौता करानेका प्रयत्न किया और भविष्यमें वह सफल भी हुआ। तिलकने सबसे पहले स्वराज्य-संघकी स्थापना की। अिसके पश्चात् मैंने अखिल भारतीय स्वराज्य-संघ स्थापित किया। मेरे सहयोगकी अिच्छा प्रदर्शित करते ही तिलकने बिना हिचकिचाहट हार्दिक सहयोग देनेका अभिवचन दिया और अुसे निभाया। जब सन् १९१७ में अँग्रेज सरकारने मुझे नजरबन्द किया तब तिलकने सरकारकी भर्त्सनाकी आवाज बुलन्द की। सन् १९१९ में हम दोनोंके बीच मान्टेग्यू चेम्सफोर्ड सुधारके सम्बन्धमें प्रामाणिक मतभेद हुआ और वह अन्त तक रहा। परन्तु मैं यह कह सकती हूँ कि आपके विरोधमें भी अेक प्रकारकी अुदारता, स्पष्टता तथा रमणीकता रहती थी। किसी भी व्यक्तिपर आपकी विद्वत्ता, दर्शन-शास्त्रज्ञता, कर्मठता तथा स्वार्थ-त्यागका असर पड़े बिना न रहता था।

Ramsay Macdonald :—

(Late Premier of England, Labour Leader, London)

I twice met Mr. Tilak, and I was deeply impressed

at the little I saw of him, by his fine strong personality, and I was fully convinced that he was a man of powerful intelligence and sincere convictions. He loved freedom above everything. He was prepared to sacrifice everything for his country's freedom. He will no doubt be remembered in Histroy as the great statesman of modern India.

A. Fenner Brockway: (M. P.,British Labour Leader)

I shall always regard it as a great privilege to have known Bal Gangadhar Tilak. One of the brightest memories of the year from 1918 to 1920 was my association with him as a comrade in his work on behalf of India in this country. He was one of the sons of India whose memory will live for ever and in the days when India wins her freedom, the people will recall the sacrifices and labour of this great patriot. He was a fearless advocate of the right of the Indian people to govern themselves and he always thought of the masses of Indian people and not merely of the wealthier class. By his work the political and economic freedom of India has been undoubtedly brought a great deal near and we should all dedicate ourselves to the cause which he served so nobly.

डा. अेम. अे. अन्सारी

मेरा लोकमान्य तिलकसे पहला परिचय लखनअू-कांग्रेसकी विषय-निर्धारिणी समितिमें हुआ जब कि अुन्होंने खुले दिलसे कहा कि "मैं अंग्रेजी हुकूमतमें रहनेकी अपेक्षा भारतीय मुसलमानोंकी हुकूमतमें रहना अधिक पसन्द करता हूँ।" अुनकी निखरी देशभक्तिकी मुझपर अमिट छाप पड़ी।

अुनकी ही वजहसे लखनअू समझौता सम्पन्न हुआ। वे धर्मनिरपेक्ष राष्ट्रीयताके कट्टर समर्थक थे। "हिन्दूराज" कायम करनेकी कल्पना अुनको छू तक नहीं सकती थी। संकीर्णता अथवा साम्प्रदायिकतासे बिलकुल परे थे। कलकत्ताकी कांग्रेसमें (१९१७) अलीबन्धुकी रिहाअीके लिअे प्रस्ताव पेश किया गया था, जिसका तेजस्वी समर्थन लोकमान्य तिलकने ही किया। अुस समय अलीबन्धुकी वृद्धा माता बी. अम्मा कांग्रेसमें अुपस्थित थीं। अुनकी बेचैनीसे लोकमान्य तिलक भी व्याकुल हुअे और अुन्होंने गद्गद् कण्ठसे कहा था कि "मैं वीरप्रसवा बी. अम्माके प्रति हार्दिक धन्यवाद प्रकट करता हूँ कि अुनके दो सुयोग्य पुत्र देशकी आजादीके लिअे जेलमें बन्द किअे गअे हैं। परमेश्वरसे मैं प्रार्थना करता हूँ कि अैसी सैकड़ों माताअें भारतवर्षमें हों।" तिलकजीके अुद्गार सुनते ही बी. अम्माके मुखपर सन्तोषकी झलक दिखाअी पड़ी। सचमुच लोकमान्य तिलकका हृदय हिमालय जैसा अूँचा था। अमृतसरकी काँग्रेसमें मैंने अुनकी अलौकिक बुद्धिकी विजय देखी। बनारसमें अखिल भारतीय काँग्रेस-कमेटी हुअी, अुसमें अुन्होंने खिलाफतके प्रस्तावका समर्थन किया था। मुसलमानोंके न्याय-सिद्ध हकोंके वे सदा रक्षक थे। सचमुच वे अैसे युग-पुरुष थे जो कअी शताब्दिओंके बाद अिस भूमिपर अवतार धारण कर देश तथा समाजमें नअी चेतना पैदा करते हैं।

भारत-कोकिला सरोजिनी नायडू

मैंने लोकमान्य तिलककी लोकप्रियताकी पहली झलक सन् १९०८ में देखी जब कि आपको काले पानीकी कड़ी सजा दी गअी थी। मैंने स्वयम् देखा था कि सरकारी अूँचे अफसरोंको कअी दिनोंतक बम्बअी तथा पूनामें प्रबल अुपद्रव होनेकी आशंका सताती रही। अुन दिनों बम्बअीके गवर्नरने डरकर अपने निजी कार्यक्रम, जो कि बहुत पहले तय हुअे थे, रद्द करवाअे। लोकमान्य तिलककी सादगीका मुझपर अमिट असर हुआ। मैंने अपनी आँखोंसे देखा कि महाराष्ट्र, बम्बअी, लखनअू, दिल्ली, मद्रास तथा कलकत्तामें लोगोंने

आपका देवदूत जैसा स्वागत किया। मुझे आपके साथ लंदनमें रहनेका भी मौका प्राप्त हुआ था। वहाँ आपने तत्काल स्वराज्य प्रदान करनेकी माँग भारतकी ओरसे निर्भीकता तथा बुद्धिमत्तापूर्वक प्रस्तुत की थी। आपका युगप्रवर्तक मन्त्र 'स्वराज्य मेरा जन्मसिद्ध अधिकार है और अुसे मैं प्राप्त करूँगा ही' मेरे कानोंमें सदा गूँजता है और देश-सेवाके लिअे प्रोत्साहित करता है।

आंध्र-केसरी टी. प्रकाशम्

मैं लोकमान्य तिलकको सूरत काँग्रेस (१९०७) से जानने लगा। वहाँ अुनके अलौकिक धैर्य तथा बौद्धिक गुणोंका मुझपर अमिट असर हुआ। वे स्वराज्य-मन्त्रके स्रष्टा तथा कर्मठ प्रचारक थे। अमृतसर-काँग्रेसकी विषय-निर्वाचिनी समितिमें अुनमें और गाँधीजीमें चटकीला वार्तालाप हुआ जो मैंने बड़ी सतर्कतासे सुना। महात्मा गाँधीजी कहने लगे कि हमारी राजनीतिका आधार केवल सत्य ही होना चाहिअे। लोकमान्य तिलकने तत्काल अुत्तर दिया कि केवल सत्य ही राजनीतिका आधार नहीं हो सकता। समयानुकूल बर्ताव करना ही राजनीति है। अुनकी दृष्टिमें राजनीतिका लचीला होना आवश्यक था। जो भी हो वे अपने वचनके पक्के थे और देशको आजाद करानेके लिअे आत्मोत्सर्ग करनेके लिअे तत्पर थे। देशभक्त लोकमान्य अमर हैं।

वि. विट्ठलभाओ पटेल (भारतकी धारा-सभाके भूतपूर्व अध्यक्ष)

लोकमान्य तिलक अेक अैसे महापुरुष थे जो भारतकी राजनीतिको सुखजीवी लोगोंके संकीर्ण क्षेत्रसे आम जनताके बीच ले गअे। आप भारतीय राष्ट्रीयताके जनक थे। आप स्वतंत्रताको ही सबसे अधिक महत्व देते थे। आपका विश्वास था कि स्वतंत्रता सब तरहकी अुन्नतिका मूल है। सन् १९०८ से मैंने आपके विषयमें जो सुना अुससे मेरे मनमें आपके प्रति आदर अुत्पन्न हुआ। आपके प्रति मेरा आदर दिन-प्रतिदिन बढ़ता ही गया। अन्ततोगत्वा

आपसे मेरा व्यक्तिगत सम्बन्ध सन् १९१८ में आया जब कि मैं कांग्रेसका प्रधान मंत्री बना। संयोगसे आप भी कांग्रेसके निर्वाचित अध्यक्ष बने। दिल्ली-कांग्रेसमें यह तय हुआ कि आपके नेतृत्वमें अेक प्रतिनिधि-मंडल लन्दन भेजा जाअे। मैं स्वयम् अुसका अेक सदस्य था। लन्दनमें मुझे लगातार छह मास आपके साथ रहनेका सुअवसर प्राप्त हुआ। मैं निःसंकोच भावसे कहता हूँ कि तब आपके प्रति मेरे आदरके भावका रूपान्तर गाढ़ी श्रद्धामें हुआ। मुझे आप समीपसे अधिक महान प्रतीत हुअे। आपका सब कुछ ही अलौकिक था। आपने भारत-मंत्रीके सम्मुख कांग्रेसकी ओरसे अतीव निर्भीकता तथा बुद्धिमानीसे स्वशासनकी माँग प्रस्तुत की। मैंने स्वयम् देखा कि आपके वार्तासे अूंचे अँग्रेज कूटनीतिज्ञ सन्न हो जाते थे। आपने विदेशी राज्योंमें भारत सम्बन्धी प्रचार करनेका सूत्रपात किया। मृत्युके दो वर्ष पूर्व अिस कार्यके लिये आपने बहुत कुछ किया। लन्दनमें ब्रिटिश कांग्रेस-कमेटीकी पुनर्व्यवस्था आपने ही की। आपने ही लालाजीको अमेरिकामें सहायता भेजी। आप जापान, फ्रांस, अमेरिका अित्यादि देशोंमें कांग्रेसकी ओरसे प्रचार-केन्द्र स्थापित करना चाहते थे। अिस कार्यके लिअे आपने चन्दा अिकट्ठा करनेका श्रीगणेश भी किया। आपकी कर्मठता तथा तत्परता वर्णनसे परे थी। नौकरशाहीपर आपकी अमिट अेवं भयपूर्ण छाप थी। बड़े-बड़े अँग्रेज अफसर आपके सम्मुख अुपस्थित होना भयवश टालते थे। मुझे स्मरण है कि जब आप लन्दनमें ज्वाअिंट पार्लमेन्टरी कमेटीके सम्मुख अुपस्थित होनेके लिअे हालमें अेक ओरके द्वारसे प्रविष्ट हुअे तो दूसरी ओरके द्वारसे लार्ड सिडेनहम चुपचाप खिसक गअे। वास्तवमें वे जॉअिन्ट पार्लमेन्टरी कमेटीके सदस्य थे। जब वे भारतमें थे तबसे ही आपसे डरते थे। सचमुच लोकमान्य तिलक नौकरशाहीके कट्टर शत्रु थे। आपकी अमर कीर्ति भविष्यकी पीढ़ियोंके लिअे स्फूर्तिका स्रोत होगी।

विद्यार्थी तिलककी हाअीस्कूल तथा कालेजमें रचित संस्कृत कविताअें

सदागुणज्ञः सुपरीक्षणाय यं ।
कवीन्द्रकाव्यामृतकांचनस्य वै ॥
करोति लोके निकषं न दुर्जनं ।
खलाय तस्मायहिताय मे नमः ॥ १ ॥

कृशानुतापः कुरुते यथामलं ।
मलं गृहीत्वा वपतोऽस्य जीवनं ॥
तथा करोत्येव च यः सतोहितः ।
खलाय तस्मै प्रथमं नमोस्तुते ॥ २ ॥

यथा पयस्यैव घृतं हि वर्तते ।
तथापि लोके सहतेऽतितप्ततां ॥
प्रयाति शुद्धिं च तदा ततोमृतं ।
खलस्य तोषे कथिता कथाशुचिः ॥ ३ ॥

मातृ-विलाप

प्रसमीक्ष्य सुतं गुणालयं । विधिना संहृतजीवितं पुरा ।
जननी निपपात दुःखिता । धरणौ मोहवशं गता भृशं ॥ १ ॥
अथ-सा जननी विमूर्छिता । प्रकृतिं प्राप्तवती यथा यथा ।
सुतजीवितनाशहेतुभिर्विष मोहैरभवत्तथाकुला ॥ २ ॥
बत हास्मि हता विधे त्वया । तनयस्यासुहृता न मे पुनः ।
रविणा सरसि प्रशोषिते । ननुजीवेच्छफरी तदामया ॥ ३ ॥

पितरौ प्रथमं ततः सुतौ । हननस्य क्रम अेष भो विधे ।
तनयः प्रथमं कथं त्वया । मम नीतः प्रतिकूलचारिणा ॥ ४ ॥
बहुकालमहो न संस्थितिं । सुत चाप्त्वा न क्लासु वर्धनं ।
सकलैः सुजनैर्मुदेक्षितः । प्रतिपच्चन्द्र अिवासि निर्गतः ॥ ५ ॥
अुपचारशतैर्विवर्धितः । प्रथमं सूचितभाविवैभवः ।
सहसैव दवाग्निना हृतः । सुत बीजांकुरवग्दन्नो भवान् ॥ ६ ॥
न भवान् भवनाद्वहिर्गतो । नुमतिं प्राप्य कदापि नो मम ।
अधुना परिहाय मांक थं सुत! नापृच्छय दिवं प्रयास्यसि ॥ ७ ॥
पदवी त्रिदशालयस्य सा । विषमा भूतगुणादिसंकुला ।
सुगताद्य कथं सुत त्वया । गमनेऽल्पाध्वन अेव सीदता ॥ ८ ॥
न कृतं करणीयमस्ति यत् । अनुभूतानि सुखानि न त्वया ।
विततं विमलं यशो न ते । परलोकं कथमद्य गम्यते ॥ ९ ॥
वचनं न ममावधारितं । शिशुतायामपि जातक त्वया ।
विफलीकुरुषेऽद्य मे कथं । गिरमुत्थाय सुभाषयेति माम् ॥१०॥
नयने मम बाष्पपूरिते । सुत कृत्वाप्यपहृत्य जीवितं ।
तव देहविलोकरोधनं । कुरुतेऽतृप्त अिवैतदंतकः ॥११॥
तवदूयत अेव कोमलं । मृदु शय्या विनिवेशितं वपुः ।
प्रसहेत तदेव हा कथं । अधुना तात चिताधिरोहणे ॥१२॥
हृतपंकजकांतिलोचने । वदनं चैव शर्वेन्दुदर्शनम् ।
मधुरं वचनं वपुस्तव । सुभगं मन्मथगर्वहारि च ॥१३॥

परिशिष्ट

लोकमान्य तिलक लिखित पुस्तकें

१. Arctic Home in the Vedas.

२. मद्रास, सीलोन व ब्रह्मदेश येथील प्रवास

३. The Orion or researches into the antiquity of the Vedas.

४. रहस्य-संजीवन; श्रीमद्भगवद्गीता रहस्य या ग्रंथाचा शेवटील भाग

५. रहस्य विवेचन; अर्थात् गीतेचें कर्मयोगपर निरूपण

६. श्रीमद्भगवद्गीता रहस्य—अथवा कर्मयोग शास्त्र

७. Vedic Chronology and Vedang Jyotisha

अिस पुस्तकके सन्दर्भ-ग्रन्थोंकी सूची

१. The History of Indian National Congress Vol. I
By Dr. P. Sitarammaiya.

२. लोकमान्य टिळकांचें चरित्र, खंड १, २, ३
लेखक, साहित्य-सम्राट् न. चिं. केळकर.

३. लोकमान्य टिळकांचें पुण्यस्मरण ,, ,,

४. लो. टिळकांच्या आठवणी व आख्यायिका, खंड १, २, ३
संपादक श्री स. वि. बापट.

५. लो. टिळकांचे केसरींतील लेख सर्व भाग

६. आधुनिक भारत—ले. आचार्य शंकरराव जावडेकर

७. टिळक भारत—ले. शि. ल. करन्दीकर

८. कर्मयोग-शास्त्र, वेदकाल निर्णय आणि आर्यांचें मूळ
वसति स्थान—लेखक लो. बा. टिळक

९. राष्ट्र-जनक लोकमान्य. ले. ना. द. शिखरे

१०. लोकमान्य तिलकका दर्शन—अनु. श्री सरवटे

११. लो. तिलकका चरित्र भाग १ ला
अनुवादक : श्री सि. मा. लोंढे

दिनांक Date	उधारकर्ता की संख्या Borrower's No.	दिनांक Date	उधारकर्ता की संख्या Borrower's No.